जो सूरज पच्छिम उगे

आचार्य श्री रामलालजी म.सा.

राम चमक रहे भानु समाना

प्रकाशक

साधुमार्गी पब्लिकेशन

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

जो सूरज पच्छिम उगे

आचार्य श्री रामलालजी म.सा.

प्रथम संस्करण : दिसम्बर, 2020 प्रतियाँ 2,300

मूल्य : 100/–

ISBN 978-93-86952-95-0

प्रकाशक :
साधुमार्गी पब्लिकेशन
अन्तर्गत– श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, आचार्य श्री नानेश मार्ग
श्री जैन पी.जी. कॉलेज के सामने, नोखा रोड
गंगाशहर, बीकानेर 334401 (राज.)
दूरभाष : 0151-2270261, 3292177, 0151-2270359
visit us : www.sadhumargi.com

मुद्रक :
सांखला प्रिंटर्स
विनायक शिखर, शिवबाड़ी रोड
बीकानेर 334003 (राज.)

रोशन करिए अपने आपको

सदियों से सूरज पूरब से निकलता आ रहा है। क्या किसी ने कभी सोचा है कि सूरज पश्चिम में उग सकता है? किसी के मन में आया है कि ऐसा होने पर क्या होगा? नहीं सोचा न! मन में नहीं आया न! यदि हम कहें कि सूरज पश्चिम में उग सकता है, तो क्या आपको विश्वास होगा? और यदि हम यह कहें कि ऐसा हुआ तो आपको कैसा लगेगा?

आप इसलिए ऐसा नहीं सोच पाते कि सूरज के नाम पर आपका ध्यान बहुत दूर चला जाता है। उस गोले की तरफ चला जाता है जिसकी गति पर दिन और रात निर्भर है... उस पिंड की तरफ चला जाता है जो हमें ऊर्जा प्रदान करता है... वहां चला जाता है जहां से संसार को द्रव्य प्रकाश प्राप्त होता है... वहां चला जाता है जहां सिर्फ ध्यान ही जा सकता है... खुद नहीं जाया जा सकता... अभी तक कोई जा नहीं सका है...

जरूरत है वहां से अपनी दृष्टि हटाने की... जरूरत है जमीन पर नजर डालने की... महापुरुषों की तरफ देखने की... जमीन पर दृष्टि टिकायेंगे तो पंचम आरे में भी एक विशिष्ट पुरुष का दर्शन होगा। यह विशिष्ट पुरुष भी सूरज हैं... धरती के सूरज... आपके निकट के सूरज... वह सूरज जिसका केवल आभास नहीं होना है... वह सूरज जिन्हें आप बहुत नजदीक से देख सकते हैं... यह सूरज भी लोगों को उर्जित करता है... सबको प्रकाशित करता है... ठीक उसी तरह जिस तरह ऊपर वाला सूरज करता है। बिना भेद किये... बिना पक्षपात किये... सबको एक समान समझते हुए...

धरती के सूरज हैं आचार्य प्रवर श्री रामलाल जी म.सा.। आचार्य श्री भी लोगों को प्रकाश से भर देते हैं... आचार्य श्री का प्रकाश अन्तर् में उजियारा फैलाता है... आचार्य श्री आत्मिक ऊर्जा प्रदान करते हैं... धरती का यह सूर्य भी गतिमान रहता है... अनवरत... यह सूरज जिधर गति करता है वहीं सूर्योदय... वहीं दिन जैसी चहल-पहल... और जहां से चल दे वहां भी रात जैसी नीरवता नहीं छाती... वहां भी अपना निशान छोड़ जाता है...

धरती पर स्वीडन, नार्वे, कनाडा, आइसलैंड जैसी जगहें हैं जहां महीनों दिन होता है तो महीनों रात। कभी सूरज डूबता नहीं तो कभी उगता ही नहीं। धरती के सूरज साल में लगातार चार महीने एक ही जगह रहते हैं। यानी चार महीने सूर्योदय। सन् 2019 में चार महीने वाला सूर्योदय जोधपुर में हुआ था। जोधपुर पश्चिम में है। यह सूरज का पश्चिम में उगना ही था। पश्चिमी हिस्से में स्थित जोधपुर में उदित होकर आचार्य श्री ने लगातार चार महीने तक लोगों को ऊर्जित किया... प्रकाशित किया... सूर्य रात को दिन में परिवर्तित करता है तो आचार्य श्री लोगों के दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदल देते हैं... सत्य-असत्य का बोध कराते हैं...

जोधपुर में लगातार चार महीने तक व्याख्यान के रूप में निकलने वाली किरणें लोगों को आत्मिक प्रकाश से प्रकाशित करती रहीं। उन्हीं किरणों को समेट कर हम पुस्तक के रूप में आपके लिए लाये हैं। पश्चिम से निकली ये किरणें **जो सूरज पच्छिम उगे** के नाम से प्रस्तुत हैं। यह जोधपुर चातुर्मास (2019) के प्रवचनों की छठी पुस्तक है। आप भी इन किरणों से अपने को रोशन करिए। ये किरणें पूरे चार मास की नहीं हैं। जिस दिन की हैं उसकी तिथि दी गयी है।

पुस्तक के प्रकाशन में गलतियों से बचने का तो पूरा प्रयास किया ही गया है, भाव भी वही रखने का प्रयास है, जो आचार्य श्री ने व्याख्यान फरमाते हुए व्यक्त किये थे। सारी सतर्कता के बावजूद आचार्य श्री के भावों को जस-का-तस व्यक्त करने में हमसे कोई चूक हो गयी हो तो यह हमारी कमी है। अपनी इस कमी के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं। क्षमा के साथ हम यह भी चाहेंगे कि पाठक हमारी गलतियों को हमसे बतायें, जिससे भविष्य में हम उन गलतियों से बच सकें। हम उनके आभारी होंगे जो किसी भी प्रकार की त्रुटि से हमें अवगत करायेंगे।

संयोजक

साधुमार्गी पब्लिकेशन

अन्तर्गत श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

संघ के प्रति अहो भाव

हे पितृ तुल्य संघ! हे आश्रयदाता संघ!

संसार के प्रत्येक जीव की रक्षा के लिए सतत प्रयत्नरत संघ! तुम्हारी शीतल छांव तले हम अपने परिवार के साथ तप-त्याग से युक्त आध्यात्मिक, सुखद जीवन जी रहे हैं। तुम्हारे ही आश्रय में रहकर हमने अपने नन्हे चरणों को आध्यात्मिकता की दिशा में बढ़ाया है। तुमने ही हमें आत्मा के अन्वेषण हेतु प्रेरित किया। तुम्हारी ही प्रेरणा से प्रेरित होकर हमने अपने जीवन को सन्मार्ग की ओर बढ़ाया है। इस हेतु हम संघ का अभिवादन करते हैं।

संघ ने हम अकिंचन को इस पुस्तक '**जो सूरज पच्छिम उगे**' के माध्यम से सेवा का अनुपम अवसर प्रदान किया। इस हेतु हम अपने आपको सौभाग्यशाली समझते हैं। अन्तर्भावना से संघ का आभार व्यक्त करते हुए यह विश्वास करते हैं कि भविष्य में भी परम उपकारी श्री संघ शासन हमें सेवा का अवसर प्रदान करता रहेगा।

अर्थ सहयोगी

कुशलराज गौतम चंद कोठारी
ब्यावर–चेन्नई

॥ सेवा है यज्ञकुण्ड, समिधा सम हम जलें॥

* दो अर्थ सहयोगियों का सम्मिलित सहयोग होने से इस संस्करण की भिन्न-भिन्न प्रतियों में अलग-अलग अर्थ सहयोगी का नाम संभव है।

अनुक्रमणिका

1.	विकास का राज-पथ	7
2.	कैसे बने मन महावीर सा	20
3.	स्वयं से स्वयं का समीक्षण	35
4.	उपदेश के तीन तत्त्व	45
5.	दिशा-निर्देशक यंत्र	61
6.	चाबी, जो ताला खोल सके	68
7.	एक साथ—अपने हाथ	78
8.	घोटत-घोटत विद्या	94
9.	अखूट खजाना भरा पड़ा	112
10.	जीवन मंत्र : जिम्मेदार बनें	125
11.	परमधर्म का रूप	129
12.	निज रूप ही सच्ची शोभा	143
13.	ज्ञान स्वरूप को करें उजागर	157

1

विकास का राज-पथ

शांति जिन एक मुज विनति...

जीवन में ह्रास और विकास, दो अवस्थाएं हम देखते हैं। ह्रास का कारण क्या है और विकास का कारण क्या है? ह्रास हम किसको समझते हैं और विकास हमारी दृष्टि में क्या है? पहले हमको अपनी दृष्टि स्पष्ट करनी पड़ेगी कि हम विकास किसको मान रहे हैं और ह्रास किसको मान रहे हैं? अलग-अलग व्यक्तियों का अलग-अलग दृष्टिकोण होता है। कोई किसी को विकास मान रहा है तो कोई किसी को विकास मान रहा है। कोई यह मानता है कि धन प्राप्त होना, विपुल संपत्ति प्राप्त होना विकास है। कोई मानता है कि व्यापार बढ़ा लेना विकास है। कुछ व्यक्ति अध्ययन-अध्यापन को लेकर समझते हैं कि हमने बहुत विकास कर लिया। ये एक रूप से विकास हो सकते हैं किंतु जीवन का सच्चा विकास क्या है? और उसके पीछे हेतु क्या है? किस हेतु से जीवन का विकास होता है, विकास यात्रा किस प्रकार से चलती है और कैसे व्यक्ति विकास को प्राप्त करता है, यह बात हमें समझनी चाहिए।

यदि हम अध्यात्म की भाषा में बात करें, आगम की भाषा में बात करें तो ह्रास और विकास मोहकर्म के आधार पर माना गया है। जो जितना आसक्ति में, मोह में डूबा हुआ है, उसका उतना ही ह्रास हुआ है और जो जितना उससे दूर हुआ है, उसका उतना ही विकास हुआ है। बनने को तो ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती भी बन गया किंतु हम उसको विकास कैसे कहें? पूर्णिमा की रात बड़ी सुंदर हो सकती है किंतु उसके आगे तो अंधेरा ही है, इसलिए पूर्णिमा की रात को महत्त्व नहीं दिया गया। महत्त्व दिया गया है दूज के चांद को। दूज के चांद को लोग देखना चाहते हैं। दूज का चांद देखना चाहते हैं या पूर्णिमा के चांद को? दूज का चांद धीरे-धीर विकास की ओर आगे बढ़ता

है और पूर्णिमा का चांद धीरे-धीरे ह्रास की ओर जाता है। मोह का असर, आसक्ति का असर जितना हमारे भीतर रहेगा, हमारे ऊपर रहेगा, हम उस विकास यात्रा को प्राप्त नहीं कर पाएंगे। उस विकास अवस्था को प्राप्त नहीं कर पाएंगे।

चक्रवर्ती की संपदा भौतिक दृष्टि से सर्वोपरि है। उससे बढ़कर और कोई सत्ता नहीं है। कोई संपत्ति नहीं है। कोई वैभव नहीं है। वह सबसे ऊंचा है। किंतु उसको प्राप्त कर लेना भी आध्यात्मिक दृष्टि से विकास नहीं है। आध्यात्मिक दृष्टि कहेगी कि जिसके पास में भले ही कुछ नहीं है, किंतु उसके पास यदि शांति है, समाधि है तो उसका जीवन विकसित है, उसका जीवन विकसित हुआ है। बहुत सारा धन हो, बहुत परिवार हो, वैभव हो, खाने-पीने के साधनों की कोई कमी नहीं हो किंतु शांति नहीं हो तो विकास किसको मानेंगे?

आप लोग बोल रहे हो कि जिसके पास शांति है, समाधि है, उसको विकास मानेंगे।

पक्की बात है ना? मेरे सामने तो आप लोग यही कहोगे कि पक्की बात है किंतु हकीकत में हमारी चाह क्या होती है, हमारी राह क्या होती है, यह तो हम जिस राह पर बढ़ेंगे तो मालूम पड़ेगा कि हम किस राह पर बढ़ रहे हैं?

उत्तराध्ययन सूत्र के 19वें अध्ययन में एक प्रसंग उपस्थित हुआ है मृगापुत्र का। नाम तो बलश्री था, माता का नाम मृगा था। माता के नाम से ही मृगापुत्र के रूप में ख्यापित हो गया। उसकी उसी रूप में पहचान होने लगी। युवराज बना दिए गए थे। मनुष्य के पांच इंद्रिय संबंधी भोग भोग रहे थे। किसी प्रकार की कोई असुविधा नहीं थी। कोई कठिनाई नहीं थी। किंतु एक बार एक मुनि को आते हुए देखा। उनकी क्रिया को देखा। ईर्या-समिति-यतना से चलना देखा। चेहरे पर अपूर्व तेज देखा। चेहरे पर इतनी सरलता कि देखते ही व्यक्ति बरबस आकर्षित हो जाए। मुनियों के प्रति आपका आकर्षण क्यों होता है? मुनियों के प्रति आकर्षण का कारण क्या है?

छोटा बच्चा चाहे किसी भी कौम का हो, उसको देखते ही व्यक्ति का मन आकर्षित हो जाता है, उसकी ओर हो जाता है। इसका मूल कारण बच्चे के हृदय की सरलता है। प्रायः बच्चे सरल ही हुआ करते हैं। छल,

कपट, प्रपंच तो बाद की बातें होती हैं। सरलता ही मुनि की पहचान होती है। सरलता जब मुनि के चेहरे पर व्याप्त होती है, उसके जीवन व्यवहार में देखी जाती है तो आदमी बरबस ही उसकी ओर आकर्षित हो जाता है। कुछ लोग विद्वता पर आधारित होते हैं। वे विद्वता से प्रभावित होते हैं। जो लोग प्रवचन को सुनने वाले होते हैं, वे प्रवचन से प्रभावित होते हैं किंतु सच्चा प्रभाव उसके जीवन का होता है और उसके जीवन का मूल सरलता है। बिना सरलता के साधुता टिक नहीं पाएगी।

'माई मिच्छादिट्ठी अमाई सम्मदिट्ठी...' मायावी व्यक्ति अपने सम्यक्त्व, अपने दर्शन को भी सुरक्षित रखने में समर्थ नहीं हो पाता है। वह मिथ्यात्व की दिशा में अवक्रांत होता है, मिथ्यात्व की दिशा में गतिशील होता है। वह मिथ्यात्व की ओर चला जाता है। उसकी समझ बहुत ज्यादा हो सकती है, वह तिकड़म लड़ाने में बहुत होशियार है किंतु वह सुखी नहीं रहेगा। उसके जीवन में शांति नहीं होगी। वह तनावग्रस्त रहेगा। हर समय चौकन्ना रहेगा कि मेरा रचा गया कोई भी राज, मेरी कोई भी गलती खुल नहीं जाए। यह मायावी का रूप है। मुनि इससे भिन्न होते हैं। निष्कपट होते हैं। वे बड़ी शांति से जीवन जीते हैं। उनके जीवन में दांव-पेंच नहीं होता। यदि दांव-पेंच खेल रहा है तो वह सच्चा साधु नहीं हो सकता। साधु की सच्चाई सरलता है। वह कितना दांव-पेंच खेल सकता है, कितना किस विषय को घुमा सकता है, यह साधुता की पहचान नहीं होती है। पहचान होगी कि उसमें सहजता कितनी है, उसमें सरलता कितनी है। सरलता ही साधु की सच्चाई है। वही उसकी पहचान है।

वह मुनि चल रहे थे रोड पर, सड़क पर। यतना से चल रहे थे। अपनी मस्ती से चल रहे थे। मस्ती से चलने वाले की चाल और अन्य व्यक्ति की चाल और गति में अंतर आएगा। वे मुनि बड़े शांत भाव से चल रहे थे। युवराज बलश्री, मृगा-पुत्र जैसे ही उस मुनि को देखते हैं; एक टक देखते रह गए। क्या रूप, क्या लावण्य, क्या दीदार। देखते-देखते उनको ऐसा स्मरण होने लगा कि मैंने ऐसा रूप पहले भी कभी देखा है। मैंने ऐसा रूप पहले कहीं देखा है।

जैसे हमको कोई चीज दिखती है और आकर्षित करती है। यदि पहले कभी देखी हो तो ध्यान उस ओर केन्द्रित होता है कि यह ऐसी चीज पहले कब, कहां होगी। ऐसे ही किसी व्यक्ति को देखने पर यदि लगता है कि इस

व्यक्ति को पहले कहीं देखा है तो बुद्धि पर थोड़ा जोर लगाने, मति पर जोर लगाने पर वह चीज स्मरण में आ जाती है कहां देखा है।

वैसे ही उनको स्मरण हुआ और उन्होंने यह जान लिया कि मैं स्वयं पहले मुनि जीवन जी चुका हूं। मैंने मुनित्व का जीवन जीया है। यह माना गया है कि कई व्यक्तियों को, सह सम्पियाए अर्थात् अपनी मति से बोध की प्राप्ति हो जाती है। जाति स्मरण ज्ञान के माध्यम से जैसे ही अपने पूर्व के वृत्तांत को जानता है, उसके भीतर वैराग्य भाव जग जाता है। वैसा ही वैराग्य भाव मृगा-पुत्र में भी जागृत हो गया। राजा का राजकुमार था, युवराज था। सात्त्विक जीवन था। ऐसा नहीं था कि क्रूर जीवन रहा हो। पहले यदि किसी ने सम्यक् प्रकार से साधु जीवन की पालना की है तो पिछले जन्म के संस्कार भी उस पर छाया की तरह बने रहते हैं। जल्दी से वह क्रूर नहीं बनेगा। जल्दी से गलत कार्यों में नहीं जाएगा। कभी कोई भयंकर कर्म का उदय आ गया हो किसी जन्म का तो बात अलग है अन्यथा उसका जीवन शांत रहेगा, समाधि का रहेगा। छल, कपट का जीवन नहीं रहेगा।

मृगा-पुत्र उस मायने में बहुत ही विकास किया था फिर भी मोह, ममत्व जमा हुआ था। सत्ता में बना हुआ था। जैसे ही भीतर वैराग्य भाव जगा, मोह की छाया छटने लगी। दीक्षा लेने की भावना हुई। विचार बना और माता के सामने अपने विचारों को प्रस्तुत किया। बहुत लंबा प्रकरण है। बहुत लंबी चर्चा है माता और पुत्र की। आपने बहुत बार उन चर्चाओं को व्याख्यानों में सुना है। जिनके घर में कोई दीक्षार्थी तैयार हुए हैं, दीक्षा की चर्चा चल चुकी है, वे भी जानते हैं कि उनके बीच, पिता और पुत्र, माता और पुत्र, पिता और पुत्री में क्या संवाद चला होगा?

आज का संवाद कुछ अलग तरीके का होता है। पहले के संवाद में ज्ञान का पुट होता था। चर्चा ज्ञान की होती थी। मारपीट की, बंधन की, प्रताड़ना और तर्जना की बातें नहीं हुआ करती थीं। आज कई परिवारों में वैसी स्थितियां भी बन जाती हैं। आपने सुना ही होगा कि रामपुरा में एक मुमुक्षु बहन को सांकलों से बांध दिया गया था कि कहीं साधु-साध्वियों के पास चली नहीं जाए। आचार्य पूज्य परम श्रद्धेय श्री हुक्मीचंद जी म.सा. रामपुरा पधारे और संयोग से भिक्षा के लिए पधारते हुए उस घर में भी पधारना हो गया। जैसे ही सुंदर बाई की तरफ उनकी दृष्टि गई उनके बंधन टूट गए। आप इसको आश्चर्य मानें या जो भी मानें। आचार्य पूज्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा.

ने ऐसा कोई चमत्कार प्रकट करने का सोचा नहीं था। उन्होंने ऐसा कोई भी विचार किया नहीं था। सहज रूप में सारी क्रिया थी। सहज रूप से उनकी दृष्टि गई और सांकलें टूट गईं। यह वर्तमान परिजनों के व्यवहार की एक झलक है। पहले के समय में अधिकांशतया देखा गया है कि ज्ञान की बात, समझाने की बात हुआ करती थी। संयमी जीवन में कितनी कठिनाइयां आती हैं? क्या-क्या परीषह आते हैं, वे दिखाया करते थे। बताया जाता था कि इतना आसान नहीं है साधु जीवन। जो यह कह रहे हैं कि साधु जीवन इतना आसान नहीं है, वे गलत नहीं कर रहे हैं क्योंकि वस्तुतः सब कुछ छोड़ना आसान है, पर अपने मन को बदल पाना सबसे कठिन है।

'कंचन तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह,
मान बड़ाई ईर्ष्या, तुलसी दुर्लभ एह।'

क्या है दुर्लभ? चक्रवर्ती सम्राट छः खंड के राज्य का त्याग कर दे तो कोई बड़ी बात नहीं है। कोई बड़ी बात नहीं है कि अरबों का मालिक, अरबों की संपत्ति को त्याग कर साधु बन जाए। यह बहुत सामान्य बात है। वह बन सकता है किंतु अपने भीतर के विचारों को, अपने भीतर की रही हुई पकड़ को छोड़ पाना, बदल पाना बड़ा दुरूह कार्य होता है।

लंका, रावण की लंका विनाश के कगार पर क्यों गई? रावण की लंका को विनाश के कगार पर जाने का कारण क्या रहा? एक छोटी सी घटना ने सारे व्यूह को बदल दिया। छोटी सी घटना सारे व्यूह को बदल देती है। सीता का हरण करके लाया था रावण। भाइयों ने, महारानियों ने, पुत्रों ने, अन्य लोगों ने, सब ने समझाने का प्रयत्न किया। ये आ ही रहा है दशहरा। कल है या परसों है? सभा में बैठे लोग जवाब देते हैं कि परसों है।

रावण वध करेंगे। हर साल वध करते हैं और हर साल वह वापस आकर खड़ा हो जाता है। सीता का हरण करके लाया वह एक गलती थी और यूं देखें तो बड़ी भारी गलती थी। दूसरी तरफ देखें तो कोई भी बात सामान्य हो सकती है। गलती को गलती समझ ले तो वह सामान्य होती है और गलती को गलती नहीं माने तो वह भयंकर हो जाती है। ध्यान में आई बात? गलती को गलती मान ले, सुधार ले तो वह गलती सामान्य हो जाती है। गलती चाहे छोटी हो किंतु उस गलती को माने नहीं, उसको सुधारे नहीं, जिद्द पकड़ ले तो वह गलती भयंकर हो जाती है।

रावण की गलती इसलिए भयंकर बन गई कि वह किसी भी हालत में मानने को तैयार नहीं। वह मानने को तैयार नहीं कि मैंने गलती की है। इसीलिए कहावत चालू हो गई, 'विनाशकाले विपरीतबुद्धिः' जब विनाश का समय नजदीक आता है तो आदमी की बुद्धि बदल जाती है। उसकी बुद्धि विपरीत हो जाती है। रावण के जीवन का इतिहास यदि कोई पढ़ेगा तो ज्ञात होगा कि वह बहुत बड़ा विद्वान् था। विद्धता में कमी नहीं थी। नैतिकता में कमी नहीं थी। एक प्रतिज्ञा उसकी यह थी कि कोई भी स्त्री जब तक सहमत नहीं हो जाएगी तब तक उसका भोग-उपयोग नहीं करेगा। सीता जी को ले गया किंतु सीता जी तैयार नहीं हुई। रावण ने तपस्या की। तपस्या का मतलब इंतजार किया किंतु सीता जी के साथ बलात्कार नहीं किया। यह भी एक बहुत बड़ी प्रतिज्ञा है, सामान्य प्रतिज्ञा नहीं है।

जिस सीता को चाह रहा है, उसी को लेकर आया है। वह महीनों तक सामने है फिर भी बलात्कार नहीं करना और जिस प्रकार के घटनाक्रम हम सुनते आ रहे हैं, सुन रहे हैं, वे रावण से भी बदतर हैं। रावण की लोग निंदा करते हैं और उससे भी निंदनीय कृत्य को स्वीकार कर रहे हैं। उनकी भी पैरवी होती है। उनके भी वकील होते हैं। उनका भी बचाव होता है। वकील कहेगा कि यह तो मेरा पेशा है। पेशा एक चीज है और नैतिकता को ख्यापित करना, बनाए रखना, वह दूसरी चीज है। एडवोकेट को, वकील को, अधिवक्ता को केवल अपना पेशा ही नहीं देखना चाहिए। नैतिक धरातल की स्थापना कैसे बनी रहे? अनीति प्रचार-प्रसार नहीं पाए, इस दिशा में भी उसका कार्य होना चाहिए।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद भी एक वकील थे। एक बड़े धनाढ्य सेठ एक केस लेकर आए कि मेरा यह केस लेना है। एक गरीब विधवा औरत के खिलाफ केस था। राजेन्द्र बाबू को ज्ञात था। उन्होंने कहा कि आप यह केस लाए हैं, इसमें सत्यता कितनी है? कहा कि 'मैंने सारे कागज, डॉक्युमेंट बना लिए हैं। न्यायालयों में आदमी नहीं चलता है, कागज चलते हैं।' जिंदा आदमी भी मरा हुआ साबित होता है और मरा हुआ आदमी भी जिंदा साबित हो जाता है। यदि आपमें कूवत है, आपके पास कागज हैं तो कागजों से आप उसको जिंदा कर लोगे। कहा कि, वकील साहब, राजेन्द्र बाबू, आप सोच लीजिए। मैं आपको बड़ी रकम दूंगा। राजेन्द्र बाबू ने कहा कि मुझे रकम नहीं चाहिए। सेठ ने कहा कि आप नहीं तो कोई दूसरा वकील होगा। क्यों नहीं आप ही ये

केस हाथ में ले लेते हो? मुझे तो केस करना है और वह तो होना ही है। मुझे तो जीतना ही है और यह निश्चित है। चाहे जितनी फीस-पैसे लगे मैं देने के लिए तैयार हूं। जैसा मैंने पढ़ा है, राजेन्द्र बाबू बोले– (उनके भाव हैं) कि सेठ साहब! मैं आपसे यह गुजारिश करना चाहूंगा कि आप इस केस को मत लगाओ। यदि आपने इस केस को लगाया तो मैं जानता हूं कि उस विधवा बहन के पास इतनी संपत्ति नहीं है कि वह आपके बराबर जंग लड़ सके, लड़ाई कर सके किंतु मैं आपको यह बता दूं कि मैं बिना पैसों के उनकी तरफ से ये केस लड़ूंगा।

आप विचार कीजिए कि वकील तो वे भी थे। वकील होने का मतलब यह नहीं कि उसके भीतर की इंसानियत गायब हो जाय। नीति को अनीति बना दे और अनीति को नीति बना दे। रात को दिन दिखा दे और दिन को रात बना दे। यदि बुद्धि इस काम के लिए कार्यरत है तो हमें समझना चाहिए कि हमें ऐसी बुद्धि का प्रयोग करना चाहिए या नहीं करना चाहिए? आप के मत में क्या करना चाहिए? यहां आप नाम कमा सकोगे कि ऐसे केस को जिता दिया। यहां पर आप नाम कमा लोगे। पैसा कमा लोगे। किंतु यह भी विचार कीजिए कि कुदरत में देर हो सकती है, अंधेर नहीं होती। दूध का दूध और पानी का पानी हो जाता है। वहां न्याय होता है।

भगवान महावीर तीर्थंकर हैं किंतु पहले के किए हुए कर्म भोगने पड़े या नहीं भोगने पड़े। कानों में कीले ठोंके गए या नहीं ठोंके गए? गजसुकुमाल के सिर पर अंगारे धरे गए। समझ लो, मोक्ष जाने वाले के लिए भी छूट नहीं है। इस जन्म में मोक्ष जाना है। चरम शरीरी है। तीर्थंकर हैं किंतु रियायत किसी के साथ नहीं है। क्या हमें रियायत मिल जाएगी? यहां हमने सत्य को एकदम झुठला दिया और झूठ को एकदम सत्य बना दिया। हम गर्व करेंगे हमारी बुद्धि पर। दुनिया चकराएगी कि 'अरे वाह! क्या बुद्धिमानी है, क्या कर दिया!' किंतु बंधुवर! सोचना। कुदरत सारा खेल देख रही है। उसके कम्प्यूटर से बच नहीं पाओगे। सी.सी.टी.वी. कैमरा लगा हुआ है।

क्या लगा हुआ है? कैमरा। कौन-सा कैमरा? वहीं सी.सी.टी.वी कैमरा लगा हुआ है। वह आपकी हर हरकत को कैच कर रहा है। कौन कितना गहराई में है, कौन छल कर रहा है, कौन कपट कर रहा है, कौन सत्यवादी है? हो सकता है कि हम नहीं समझ पाएं किंतु वहां सब कुछ लिखा जा रहा है। वहां

कोई बचाने वाला नहीं है। किसी का बचाव नहीं होगा। वहां एकदम खरा-खरा निर्णय होता है। किसी का भी दांव-पेंच वहां नहीं चल पाता है। कोई कितना भी बुद्धिमान होगा, वहां जाकर सबको सरेंडर हो जाना पड़ता है।

मैं बात क्या बता रहा था? याद है या भूल गए? अरे! कहां से चले थे, बात याद ही नहीं रही। वापस देखो। वापस सिंहावलोकन करो। सिंहावलोकन मतलब ज्ञात हो जाएगा।

रावण की जिद्द थी अपनी गलती नहीं मानना। उस कारण से लंका का विनाश हुआ, लंका का ह्रास हुआ। यदि वह अपनी गलती मानकर सुधार कर लेता तो बात कुछ और बनती। किंतु सुधारे कैसे? 'विनाशकाले विपरीतबुद्धिः'। जब विनाश ही होना हो तो आदमी के समझ में बात आती ही नहीं है। समझाने वाले कितना भी समझाएं।

समझ समझ संसार में, समझे वे नर थोड़ा।
समझाया समझे नहीं, ...।।
वे प्रजापत का घोड़ा। (सभा से)

समझ सारे संसार में भरी हुई है किंतु जिसको नहीं समझना होता है, वह अपनी अक्ल को ही ढाई अक्ल मानता है। वह मानता है कि सारी दुनिया आधी अक्ल में जी रही है। सारी दुनिया के पास आधी अक्ल है और ढाई अक्ल है तो मेरे पास। मैं ढाई अक्ल में जी रहा हूं। बाकी सारी दुनिया में आधी अक्ल है? ऐसे आदमी को कौन समझा पाएगा? ऐसा आदमी किससे समझ पाएगा? यदि समझने का हमारे भीतर विचार होता है तो हम सत्य को प्राप्त करेंगे। हम समझने के लिए तैयार ही नहीं हैं, दरवाजा बंद है तो चाहे कितने भी सत्य आकर दरवाजा बजा ले, हमारे दरवाजे नहीं खुल पाएंगे। हमारी कुंडी जो दरवाजे पर पड़ी हुई है, वह नहीं खुल पाएगी।

मृगा पुत्र की बात मैं बता रहा था। मुनि को देखकर उसके भीतर वैराग्य आया। बात चल रही थी कि माता और पुत्र का लंबा संवाद चला। माता ने कहा, बेटा कैसे कष्ट सहन करोगे? कैसे कठिनाइयों को सहन करोगे? लोहे के चने चबाना और कंटकाकीर्ण मार्ग पर चलना तुम्हारे लिए असहनीय है, कठिन है। अभी तक तुमने कभी कालीन से नीचे पैर नहीं धरा है। अभी तक मखमली गद्दों पर तुम्हारी जिंदगी चली है। कैसे तुम इन सारे कष्टों को सहन करोगे? मृगा पुत्र भी अपना तर्क देता है। माता से कहता है कि माता

बताओ, कोई दूसरा राजा आकर युद्ध करता है, चढ़ाई करता है इस राज्य पर तो क्या तुम मुझे घर में बिठाए रखोगी? माता ने कहा– नहीं, मैं तुम्हें तिलक करके रवाना करूंगी। पुत्र कहता है– मां, कर्म शत्रु मेरे समक्ष खड़े हैं। उन पर जय पाने के लिए मुझे प्रस्थान करना ही चाहिए। तुम यदि कष्टों की बात कर रही हो तो मैं कहना चाहूंगा कि मां मैंने पिछले अनेक जन्मों में अनन्त बार नरक की वेदना वेदी है। मैं नरक में काटा गया हूं, छिला गया हूं, भेदा गया हूं। मेरे टुकड़े-टुकड़े किए गए। मुझे बार-बार काटा गया। उन सारी वेदनाओं को यदि हम उस अध्ययन में पढ़ें तो रोंगटे खड़े हो जाएंगे। मृगा-पुत्र कहता है कि माता! जब उन सारी वेदनाओं को वेदा है तो साधु जीवन की कठिनाई क्या है? जब मेरी आत्मा इतनी-इतनी वेदना को सहन करने के लिए तैयार रही है, सही है तो साधु जीवन की कठिनाइयां कोई ज्यादा नहीं हैं।

बात ह्रास और विकास की चली थी कि राजा बन गया। चक्रवर्ती बन गया। विकास हो गया। वह बड़ा विकास नहीं है। विकास यह है कि हमने मन को सरल बना लिया। हमने अपने भीतर की गुत्थियों को सुलझा लिया। हमने अपने भीतर की पकड़ को शिथिल कर दिया। ममत्व जितना होता है, पकड़ उतनी गहरी होती हुई चली जाती है। समझने की तैयारी नहीं होती है। मोह का भाव भिन्न-भिन्न रूपों में व्यक्ति पर प्रभाव डालता है।

आज ये बच्चे आप लोगों के बीच में बैठे हैं। इधर भी बैठे हुए हैं और उधर भी बैठे हुए हैं। मुझे बताया गया है कि 'वात्सल्यपुरम्' के बच्चे हैं। वहां पर ये आश्रम में अध्ययनरत हैं। अनाथ मैं अपने मुंह से नहीं बोलना चाहूंगा। ये बच्चे वहां पर अध्ययनरत हैं। वहां पांच बहनें हैं। वे भी जैन कुल में जन्मी हुई हैं। जैसा मुझे ज्ञात हुआ कि इन पांचों बहनों ने शादी-विवाह छोड़कर इस कार्य में अपने को लगाया। इसमें अपना समय और शक्ति लगाने का प्रयत्न किया है। जैसा इसके लिए अनाथ शब्द का प्रयोग हुआ है उसका मतलब है कि माताओं ने जन्म दिया और कहीं छोड़ दिया। ममता का त्याग कर दिया। ये कोई जीवन का विकास नहीं है। ये कर्तव्य से अपनी भावनाओं को हटाना है। जन्म देना और किसी की जिंदगी को अधर में छोड़ देना मोह का त्याग नहीं है। यह कर्तव्यहीनता की भावना है। यह दायित्व से मुकरना है। अपने कर्तव्य का पालन नहीं करना है। यदि उनको मोह का विसर्जन करना था तो आस्रव का सेवन नहीं करते। अब्रह्म का सेवन नहीं करते। तब समझा जाता कि वे वीरांगना रही हैं। ये कायराना

हरकतें हैं। ये वीरता की बात नहीं है। वीर विरोचित रूप से चलते हैं। वे छुपकर वार नहीं करते। मृगा-पुत्र के लिए बताया गया है कि 'ममत्तं छिंदई ताहे, महानागो व्व कंचुयं', यानी ममत्व का छेदन करते हैं और पीछे मुड़कर नहीं देखते हैं। जैसे महानाग कंचुकी को छोड़ देता है।

आचार्य पूज्य गुरुदेव गुजरात विराज रहे थे। सरखेज गांव की बात है, जहां तक मुझे स्मृति में है, कुछ महासतियां जी वहां पर थीं। उनको विहार करके बीकानेर की तरफ पधारना था। वे सतियां जी अनुनय विनय करने लगीं कि गुरुदेव आपकी बहन महाराज धापू कंवर जी जी म.सा., जिनको संत-सती बुआ जी म.सा. पुकारा करते थे, वे वहां विराज रही हैं। भगवन् आप उनके लिए दो शब्द लिखकर दे दें। हम जा रहे हैं तो साथ ले जाएंगे और उनको देंगे तो वे बड़ी खुश होंगी। आचार्य पूज्य गुरुदेव ने कहा कि महासती जी मैं किसी को लिखकर देता नहीं हूं। किसी के लिए कुछ स्वास्थ्य आदि प्रसंगों से लिखवाना पड़ता है तो वह अलग बात है किंतु मैं अपने हाथ से लिखकर किसी भी साध्वी को नहीं देता हूं तो उनके लिए अलग से कैसे लिखूं? मेरे लिए धापू जी म.सा. वैसे ही हैं जैसे आप सब हो।

इन शब्दों पर आप गौर करें। बहन म.सा. का ममत्व भाव क्या मायने रखता है? उन्होंने एक चिंतन में लिखा भी है, 'मोह का आवृत्त जो तोड़ सकता है वही विकास कर सकता है। मोह के आवृत्त में पड़ा हुआ व्यक्ति अपना विकास नहीं कर सकता, बल्कि ह्रास ही करता है।' हूबहू तो मैं नहीं कह सकता हूं किंतु भाव उनके इस तरह से रहे हैं। हकीकत में मुनि बन जाने के बाद कौन-सा रिश्ता और कौन-सा नाता है? रिश्ते-नाते सारे छोड़ दिए। रिश्ते-नाते मोह से होते हैं। जब मोह ही छोड़ दिया तो ये रिश्ते-नाते छूट जाने चाहिए। ममत्व का छेदन करने पर ही आदमी का विकास होगा। आदमी ऊंचाइयों की ओर बढ़ेगा।

आश्रम में अध्ययनरत इन बालकों को सत्यनिष्ठा का बोध दिया जाना चाहिए, भले ही अधिक ज्ञान हासिल कर पाएं या नहीं कर पाएं। इनके संरक्षकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए कि ये ईमानदारी पर चलें। ये संस्कार इन बच्चों को दिया जाना चाहिए। छल-कपट-फरेब इनके निकट नहीं आवे। सदा अपने जीवन में सरलता बनाए रखें। प्रामाणिकता को बनाए रखें। अनैतिकता का कार्य नहीं करें। ये संस्कार यदि इनको मिलते हैं और इन संस्कारों पर यदि ये बच्चे आगे बढ़ते हैं तो ये अपने जीवन का विकास

कर पाएंगे। इनके जीवन का सच्चा विकास होगा। वैसे हम कितना ही पढ़ लें और बाद में पैसा कमाने की मशीन बन जाएं, नैतिकता को तिलांजलि दे दें, प्रामाणिकता हाथ से चली जाए और सत्य को अंगूठा दिखाना शुरू कर दें तो वह पढ़ाई किस काम की?

'विद्या ददाति विनयम्'। विद्या से विनय आना चाहिए, सदाचार आना चाहिए और वह सदाचार हमें योग्य पात्र बनावे। यदि वह योग्य पात्र बनाने की विद्या नहीं है, अयोग्य बनाती है, सत्य की दिशा में ले जाने के बजाय सत्य से विमुख बनाने वाली होती है, सत्य से दूर ले जाने वाली होती है तो मैं चाहूंगा कि वैसी विद्या से 100 कोस दूर रहना चाहिए। आप लोगों की बात आप लोग जानें। आपकी क्या मर्जी है? बोलते तो आप भी यही हैं कि हम भी सच्चा विकास चाहते हैं, शांति चाहते हैं। सत्य में जीने वाला सदा शांति में जीता है। उसको कभी भी अशांति होती ही नहीं है। कठिनाई आ सकती है, अशांति नहीं आएगी। कठिनाई और अशांति दोनों भिन्न हैं। कठिनाई का संबंध घटना से और अशांति का संबंध हमारे मन से है। मन अशांत बनना सत्य के क्षेत्र में नहीं होता है। सत्यवादी, सत्य में जीने वाले का मन कभी अशांत नहीं होगा, चाहे कैसी भी घटना क्यों न घट जाए। एक क्षण के लिए यदि विचार भी आएगा तो तत्काल वह उन विचारों का परिष्करण कर लेगा। मुझे क्यों विचार करना? मेरा जितना कर्तव्य है, उसका पालन करना। इस प्रकार से जीने वाले सत्यता की राह पर चलते हैं।

हरिश्चंद्र राजा चाहे कैसे भी बिके, कितने में भी बिके, श्मशान में पहरा दिया, फिर भी तनाव में नहीं हैं। अशांति में नहीं हैं। राम वन में गए, जीवन में, मन में अशांत नहीं थे। शांत। एकदम शांत। ये बहुत महत्त्वपूर्ण चीज है। जब बच्चों को आश्रय दिया जा रहा है, इनके जीवन को बढ़ाने का प्रयत्न किया जा रहा है तो इनका जीवन ऐसे बढ़े कि वे विकास के शिखर पर चढ़ सकें। उसको प्राप्त कर सकें। यह विकास बिना संस्कारों के नहीं हो सकता है।

वह विकास पैसों की मशीन बनाने से भी नहीं हो सकता। वह जब भी होगा सत्य के बल पर होगा, ईमान के बल पर होगा, नैतिकता और प्रामाणिकता के बल पर होगा। वही लक्ष्य हमें रखना चाहिए। जम्बू कुमार ने मोह को जीता। वह उनका सच्चा विकास था। चरण छूए, आंखों में आंसू बहाए किंतु वहां तो किसी प्रकार से कोई असर नहीं हुआ। मेरु पर्वत के सामने जैसे घोर तूफान का जोर नहीं चलता, वैसे ही स्वामी के सामने

हमारे सारे उपक्रमों का कोई जोर नहीं चला। आठों धर्मपत्नियों ने कई प्रकार के रस बरसाए, विभिन्न प्रकार से अपनी-अपनी बातें कहीं। कभी घोर गरजना के रूप में बातें कहीं, कभी बिजली चमकती है, उस प्रकार से कहीं। उन्होंने शब्दों की घनघोर वर्षा भी की किंतु जम्बू मगशेलिया पत्थर बनकर बैठे हुए हैं।

मगशेलिया पत्थर का एक जाति होता है। छोटा सा होता है किंतु पुष्कलावर्त मेघ सात-आठ दिन तक लगातार, निरंतर बरसे तो भी उस पत्थर में एक भी बूंद समा नहीं पाती। उस पर पानी का, वर्षा का कोई असर नहीं होता। जैसे मगशेलिया पत्थर पर कितना भी पानी बरसे उसमें वह समाता नहीं है, वैसे ही उन्होंने कितना भी प्रयत्न किया जम्बू पर कोई असर नहीं हुआ। वे निष्प्रभावी बने रहे। वस्तुतः ममत्व के छेदन के लिए आत्मा को तो स्ट्रॉन्ग बनाना पड़ता है, तभी ममत्व का छेदन हो सकता है। थोड़ा सा मन डोला नहीं कि 'मेरा मन डोला, जय बम भोला'। नशा करने वाला क्या करता है? वह क्या बोलता है?

'जरा सी और पिलाय दे भंग, देख के तेरा रंग,
मेरा मन डोला, जय बम भोला।'

क्या कहता है भंग का नशेड़ी–

मैंने भाव देख लिया, तुम्हारा रंग देख लिया। उसे क्या आ जाती है कि मेरा मन भी डोल गया इसलिए थोड़ा तो आने दो। एक बार मन डोला नहीं कि मोह फिर अपने आप में ऐसा आवृत्त लेता है, उसको ऐसे घुमाता है कि वह याद रखता है कि छठी का दूध भी क्या होता है?

बन्धुओ! हम विचार करें, चिंतन करें कि जीवन का ह्रास और विकास कैसे होता है? किससे होता है? इसका गहराई से अनुभव करें। हमारा पैसा बढ़ गया, परिवार बढ़ गया, व्यापार बढ़ गया, बहुत कुछ बढ़ गया, बहुत कुछ प्राप्त कर लिया किंतु शांति मिली या नहीं मिली? समाधि मिली या नहीं मिली? यदि शांति, समाधि नहीं मिली तो जीवन का यह विकास सच्चा विकास नहीं है। जो विकास शांति और समाधि दे सके, वही सच्चा विकास है। हम उस दिशा में अपने आपको आगे बढ़ाएंगे तो धन्य बनेंगे।

गुलाब मुनि जी म.सा. के संथारे का आज 26वां दिन है। मासखमण के निकट पहुंचते जा रहे हैं। अपने शांत भावों से, समाधि भावों से कभी थोड़ा

विराज जाते हैं। बाकी ज्यादातर सोने का ही रहता है। वह तो स्वाभाविक है। शरीर तो आखिर शरीर है। क्या करे जब कुछ नहीं जाए अंदर तो। पानी भी लिया तो थोड़ा सा ही लिया। उतने पानी से क्या पुष्टि मिलेगी? शरीर में कमजोरी आना स्वाभाविक है।

हम भी उनसे प्रेरणा लें। अपने ममत्व का त्याग करें। चिंतन करें। त्याग, प्रत्याख्यान करते हुए अपने जीवन को धन्य बनाएं। ऐसा उपक्रम करेंगे तो संथारा-संलेखना के निमित्त से त्याग-पच्चक्खाण ले अनुमोदन के भावों से हम भी अपने कर्मों की निर्जरा करने वाले बनेंगे। अपने आपको धन्य बनाएंगे। इतना ही कहते हुए विराम।

06 अक्टूबर, 2019

2

कैसे बने मन महावीर सा

शांति जिन एक मुज विनति...

मन की शिकायत अमूमन होती है। सभी मन से परेशान हैं, ऐसा मैं कह सकता हूं थोड़ी देर के लिए। यदि मन को थोड़ी देर के लिए हटा दें तो कैसा लगेगा? मोबाइल में घंटी बजती रहती है। मोबाइल में से सिम यदि निकाल दी, फिर घंटी बजेगी क्या? मुझे मालूम नहीं है, इसलिए पूछ रहा हूं। आप बोल रहे हो कि फिर नहीं बजेगी। नहीं बजेगी ना? मोबाइल में घंटी नहीं बजेगी। एक छोटी सी सिम का सारा बखेड़ा है। वैसे ही हमारे जीवन में मन सबसे बड़ी समस्या है। सबसे बड़ा बखेड़ा है। उसकी गतिविधि को हम समझ ही नहीं पा रहे हैं। एक क्षण में क्या विचार करता है और एकदम से उसका कैसे पैंतरा बदल जाता है? अभी बहुत अच्छा चल रहा है किंतु एकदम अच्छा चलते-चलते पलटी खा जाता है।

किंतु सबकी दशा ऐसी नहीं होती है। ऐसी दशा कमजोर मन का हेतु है। जिनका मन कमजोर होता है, उनके मन में दुविधाएं चलती रहती हैं, द्वंद्व चलता रहता है। पेंडुलम की तरह मन डोलायमान बना रहता है। जैसे हमारा मन डोलायमान रहता है, क्या राम, कृष्ण, महावीर का मन भी ऐसे ही था? यदि ऐसे ही डोलायमान होता तो त्वरित निर्णय कभी भी नहीं हो सकते थे। आज भी कई लोग ऐसे होंगे जो मन के राजा हैं। जो स्ट्रॉन्ग मन को लेकर चलते हैं। जिनका मन बड़ा सुदृढ़ है। जिनका मन जल्दी से फिसलता नहीं है। जिनका मन सुदृढ़ बना रहता है। किंतु जो मन इधर से उधर द्वंद्व और दुविधा में फंसा रहता है, वह समस्या पैदा करता रहता है। उसके पीछे कारण है। यदि हमारी चर्या सही हो जाए तो मन सही हो जाएगा। हमारी चर्या मन को दुविधा में डाल देती है। हम स्वयं थोड़ी-थोड़ी देर में अपने पैंतरे बदलते जाते हैं। हमारी स्वयं के लक्ष्य के प्रति कोई जवाबदेही नहीं है। यदि लक्ष्य के प्रति

हमारा समर्पण हो जाए, लक्ष्य के प्रति हम एकनिष्ठ हो जाएं तो मन क्या करेगा? मन तो उसमें लगा ही रहेगा, किंतु हमारे भीतर की स्थिति जब एक रूप नहीं बन पाती है तो यह समस्या खड़ी होती है।

आचार्य पूज्य गुरुदेव गणेशलालजी म.सा. उदयपुर स्थिरवास के रूप में विराज रहे थे। आचार्य पूज्य श्री नानालाल जी म.सा. भी उनके साथ विराज रहे थे। माघ कृष्ण पक्ष की दूज को गणेशाचार्य का स्वर्गवास हो गया। स्वर्गवास होने के बाद जिस स्थान पर विराजना हो रहा था, पौषधशाला में वहां कल्प नहीं रह जाता। आचार्य पूज्य गुरुदेव नानालालजी म.सा. को वहां से विहार करना ही था। विहार के लिए अलग-अलग क्षेत्रों की मांग थी किंतु वहां के अध्यक्ष कुंदनमल जी साहब कहने लगे कि गुरुदेव पहले आप आचार्य श्री के साथ बंगले पर विराजे थे। उनके बंगले पर गणेशाचार्य जी का काफी समय तक विराजना हुआ था। उन्होंने कहा कि एक बार विहार करने के बाद आप उदयपुर वापस कब पधारेंगे कुछ भी नहीं कहा जा सकता। मेरी छोटी सी विनती है कि एक बार आपके चरण उस बंगले पर पड़ जाएं। आचार्य श्री ने एक प्रकार से अनुमति फरमा दी। लोगों को मालूम पड़ा। केवल श्रावकों को ही नहीं, हमारे संतों को भी मालूम पड़ा तो वे फरमाने लगे कि उस तरफ तो दिशा शूल है। दो-ढाई बजे का चौघड़िया भी ठीक नहीं है।

आचार्य श्री ने पूछा, कौन-सा चौघड़िया ठीक रहेगा? कहा चार बजे के बाद का चौघड़िया ठीक रहेगा। आचार्य श्री ने कहा, भाई चार बजे रवाना होंगे तो कब प्रतिलेखन होगा और कब साधु जीवन की दूसरी क्रियाएं हो पाएंगी? चौघड़िया महत्त्वपूर्ण है या हमारे संयमी जीवन की क्रियाएं महत्त्वपूर्ण हैं? अब आचार्य श्री ने यह फरमा दिया तो इसके सामने संत क्या बोल सकते थे? संतों ने हाथ जोड़कर स्वीकार किया कि आवश्यक तो संयमी चर्याएं हैं, साधु जीवन की क्रियाएं महत्त्वपूर्ण हैं। श्रावकों को मालूम पड़ा तो श्रावकों ने निवेदन किया और कहा कि गुरुदेव, वह दिशा सही नहीं है।

श्रावकों ने कहा, आचार्य देव! आचार्य पद के बाद का आपका प्रथम विहार हो रहा है। ऐसी स्थिति में आप भले ही दो दिन के बाद उधर पधार जाना किंतु पहला विहार आपका सही दिशा में होना चाहिए। वैसे भी जिस दिशा में विहार की बात है, उधर से लाश को ले जाना होता है। कोई मांगलिक कार्य नहीं होता है। उनकी बात नहीं चली तो एक ज्योतिषी को भी लेकर आ गए। वह ज्योतिषी कहने लगा कि म.सा. उस दिशा में आपका विहार ठीक

नहीं रहेगा। आचार्य श्री ने कहा, आपकी भावना बहुत अच्छी है। मेरे प्रति सद्भावना है। एक साधु के प्रति सद्भावना होना अच्छी बात है किंतु मैंने जो जबान दे दी है, साधु भाषा में स्वीकृति दे दी, उसको कैसे बदला जा सकता है? उसको नहीं बदला जा सकता है।

सारे लोग अपना प्रयत्न कर चुके किंतु आचार्य देव अपने वचन पर सुदृढ़ रहे। आचार्य देव का मानना था कि मनोबल यदि मजबूत है तो सारे ग्रह-नक्षत्र हमारे साथ हो सकते हैं और यदि हमारा मन कमजोर है तो सारे ग्रह-नक्षत्र हमारे पर हावी हो सकते हैं। बुराई ग्रह-नक्षत्रों की नहीं, हमारे कमजोर मन की है। हमने अपने मन को कमजोर बनाया तो सारे ग्रह-नक्षत्र मन पर हावी हुए। यदि हमारा मन मजबूत होता, उत्साहित होता, उल्लास में कोई कमी नहीं होती तो ज्योतिष या ग्रह गोचर हमारा क्या बिगाड़ सकते हैं? ऐसा भी माना गया है ज्योतिष में कि जिस समय व्यक्ति का उल्लास, रुझान, भावना, विचार बहुत ऊंचा है, उस समय वह यदि किसी कार्य के लिए जुटता है तो उससे बढ़कर कोई दूसरा शुभ मुहूर्त नहीं होगा। ऊंची भावना आती कहां से है? एकदम ऊंचाई पर भावना रहे, चरम पर तो वह लक्ष्य और वह दृश्य कुछ और ही होता है।

'सदा न कोयल बोलती, सदा न खिलते फूल'

ऐसे प्रसंग तो कभी-कभी बनते हैं कि व्यक्ति के भीतर उत्साह और उल्लास जागृत हो। कुछ ही लोग ऐसे होते हैं जो सदा हर कार्य के लिए उमंग से जीते हैं और हर कार्य को उल्लास से पूर्ण करते हैं। जो व्यक्ति उमंग, उल्लास से काम संपन्न करता है, वह प्रायः करके सफल होता है। वह विफल नहीं होता है। हमारे स्वयं के भीतर दुविधा बनी रहती है कि 'क्या पता, क्या पता'। एक विचार करते हैं और दूसरे विचार में डाउट होता है। एक विचार करते हैं कि ऐसा कर लूं, दूसरे में होता है, 'क्या पता, कुछ हो गया तो? कुछ दुविधा हो गई तो? कुछ खोट हो गई, कुछ गड़बड़ी हो गई तो?' जैसे ही विचारों में गिरावट आई कि जो काम 100 टका होने वाला था, वह अब 50 पैसे में आ जाता है। इसलिए भावना को और मन को हर समय मजबूत रखना चाहिए।

हमारे सामने ऐसे बहुत सारे उदाहरण हैं। सीता जी को रावण हरण करके ले गया। कौन सहायक था? उस लंका में कौन था सहायक सीता जी का? कोई परिचित नहीं था। सारे लोग अपरिचित थे और सारे लोग रावण के थे।

ऐसे में भी मन विचलित नहीं होना। रोना-कूकना नहीं। चिल्लाना नहीं। हाथ नहीं जोड़ना। वह दृढ़ता देखते ही बनती है। रावण जब-जब आता और सीता जी से बोलता, अपनी बात को दोहराता तो सीता जी उसे किस रूप में जवाब देतीं। गुरुदेव गुजराती भाषा में एक गीत को गाकर फरमाते थे।

उलट मुखट करि बोले, रे लम्पट पट क्यों खोले,
धिक् तुझ, धिक् तुझ जननारी रे,
सपने में वांछू नाय।

रे लम्पट! चुप रह। क्यों अपने पट खोल रहा है? धिक्कार है तुझे। केवल तुझे ही धिक्कार नहीं है, 'धिक् तुझ जन नारी रे' धिक्कार है उस नारी को, जिसने तुमको जन्म दिया। तुमको जन्म देने वाली उस माता को धिक्कार है कि तुम्हारे जैसी संतान को उसने जन्म दिया है। तू कितना भी प्रयत्न कर ले, मैं स्वप्न में भी तुम्हारी वांच्छा नहीं करूंगी।

सीता जी कहां बोल रही हैं? (जोर देते हुए) कहां बोल रही हैं? पास में राम खड़े हैं क्या? आप लोग बोल रहे हो कि नहीं खड़े हैं? नहीं! नहीं! तुमको लगता है कि नहीं खड़े हैं, लेकिन सीता जी को पूरा विश्वास है कि राम उनके साथ खड़े हैं। हमको विश्वास नहीं है कि सीता जी के साथ राम खड़े हैं किंतु सीता जी को पूरा विश्वास है कि उनके साथ राम खड़े हैं। हमें विश्वास होगा भी कहां से? हमारे साथ तो रावण रहता है। इसलिए हमें विश्वास होगा कहां से। सीता जी को पूरा भरोसा था कि उनके साथ राम खड़े हैं। राम उनसे अलग नहीं हैं। सीता जी के साथ में राम खड़े हैं। आपने कह दिया कि राम नहीं रावण खड़ा है किंतु उनको क्या विश्वास है? सीता जी को विश्वास है कि उनके साथ राम खड़े हैं।

सेठ सुदर्शन शूली पर चढ़ाए जाने लगे तो क्या धर्म उनके साथ नहीं था? उसका राम, उसका ईमान, उसका सदाचार, उसकी निष्ठा, क्या उसके साथ नहीं थी? वही तो सोचने की बात है। ऐसा विश्वास जब हो जाता है तो फिर क्या डर लगेगा? किसका डर लगेगा? और डरने से भी क्या होगा? ज्यादा से ज्यादा करने वाला क्या करेगा? मार देगा, हनन कर देगा या गला काट देगा। गला काट देने से मैं कट जाऊंगा क्या? मेरा सत्य अजर है, मेरा सत्य अमर है। वह कभी भी हिलने वाला नहीं है। यह विश्वास जिसको होगा, उसका मन डांवाडोल होगा क्या? मन डांवाडोल किसका होता है?

इस सभा में जिस जगह पर आप लोग बैठे हुए हो, इस जगह पर चलने से ये टाइल्स हिलती हैं क्या? ये टाइल्स नहीं हिलती हैं ना? और इधर पास में ही मिट्टी है इस पर पानी आ जाए और उसके बाद उस पर चले तो? कीचड़ हो गया। कैसा लगेगा? उसमें खिच-पिच हो जाएगा। उसमें पांव रखने के साथ कीचड़ उछलने लगेगा? पांव में कीचड़ चिपकेगा। वहां की जमीन ऊंची-नीची हो जाएगी। पांव रखेंगे तो जमीन में पांव धंस जाएगा। जमीन वहां पर धंसने लग जाती है। ऐसी स्थिति इसलिए बनती है क्योंकि वह जगह पोची हो गई।

वैसे ही अनैतिकता से, अप्रमाणिकता से हमारा मन कमजोर हो गया होता है। उससे हमारे मन में जो दृढ़ता आनी चाहिए, वह नहीं आ पाती है। यदि हमारा नैतिक स्तर मजबूत है, हमारी प्रामाणिक भूमि स्थिर है, मजबूत है, सशक्त है, सत्य और ईमान सदा मेरे साथ है, तो हमारा मन डोलायमान नहीं होगा। कितने भी संकट आ जाएं, वह मेरु पर्वत की तरह अडिग खड़ा रहेगा। कितनी भी कठिनाई आ जाए, वह चलित नहीं होगा। हिलेगा नहीं। हिलने वाला मन कुछ और होता है और दृढ़ मन कुछ और होता है। जिनका मन दृढ़ होता है, वे जो सोचते हैं उसे करते हैं और जो सोचते हैं वैसी सफलता उन्हें मिलती है। बहुत कम ऐसा चांस रहता है कि वह सोचे और सफलता नहीं मिले। उनका पूरा मन एक ही दिशा में गतिशील होता है। हम सोचते कुछ हैं, करते कुछ हैं और चलते कहीं और हैं। यह जो हमारे भीतर अपवाद है, इसे अपने आप खड़ा भी करते हैं। इस कारण से हम सफल होने में समर्थ नहीं हो पाते हैं और वे लोग सफल हो जाते हैं।

आप देखो, विचार करो, खंदक जी की खाल उतारी गई। एक बार भी मुंह से 'उफ!' शब्द नहीं निकला। कुछ भी नहीं निकला। यह केवल कहने की बात नहीं है। हकीकत है आज हम कह रहे है। कहना बहुत आसान है किंतु एक मच्छर भी चमड़ी पर बैठ जाए तो मन हिल जाता है या नहीं हिल जाता है? हिल जाता है या नहीं हिल जाता है? (थोड़ा जोर देते हुए) और वहां चमड़ी उधेड़ी जा रही है, फिर भी मन विचलित नहीं हो रहा है। मैंने कहा था ना कि मोबाइल में लगा सिम ही गड़बड़ है। वह हटा दो तो मोबाइल शांत। पर ध्यान देना, सिम रहते हुए शांत रहना अलग चीज है और सिम निकलने के बाद शांत हो जाना अलग बात है। आदमी को बेहोश कर देने से वह शांत पड़ा है तो कौन-सी बड़ी बात है? अब तो उसमें गतिशीलता ही नहीं है।

मन, वचन, काया की गतिशीलता रहते हुए व्यक्ति अडिग बना रहे, अचल बना रहे तो बड़ी व महत्वपूर्ण बात है।

बाहुबली जी कितने समय तक खड़े थे? 12 मिनट या 12 महीने? कितने समय तक खड़े थे? मालूम नहीं है क्या?

कुछ लोग जवाब देते हैं– 12 महीने।

12 महीने, पांव दुखे नहीं थे क्या? दुखे क्या? पांव दुखे क्या उनके? उनके पांवों में दर्द हुआ क्या? अरे! बारह महीने तक बाहुबली जी खड़े रहे। कहानी में आप पढ़ोगे और सुना होगा कि बिना हिले-डुले, पांव में प्रकंपन भी नहीं, हिलना भी नहीं। क्या गजब की ताकत थी? ऐसा काम केवल शरीर की ताकत से नहीं होता है। मन यदि ताकतवर नहीं हो, मन यदि मजबूत नहीं हो तो शरीर खड़ा नहीं रह सकता है। शरीर में बीमारी आ जाए किंतु मन यदि मजबूत हो तो शरीर को खींच लेता है। इंजन मजबूत हो तो गाड़ी के डिब्बे को वह खींच लेगा। यदि इंजन ही कमजोर हो गया तो क्या होगा? फिर मुश्किल है कि वह डिब्बों को खींच ले। 'सूं-सूं' करके रह जाएगा।

वही बात मनोबल की है कि हमारा मनोबल कितना मजबूत होता है? हमारा मनोबल कितना दृढ़ रहता है? समस्या का यदि कोई समाधान चाहते हो तो प्रयोग करके देख लो। पहले तो सारी गड़बड़ियां समाप्त कर दो, दूर कर दो, हटा दो। मोदी जी की सरकार बार-बार आपको कह रही है कि जिसके पास में भी गड़बड़ पैसा हो, उसको उस काले धन को सफेद कर दो। ब्लैक मनी को व्हाइट कर लो। हमारा यदि सारा पैसा सफेद हो गया, कहीं पर भी कालिख नहीं रही, फिर डर रहेगा क्या? फिर मन में भय रहेगा क्या? फिर मन में भय क्यों रहेगा? हमारा काला मन, हमारा काला कार्य हमें चैन नहीं लेने देगा। वह हमें शांति से नहीं बैठने देगा। वह हमारे साथ दांव खेलेगा। वह हमें शांति से जीने नहीं दे सकता।

कैसे देगा शांति से जीने? पेट में यदि कदन्न यानी बुरा अन्न चला गया तो वह पेट को शांति से नहीं रहने देगा। पेट में कहीं न कहीं बिगाड़ करेगा। पेट में कहीं न कहीं गड़बड़ी पैदा करेगा। इसलिए मैंने पहले भी बताया था कि 'जैसा खाए अन्न, वैसा होए मन'। हमारा खाद्य पदार्थ जैसा होगा, उसके अनुसार विचारधारा बनेगी, उसके अनुसार मन बनेगा। खोटा खाना यदि पेट में चला गया तो वह कभी हमको शांति से बैठने नहीं देगा। वह बीमारी

पैदा करेगा। हम जानते हैं कि वह खोटा अन्न पेट में बीमारी पैदा करेगा तो वैसे अन्न को पेट में डालना ही क्यों? वैसा खोटा अन्न क्यों पेट में डालना? खाने के लिए क्या चाहिए? कितनी रोटी चाहिए? खाने के लिए कितनी रोटी चाहिए? किसी को दो रोटी चाहिए तो किसी को चार रोटी चाहिए। छोटी दुकान में गए, छोटे होटल में गए तो वहां चार चपाती और थोड़ी सब्जी हो सकता है कि 15, 20 या 25 रुपये में मिल जाए। मुझे नहीं मालूम है कि कीमत क्या है? वहीं फाइव स्टार होटल में चल जाओ और वैसी ही चपाती और वैसी ही सब्जी किंतु कीमत क्या है? फर्क पड़ेगा या नहीं पड़ेगा? क्या फर्क पड़ेगा?

फर्क केवल मैनेजमेंट का है। फर्क केवल व्यवस्था का है। आपको बैठने के लिए बढ़िया जगह मिलेगी। ए.सी. रूम मिलेगा। दो-चार नौकर, वेटर हाथ जोड़े आपके आगे खड़े मिलेंगे। आपको लगेगा कि मेरा स्तर बहुत ऊंचा हो गया है। मैं इतना ऊंचा हो गया हूं। इतने लोग मेरे सामने हाथ जोड़े खड़े हैं। किंतु वह हाथ जोड़कर किस आधार पर खड़े हैं? वे किसके आधार पर आपके सामने हाथ जोड़े खड़े हैं? ये जूते किसके हैं और यह माथा किसका है? ये जूते किसके हैं और यह माथा किसका है? ये सारे आपके पैसों के आधार पर खड़े हैं। आप अपने घर पर भी चार आदमियों को खड़ा करना। चार आदमी खड़ा करना कोई बड़ी बात नहीं है। रूपली पल्ले तो रोई में चले।

एक पिता ने अपनी संतान को, अपने पुत्र को मरते वक्त चार शिक्षाएं दीं। उसमें एक शिक्षा थी कि हड्डियों की बाड़ लगाकर रखना। शिक्षाएं चार थीं– छाया में जाना और छाया में आना, मीठा भोजन करना। इतना नहीं हो तो फिर गंगा और यमुना के बीच में धन है, उसको निकाल लेना। यह बात किसने बताई? यह बात पिता ने बताई और पिता का देहावसान हो गया।

उसने मीठा खाना शुरू कर दिया। कोई तला हुआ नहीं, कोई नमकीन नहीं, कोई चटपटा नहीं, कोई सब्जी नहीं केवल मिठाई खाना शुरू कर दिया और काम कुछ करना नहीं। छाया में आना और छाया में जाना। थोड़ी सी धूप लगे नहीं। पिताजी मेरे प्रति कितनी करुणा दया करने वाले, मेरे प्रति कितना वात्सल्य भाव। अब दुकान जाता देर से है और घर से दुकान तक पूरा का पूरा टेंट लगाया। परदे लगाते हैं ना, टेंट लगाते हैं ना? सब जगह टेंट से छाया कर दो, उसके नीचे से मुझे निकलना है। उसके नीचे से बग्घी को

निकालना है। मुझे धूप नहीं लगनी चाहिए। पिताजी का आदेश था कि छाया में जाना और छाया में आना। कभी 12 बजे जाता तो कभी 1 बजे तो कभी 2 बजे जाता है। सेठ है तो सेठाई से चलता है। ऐसा करने से धीरे-धीरे मुनीम और दुकानदार या कर्मचारी जो भी हैं, वे भी देर-सवेर आते हैं। वे लापरवाह हो गए।

वह दुकान उठने लगी, उजड़ने लगी। दुकान में से पैसे इधर-उधर होने लगे। रोज सेठ साहब के आने के लिए परदे लगाते, सेठ साहब जाते और परदों को लोग खोलकर ले जाते। सेठ जी की बग्घी निकलते समय पूरे परदे होने चाहिए तो हर बार नए परदे खरीदकर लाते और लगाते। दूसरे दिन परदे गायब। इधर मीठा खाते-खाते सुगर की बीमारी हो गई। उस मिठाई को कम करने के लिए, बंद करने के लिए डॉक्टरों ने कहा, साहब आप विचार करो। इसको खाने से आपको शुगर और अधिक होगा और आप ठीक नहीं हो सकते हो। सेठ साहब ने कहा, तुम डॉक्टर हो या क्या हो? यदि इलाज कर सकते हो तो करो। मैं पिताजी की आज्ञा को नहीं टाल सकता हूं। पिताजी की शिक्षा को नहीं छोड़ सकता हूं। एक डॉक्टर ने सोचा जब स्वयं मानने को तैयार नहीं तो मुझे क्या मतलब। उसने कहा मैं आपका इलाज करूंगा। सेठ ने डॉक्टर को रोज के लिए रख लिया। वह आता सुगर चेक करता व इंसुलिन की मात्रा सेट कर इन्जेक्शन लगा देता। पिता की आज्ञा-पालन के लिए उसके अपने नौकरों को आदेश दिया कि जाओ गांव के बाहर जितनी भी हड्डियां मिलें, उन सब हड्डियों को गाड़ियों में भरकर ले आओ और अपने घर के चारों तरफ हड्डियों की बाड़ लगा दो। घर के चारों ओर हड्डियों की बाड़ लगा दी। सुरक्षा गार्ड के रूप उन्हें खड़े कर दो।

गांव के लोग विरोध में आ गए। बहुत से लोगों ने समझाया। नहीं मानने पर कोर्ट में याचिका दायर कर दी। कोर्ट में केस कर दिया। केस चलने लगा तो उसके लिए वकील लगाए गए। वकीलों ने भी 'मारो मालिक जीते है, मारो मालिक जीते है' की तर्ज पर कहा हां, एकदम तुम्हारा केस जीत जाएंगे। केस तो क्या है? कोई भी वकील कहता है क्या कि तुम्हारा केस हार जाएंगे, तुम्हारा केस कमजोर है। वह कहता है कि थोड़ा कमजोर है तो इसको धक्का लगाकर मैं पक्का कर दूंगा, मजबूत कर दूंगा। वह मजबूत करेगा तो किसके बल पर? किसके बल पर बोल रहा है? पैसों के बल पर ही होगा ना? कोई वकील कह दे कि मैं ऐसा केस नहीं लेता हूं, वह अलग बात है अन्यथा

सभी लेने के लिए तैयार हो जाते हैं। उसमें खर्चा होने लगा। धीरे-धीरे हालत खस्ता हो गई। अन्य डॉक्टर तो पीछे हट गए किंतु एक डॉक्टर ने सोचा कि अपना क्या जा रहा है? मरेगा तो यह मरेगा। इसे बोल रहे हैं कि मिठाई खाने से हालत खराब हो रही है, फिर भी नहीं मान रहा है तो मैं या कोई भी डॉक्टर क्या करेगा? एक डॉक्टर आता और इंसुलिन का इंजेक्शन लगा देता। खून की जांच कर लेता। तबीयत ज्यादा खराब होती तो इंसुलिन की मात्रा बढ़ाकर इंजेक्शन लगा देता। उनका तो काम था। आगे उसकी मरजी है। कहता कि सेठ साहब, आप खाओ। जितना ज्यादा खाता, वह उतना ही ज्यादा इंसुलिन लगा देता।

सेठ के बेटे जैसे लोगों को कौन चाहिए? ऐसे लोगों को सच्चा सुख देने वाला नहीं चाहिए। उन्हें चापलूसी करने वाला चाहिए। जो उनकी हां में हां मिला सके उसे ही वह अपना हितैषी मानता है। लेकिन चापलूसों के बल पर इकॉनामी तो नहीं चल सकती। उसका अपना गणित है। वही हाल सेठ का हुआ। घर में पैसों की कमी होती जा रही थी। उसने देखा कि पैसों की कमी हो रही है तो पिता के द्वारा बताये गये उपाय के अनुसार गंगा और यमुना के बीच खुदाई कराने का सोचा। कई आदमियों को भेजा, कहा कि पानी को रोककर गंगा और यमुना के बीच पानी की खुदाई करो। खुदाई की गई, पर वहां कुछ नहीं मिला। बहुत सारे पैसे खत्म हो गए। हालत बड़ी दुविधा में चली गई। अब तो यह हो गया कि कल क्या खाएंगे और परसों क्या खाएंगे?

सेठ ने शिक्षा के साथ यह भी कहा था कि यदि इसके बाद भी कोई कठिनाई आ जाए तो अमुक मेरा मित्र है, इसी नगर में रहता है, उससे संपर्क कर लेना, उससे राय ले लेना। वह गया वहां पर। हालत बिगड़ी हुई थी। बीमारी के कारण शरीर दुबला-पतला पीला पड़ गया था। पुण्यवाणी के रुठने से, पैसों की कमी होने से भी कई बार स्थिति विचित्र बन जाती है।

वह गया तो सेठ का मित्र उसको पहचान नहीं पाया। उसने कहा कि भाई कौन? कहा कि मुझे नहीं पहचाना? मैं आपके मित्र का पुत्र। कहा, अरे! तुम्हारी यह हालत कैसे हो गई? उसने कहा कि क्या कहूं अंकल? बड़ी दुविधा में हूं, बड़ी ही कठिनाई में हूं। पिताजी ने मुझे चार शिक्षाएं दीं। मैंने सोचा कि पिताजी की शिक्षाओं पर अमल करूंगा तो सुखी हो जाऊंगा। पिताजी ने मेरे सुख के लिए ही शिक्षाएं दीं। मेरे प्रति उनका बड़ा प्रेम था, बड़ा स्नेह था, इसलिए तो मुझे अच्छी-अच्छी शिक्षाएं दीं किंतु मेरे दिन ही

उलटे आ गए कि मैं दु:खी हो गया। अंकल! आप मुझे कोई रास्ता बताओ। सेठ के मित्र ने कहा कि बेटा, तुम्हारे पिता की शिक्षा क्या थी? सेठ के पुत्र ने कहा कि मीठा भोजन करना। पूछा कि तुमने क्या किया? उसने जवाब दिया, आपको मैं कसम से कह सकता हूं कि पिताजी के जाने के बाद मैंने मिठाई के अलावा और कुछ खाया ही नहीं।

ठीक किया ना उसने? (प्रतिध्वनि–नहीं।) आप तो ऐसा कभी नहीं करोगे? वह ऐसा कर सकता है क्यों कि सेठ का बेटा था। सेठाई में जीया था। जैसी सेठाई में जीयेगा, वैसी ही अक्ल आएगी। सेठ के मित्र ने कहा कि अरे! भाई दूसरी शिक्षा क्या थी? पहले आप इसका मतलब तो बताओ क्या है वह? सेठ के मित्र ने कहा इसको बाद में बताता हूं पहले तुम दूसरी शिक्षा बताओ क्या थी? सेठ के पुत्र ने बताया, दूसरी शिक्षा थी कि छाया में जाना और छाया में आना। इस कारण से भी लुट गया मैं। उसने तीसरी बात भी बता दी कि हड्डियों की बाड़ में रहना। पूछा कि तुमने क्या किया? तो बताया कि मैंने गांव के बाहर जितनी भी पशुओं की हड्डियां थीं, वे मंगवाकर के घर के बाहर बाड़ लगा दी। उस कारण से गांव के लोग मेरे विरोध में आ गए। कई ने तो मेरे विरुद्ध केस भी कर दिया। केस भी मैं लड़ रहा हूं और चौथी बात जो उन्होंने बताई, उसके अनुसार गंगा और यमुना के बीच की खुदाई करने पर भी कुछ नहीं मिला।

सेठ के मित्र ने कहा कि तू थोड़ा रॉन्ग चला गया, गलत चला गया। सही दिशा में तुम नहीं चले। तुम्हारे पिता का यह कहना था कि मीठा भोजन करना अर्थात् भूख लगे तो भोजन करो। बिना भूख के यदि कोई खाता है तो उसका पेट खराब होता है। खराब हो गया ना पेट उसका? और जब पेट खराब होता है तो शरीर बिगड़ जाता है, मन बिगड़ जाता है। एक पेट यदि सही रहता है तो सब सही रह जाता है। आयुर्वेद में सबसे पहले किसको सही करने की बात करते हैं? यदि तुम्हारा पेट ठीक है तो सब ठीक है।

पैर गर्म, पेट नरम, माथा ठंडा और उसके बाद भी घर में आवे डॉक्टर तो क्या?

(सभा में बैठे लोग बोलते हैं– मारो डंडा)

आप डंडा मारने का बोल रहे हो। मैं क्यों कहूं डंडा मारने की बात? डॉक्टर क्यों आएगा? बिना बुलाए कोई डॉक्टर नहीं आता है। पैर गरम और

पेट नरम। यदि कोई मनमरजी से खाए, ठूंस-ठूंस कर खाए और कहे कि क्या करूं? पेट एकदम काठा-काठा हो गया है, पेट एकदम पत्थर जैसा सख्त हो गया है। जब पेट में कुछ भी डालते रहोगे, पेट में कचरा जमा करते रहोगे तो पेट काठा ही होगा, पेट सख्त ही बनेगा। लिमिट में खाना खाएगा तो क्यों काठा बनेगा पेट? लिमिट को छोड़कर अनलिमिट खाने लगे, कहे कि आने दो, आने दो। थोड़ा ये दे दो, थोड़ा हाजमोला है तो दे दो, थोड़ी ये चटनी, थोड़ी वो चटनी, थोड़ी सिंगदाने की चटनी, पता नहीं क्या-क्या है? कितनी प्रकार की चटनियां होती होंगी? और उसके बाद थोड़ा नमकीन, थोड़ा और कुछ। थोड़ा स्वाद बदलो और फिर चलने दो। इतना खाने के बाद अब वह उठता है तो उठा नहीं जाता है। तब कहता है कि अब तो सोना ही पड़ेगा। सो जा भाई और तो क्या करेगा? अब तो सोना ही पड़ेगा और तो होगा ही क्या? सोने के अलावा और हो ही क्या सकता है? नाक से श्वास नहीं ले पा रहा है। अब मुंह से श्वास खींच रहा है।

पहले इतना खाया, पेट को खराब किया, फिर डॉक्टर के पास जाओगे तो भगवान महावीर की शिक्षा पहले क्यों नहीं ले ली? 'कम खाना, उनोदर करना', ऐसा बताया या नहीं बताया? भगवान महावीर ने क्या कहा? ज्यादा खाने के लिए कहा क्या? (प्रतिध्वनि—नहीं) भगवान ने भूख से कम खाने की बात कही है या ज्यादा खाने की बात कही है? भूख से कम खाने वाले कौन हैं? रोज भूख से कम खाने वाले कौन हैं? आप लोग कहोगे कि हम तो वैसे ही कम खाते हैं। दो रोटी या एक ही तो रोटी खाते हैं और उसमें भी यदि एक रोटी कम खाएं तो शरीर कैसे चलेगा? भूख से एक कवल भी कम खाने वाले कौन हैं? खाने वाले को खाते वक्त लगता है कि अभी तक खाली है, अभी तक खाली है और भरते जाओ, भरते जाओ। जैसे गेहूं के बोरे में पूरा हिला-हिलाकर गेहूं भरते हैं, वैसे ही आदमी भर-भरकर और हिला-हिलाकर कितनी ही चटनी, नमकीन, मसाले आदि खाने की कोशिश करेगा। ऐसे यदि खाने की कोशिश करेगा तो एक दिन, दो दिन, चार दिन तक चल जाएगा फिर तो अंततोगत्वा वह पेट भी हाथ ऊंचा कर देगा। वह कहेगा कि अब मैं तुम्हारा साथ नहीं दे सकता। ऐसे में पेट खराब ही होना है, पेट काठा ही होगा। बीमारियां चालू होंगी, फिर डॉक्टरों के बिना और कोई दूसरा चारा रहता नहीं है।

सेठ के मित्र ने कहा कि तुमने यह ठीक नहीं किया। मीठा भोजन करना मतलब, जब भूख लगे तब भोजन करना। उसने कहा चाचा मैं समझा ही

नहीं। पिता की दूसरी शिक्षा का अर्थ बताया कि छाया में जाना और छाया में आना का मतलब है– सूर्योदय के साथ दुकान पर पहुंच जाओ और शाम ढलने के बाद वापस लौटकर घर में आ जाना। इस तरह से अपने आप छाया हो जायेगी। इसका अर्थ आरामतलबी न होकर कड़ी मेहनत करना है। तीसरी बात; हड्डियों की बाड़ लगाने का मतलब है कि जीते जी आदमियों की बाड़ लगाओ। हर किसी के दुःख में सहयोगी बनो। हर किसी के दुःख में उसके पीछे खड़े हो जाओ। हर किसी के दुःख-दर्द में सहयोग करने का प्रयत्न करो। फिर चौथी शिक्षा कि तुम्हारे घर में दो गायें हैं, शायद अभी भी होंगी। उन दो गायों में एक का नाम गंगा और दूसरी का नाम यमुना है। उन गायों को जहां बांधा जाता है, उसके बीच धन गड़ा हुआ है। सेठ का पुत्र कहता है कि अरे! यह बात है, मैं तो समझा ही नहीं।

अब तो उसके पांव में जो ताकत आई जो ताकत आई कि बस कहना ही क्या। वह घर पहुंचा। दरवाजा बंद कर कुल्हाड़ी उठाई और?

पइसो प्यारो रे, दुनिया ने लागे मोहन गारो रे,
पइसो प्यारो रे।

पैसों को देखकर, पैसों की खनक सुनकर बुढ़ापे में भी चमक आ जावे। खटिया से उठने वाला नहीं होता है पर पैसों की खनक बता दो तो क्या हो जाता है? 'कांई सा?' उठ जाएगा, नींद में है तो भी जाग जाएगा। पता नहीं क्या करामात है पैसों की? वह करामात तो जानने वाले ही जानते हैं किंतु हर किसी के लिए पैसा इतना करामाती नहीं होता है। साधुओं के पास पैसा खनका भी दो तो वह डोलता नहीं है। जो डोलता है, वह फिर डोल ही जाएगा। वह स्थिर ही नहीं रह जाएगा, फिर वह डोल ही जाएगा। जो साधु पैसों की खनक से डोल जाएगा, वह डोलायमान रहेगा। वह स्थिर कैसे रह पाएगा?

सेठ के बेटे ने खुदाई की तो सोने की अशर्फियों से भरी चरी निकल गई। अब तो वापस वही शान आ गई। उसने सबसे पहले हड्डियों से बनी हुई बाड़ को हटवाया। सबसे क्षमा याचना की और कोर्ट में जो भी याचिकाएं थीं तो कहा कि जो भी सज़ा देनी है दे दो, सबसे राज़ीनामा किया। इस तरह से कोर्ट के सारे केस उठाए। अब तो सुबह-सुबह एकदम, 'अर्ली मॉर्निंग' कहां चला जाता? वह दुकान चला जाता और जब दुकानदार खुद जल्दी आता है तो नौकर-चाकर भी जल्दी पहुंचने लगते हैं। सब काम एकदम टाइम पर

चालू होने लग गया। उधर जब भूख लगती है, कड़ाके की भूख लगती है तब भोजन करता है तो सुगर वगैरह भी दूर चली गई। अब वह एकदम सुखी हो गया। अब किसी भी व्यक्ति को दुःख-दर्द या पीड़ा होती तो उसका सहयोग करने के लिए हमेशा तैयार हो जाता। किसी के घर में मालूम पड़ता कि कोई समस्या है तो वह खड़ा हो जाता। ऐसी स्थिति में सेठ के बेटे पर कोई भी भार आएगा, कोई भी कठिनाई आएगी तो कितने लोग आकर खड़े हो जाएंगे? कितने लोग आकर खड़े हो जाएंगे?

कठिनाई में जो दूसरों का सहयोगी बन जाता है लोग उसके सहयोग को भूलते नहीं हैं और वे भी मुसीबत के मौके पर आकर खड़े हो जाएंगे। दूसरी तरफ यदि कोई दुकानदार किसी को रोज ठगे, रोज ठगे, उस पर कोई विपत्ति आ जाए तो लोग यही कहेंगे कि मरने दो। मरने दो (थोड़ा जोर देते हुए)। उसके निकट कोई नहीं जाएगा। क्यों नहीं जाएगा? आदमी तो वह भी है फिर भी उसके निकट नहीं जाएंगे क्योंकि उसने हमारे साथ जो-जो किया है, वे हम जान रहे हैं कि हमारे साथ क्या-क्या किया है?

कहते हैं कि राम, लक्ष्मण और सीता जा रहे थे। एक तालाब के किनारे से निकले तो उन्होंने एक बगुले को देखा। वह बगुला धीरे-धीरे, बहुत धीरे-धीरे, ऐसे धीरे से पांव रखता है जैसे कोई संत ईर्या समिति से चल रहा हो। उसे इस प्रकार पांव रखते हुए देख राम कहते हैं– 'देखो भाई, ये कैसा संत पक्षी है। कितनी यतना से सावधान हो चलता है कि किसी जीव की विराधना नहीं हो जाए।' राम के वचन सुनकर उस तालाब में रहने वाली एक मछली कहती है– मर्यादा पुरुषोत्तम राम! आप क्या कह रहे हो? आप के मुंह से किसी को बिना जाने दयावान कहना उचित नहीं है। आप ऐसे ही किसी को दयावान का सर्टिफिकेट कैसे दे रहे हो? किसको कह रहे हो संत पुरुष? दयावान् किसको कह रहे हो? इसकी असलियत जाननी है तो हमसे जानिए। इसकी पहचान हमसे पूछिए। हम बताते हैं कि इसने हमारे वंश खत्म कर दिए हैं। हमारे सारे वंशों को इसने उजाड़ दिया है। अब तो कुछ ही मछलियां रही हैं, बाकी इसने सारा तालाब खाली कर दिया। अब आप सोचें संत पुरुष, संत पक्षी की उपाधि आप किसको दे रहे है?

हकीकत में कौन कितना धर्मात्मा है, यह उसके निकट रहने वाले, उसके नजदीक रहने वालों से पूछो? कोई व्यक्ति आपसे कभी-कभी मिले और दिखे कि सामायिक के एकदम सफेद कपड़े पहने हुए है और सामायिक

में बैठा है तो इतने मात्र से वह धर्मात्मा नहीं हो जाता। किसी के ऊपरी आचरण से ही उसे सर्टिफिकेट नहीं दिया जा सकता। जीवन में सम्यक् बोध हो एवं उसके अनुसार उसका जीवन ढला है तो वह उसकी चर्या में भी झलकेगा। सेठ के बेटे की कहानी से यह अच्छी तरह समझा जा सकता है। सेठ की शिक्षाएं जब उसके समझ में आ गईं तो सुखी हो गया। उसका जीवन ही बदल गया।

वैसे ही कथा का उपसंहार करते हुए कहते हैं कि भगवान महावीर हमें शिक्षा देने वाले हैं। लेकिन लोग कहते हैं कि बावजी, वे शिक्षाएं मागधी भाषा में हैं, अर्द्धमागधी भाषा में हैं। प्राकृत भाषा में हैं इसलिए समझ ही नहीं पाते हैं। पहले तो सेठ का बेटा भी उल्टी-पुल्टी समझ के कारण दुःखी हो गया किंतु बाद में उसके पिता के मित्र ने समझाया। जैसे ही समझ आ गई वह सुधर गया। सुखी हो गया। वैसे ही आप यदि उल्टी-पुल्टी समझ के कारण दुःखी हो तो आपके लिए धर्म मित्र के रूप में साधु होते हैं। भगवान महावीर ने कहा कि तुम नहीं समझ पाओ तो तुम मेरे धर्म मित्र, साधु से पूछ लेना और साधु के बताए हुए मार्ग पर चलोगे तो तुम्हारा कल्याण होगा। उनके द्वारा बताए गये मार्ग पर चलोगे तो तुम्हारा उत्थान होगा।

आप यह मत समझना कि महाराज कह रहे हैं तो जरूर इनको अपनी टोली बढ़ानी होगी। इनकी अपनी टोली बढ़ानी है इसलिए कहते रहते हैं कि दीक्षा ले लो, दीक्षा ले लो। अगर इतने लोग दीक्षा ले लेंगे तो क्या होगा? आप सोच रहे हो कि अगर इतने सारे दीक्षा ले लेंगे तो गोचरी कहां से आयेगी? आप क्यों चिंता करते हो? आपको इतनी चिंता क्यों हो रही है? जितने ज्यादा लोग दीक्षित होंगे, धर्म में उतने ही लोग बढ़ेंगे। धर्म में बढ़ेंगे या घटेंगे? सभा में बैठे लोग बोलते हैं– धर्म में बढ़ेंगे। तो फिर चिंता क्या करनी है? 'नाच न जाने, आंगन टेढ़ा'। दीक्षा हमको लेनी नहीं है ऊपर से तर्क कि यदि सारे दीक्षा ले लेंगे तो? चिंता की जरूरत नहीं। चिंता छोड़ो सुख से जीओ। जिसे लेनी है, वह ले लेगा। साधु कभी अपनी टोली बढ़ाने की नीयत से दीक्षा लेने के लिए नहीं कहता है। अपनी टोली बढ़ाने की नीयत नहीं होनी चाहिए। इस नीयत से, टोली बढ़ाने से वह सुखी नहीं हो जाएगा बल्कि उसे तनाव में ही जीना पड़ेगा, तनाव में ही चलना पड़ेगा।

हमें हित की बात करनी है, समझाइश की बात करनी है, सच्ची बात करनी है। यदि हम सच्चाई में जीयें तो मैंने बताया ना, मन को मजबूत

करना है। अर्थात् सत्यता से जीयो, ईमान से जीयो, नैतिकता से जीयो और प्रमाणिकता से जीयो। फिर देखो कि मन की कैसी मजबूती आती है? कैसी मन की दृढ़ता होती है? अपने सारे काले कारनामों को सफेद कर लो, कोई भी कारनामा काला नहीं रहना चाहिए। फिर देखो कि मन कितना मजबूत होता है, मन कितना स्ट्रॉन्ग होता है? ध्यान रखना हमारे काले कारनामे हमारे मन को मजबूत नहीं करते हैं।

हम मन को दोष न दें। मन न होना तो और भी दुःख की बात है। उस स्थिति में हम विकल-इन्द्रिय वाले होंगे। मन महान पुण्य से मिलता है। उस काम का रख-रखाव हमें सही ढंग से करना चाहिए। यदि हमने सही ढंग से उसको रखा तो हमारा मन हमें महावीर बना देगा। मोक्ष दिलाने वाला हो जाएगा। अतः मन के दुरूपयोग से बचें। उसका सदुपयोग करें और जीवन का सच्चा आनन्द उठायें। इतना ही कहता हुआ विराम लेना चाहूंगा।

07 अक्टूबर, 2019

3

स्वयं से स्वयं का समीक्षण

शांति जिन एक मुज विनति...

आज दशहरा है, दशमी का दिन है। माना जाता है कि रावण के दस मुख थे। प्रसंग विदित है। उस विषय में ज्यादा कुछ कहने की आवश्यकता मेरे खयाल से नहीं रहेगी, क्योंकि रामायण भले ही किसी ने नहीं पढ़ी हो लेकिन टी.वी. पर देखी अवश्य होगी। विचार करें कि हमने उससे क्या प्रेरणा ली? हमने उससे क्या सीखा? एक तरफ राम हैं और एक तरफ रावण है। सोचें तो समझ में आयेगा कि ये हमारे मन की दो प्रकार की वृत्तियां हैं। एक शुभ वृत्ति है और एक अशुभ वृत्ति है। कभी हमारा मन शुभ में रमण करता है और कभी अशुभ दिशा में चला जाता है।

'चित्तनदी उभयतो वहति, वहति पुण्याय पापाय च'

हमारे चित्त की नदी कभी पाप की तरफ अभिमुख हो जाती है तो कभी पुण्य की दिशा में गतिशील रहती है। कभी शुभ दिशा में उसका प्रवाह बना रहता है तो कभी अशुभ दिशा की ओर भी उसका प्रवाह बन जाता है।

रावण अशुभ दिशा का एक प्रतीक है। अशुभ दिशा की ओर यदि उसका प्रवाह नहीं होता तो उसका पतन नहीं होता। पतन के लिए अशुभता जरूरी है। उससे व्यक्ति का पतन होता है। यदि उसके निकटवर्ती व्यक्तियों की बात करें तो तीन थे, कुंभकरण, मेघनाद और शूर्पनखा। ऐसा माना जाता है कि कुंभकरण छः महीने सोता था। उसे आलस्य और प्रमाद का पर्याय माना जा सकता है। मेघनाद अहंकार का पर्याय और शूर्पनखा धूर्तता की पर्याय है। माना जा सकता है ये सभी रावण के इर्द-गिर्द थे। जैसे लोगों के बीच रावण चल रहा था, वैसे ही संस्कार उसके बनते हुए चले गए या सबकी समन्विती, सबके वैसे संस्कार बनते हुए चले गए।

हम राम की तरफ देखेंगे तो राम वचनबद्धता में शूरवीर। लक्ष्मण; समर्पणा में शूरवीर, राम के प्रति समर्पित। सीता जी समर्पणा के साथ नीति की जानकार या नैतिकता का प्रतीक कह सकते हैं। नीति जो कह रही है, नीति के अनुसार हमारा व्यवहार होना चाहिए। एक तरफ सद्गुणों का समुदाय है और एक तरफ दुर्गुणों का समुदाय है। जैसे-जैसे संगति मिलती है, वैसा-वैसा प्रभाव होने लगता है। बताया गया है कि संगति से व्यक्ति साधु भी बन जाता है और संगति से व्यक्ति पापकर्मी भी बन जाता है। जैसी संगत में जाएगा, वैसी ही उसकी रंगत बन जाएगी। हमारे भीतर यदि हमने अशुभ प्रवाह को चालू रखा तो वह अशुभ प्रवाह हमें रावण की ओर ले जाने वाला बनेगा। रावण की दिशा में ले जाने वाला बनेगा जबकि शुभ प्रवाह रखा तो हमारे भीतर राम का अवतरण होगा।

राम के लिए एक विशेषण लगता है 'मर्यादा पुरुषोत्तम'। मर्यादा के लिए जिनकी पहचान होती थी। मर्यादा जीवन की आब होती है। मर्यादा उनके लिए सुरक्षा का कवच है। जो उसको धारण करता है उसके पराजित होने की बात ही नहीं होती है। मर्यादा से हमारी शक्तियां नियंत्रित हो जाती हैं। वे उफनती नहीं हैं। मर्यादा से दायरे में रहती हैं। जहां मर्यादा का दायरा बना रहता है, वहां हमारी सुरक्षा भली-भांति बनी रहती है।

दशहरा से हम कुछ और सीख ले सकें तो वह होगा कि जिससे प्रदूषण प्रकट हो रहा है, उन चीजों का बहिष्कार करें। अपना जीवन ऐसा ढालें कि प्रदूषण न फैल सके। प्रदूषण नहीं फैले। अभी कुछ ऐसी जानकारी मिली कि मुंबई में लगभग 21 सौ पेड़ काटे गए। सुप्रीम कोर्ट द्वारा निषेध आज्ञा प्रसारित हुई किंतु 27 सौ में से 21 सौ पेड़ कट गए। उसके बाद सुप्रीम कोर्ट का ऑर्डर आया। एक तरफ पर्यावरण को शुद्ध करने का लक्ष्य बनाया जाता है। वृक्षारोपण की बात हो रही है। 'वृक्षारोपण किया जाए, वृक्षारोपण किया जाए, वृक्षारोपण किया जाए'। आज जो वृक्ष रोपे जाएंगे, वे कितने दिनों में पनपेंगे, कब तक पनपेंगे, उनकी कितनी देख-रेख होगी, कितने पेड़ उजड़ जाएंगे, कितने पेड़ बिखर जाएंगे, क्या हो जाएगा? जो पहले से पेड़ हैं, उनको इस तरह से काट कर पर्यावरण के साथ किस प्रकार का सौदा हो रहा है?

दूसरी बात, प्लास्टिक थैलियों की। ये थैलियां काफी समय से एक प्रकार से जीवन का अंग रूप बन चुकी हैं। बहुत पहले भी इस पर चर्चाएं हुई हैं। संत भी व्याख्यान में समय-समय पर बोल रहे हैं। इधर-उधर फैली हुई

थैलियां कई बार पशुओं ने चरी है जिसके कारण उनकी मृत्यु भी हो गई। एक गाय की मृत्यु का कारण बताया गया कि उसके पेट में 36 किलो प्लास्टिक की थैलियां निकलीं। उनको पेट भरना है और चरते हुए थैलियां भी चर लेती हैं। प्लास्टिक ऐसी चीज है जो पचती नहीं है। बताने वालों ने यह भी बताया है कि इसका धुआं भी बड़ा खतरनाक होता है। इनको यदि जला भी दें तो इसका धुआं कैंसर जैसी बीमारियों को पैदा करने वाला होता है। अभी भारत के प्रधानमंत्री मोदी जी ने बहिष्कार की बात कही है। पहले भी यह बात कही जाती रही है। किंतु जब तक जन जागरण नहीं होगा, जब तक हम स्वयं सक्रिय नहीं होंगे, जब तक ये बात हमारे जेहन में नहीं पहुंचेगी, तब तक हम उससे अपने आपको अलग नहीं कर पाएंगे। हम करते रहेंगे क्योंकि हम सोचते हैं कि क्या फर्क पड़ता है? हमने एक ने वापर लिया या नहीं भी वापरा तो उससे क्या फर्क पड़ने वाला है? ऐसे वह चीज चलती रहती है।

एक व्यक्ति सही दिशा में चलता है तो वह अनेक व्यक्तियों को सही दिशा में ले जाने वाला हो जाता है। गलत दिशा में चलने वाला एक व्यक्ति अनेक लोगों को गलत दिशा में ले जाने वाला हो जाता है। रावण के साथ कोई जाएगा, वह अपनी बात बताएगा, अपनी दिशा में ले जाएगा। एक शराबी की कोई संगति करेगा, वह शराब की दिशा में उसको ले जाने का प्रयत्न करेगा।

अभय कुमार, एक कत्लखाने वाले कालशौकरिक के पुत्र सुलस से भी दोस्ती करता है। कहानियों में बताया गया है कि उसे श्रावक बना दिया। एक कत्लखाना चलाने वाले के बारे में हमने बहुत बार सुना है। राजगिरी का वह कालशौकरिक कसाई, जिसको कालिया कसाई भी कहा जाता है, पांच सौ पाडे का रोज अपने कत्लखाने में वध करता था। एक दिन के लिए भी कत्लखाना बंद रखने की उसकी नीयत नहीं थी। वह मान नहीं रहा था तो उसी के बेटे सुलस से अभय कुमार ने दोस्ती की। दोस्ती का परिणाम यह हुआ कि उन्होंने उसको 12 व्रतधारी श्रावक बना दिया।

हम विचार करें, हमने ऐसे कितने लोगों को सुधारा है, जो गलत दिशा में जा रहे होंगे। जो गुटखा शराब का उपयोग कर रहे हों, बीड़ी और सिगरेट का उपयोग कर रहे हों वैसे एक, दो या चार आदमियों को भी हमने सुधारा या नहीं सुधारा! जो नहीं पीता है उसको पच्चक्खाण दिला दिया तो कोई बड़ी बात नहीं है। जो शराब नहीं पी रहा है, जो बीड़ी नहीं पी रहा है, जो

सिगरेट नहीं पी रहा है, हमने ऐसे लोगों को प्रतिज्ञा दिला दी तो कोई बड़ी बात नहीं है। हालांकि ठीक है, कल वह पीने न लगे इसलिए प्रतिज्ञा दिलाना बुरा नहीं है किंतु अब अपने को सोचना यह है कि जो सिगरेट पी रहा है, जो बीड़ी पी रहा है, ऐसे लोगों में से हमने कितने लोगों को पच्चक्खाण करवाए? हम लोगों ने कितने लोगों को ये सब चीजें छुड़वाईं और कितने लोगों को 12 व्रत स्वीकार करवाए? लेकिन सबसे पहले हमें स्वयं विचार करना पड़ेगा कि हमने कितने व्रत स्वीकार किए? हमने अभी तक 12 व्रतों को स्वीकार किया या नहीं किया? यदि हम ही 12 व्रतों को स्वीकार नहीं कर पाए हैं तो दूसरों को कहेंगे कैसे? हम 12 व्रतों के संबंध में जानकारी कितनी रखते हैं?

यदि कोई हमसे पूछ ले कि पहले व्रत का क्या नियम है, कैसे उसकी पालना करें और हम उसको नहीं बता सके, नहीं समझा सके तो कैसे उसको व्रतधारी बना सकेंगे? हमारा लक्ष्य होना चाहिए कि हम अपने पड़ोसियों को, अपने परिवार वालों को, अपने संपर्क में आने वालों को सही दिशा दें। यदि सही दिशा देंगे तो अनीति हटेगी, अप्रामाणिकता हटेगी। नीति और न्याय का रास्ता खुलेगा। हम नैतिकता की ओर अग्रसर हो पाएंगे। हम नियम और मर्यादाओं का पालन कर पाएंगे। धीरे-धीरे सारी दुनिया एक तरफ, एक दिशा में बढ़ गई तो जो कहा जाता है कि राम राज्य आने में देर नहीं लगेगी। रावण का राज्य हटेगा और राम का राज्य आएगा।

21 सौ पेड़ों की कटाई के बाद कितने जैनियों ने अपने बयान दिए? कितने लोगों ने इसके लिए विरोध किया? प्लास्टिक थैलियों के लिए हमने क्या विचार किया? बीड़ी, सिगरेट, तंबाकू के लिए हमारा क्या लक्ष्य बना? कत्लखानों में जीवों को काटा जा रहा है, वहां से हमने उनके बचाव के क्या लक्ष्य बनाए? इतनी सारी बातों पर जब हम विचार करेंगे या सोचेंगे तो हमें रास्ता दिखेगा कि हमने क्या किया? हमने पैसे कमाए होंगे, परिवार का पोषण किया होगा, खूब धन भी कमा लिया होगा, भारत में नामी घराने के लोगों के साथ अपना नाम अंकित करवा दिया होगा किंतु बंधुओ! इससे क्या होगा? क्या इससे त्राण मिलेगा? क्या इससे शरण मिलेगी? क्या इससे हमारा जीवन सुदृढ़ हो जाएगा? जब तक हमारा समाज नहीं सुधरेगा तब तक हम राष्ट्र का सुधार करने में समर्थ नहीं हो पाएंगे। समाज का सुधार स्वयं के सुधार से होगा। शुरुआत अपने आप से करनी पड़ेगी।

अपना सुधार करें, परिवार का सुधार करें। हम एक-एक चीज की समीक्षा करें कि मुझे क्रोध तो नहीं आ रहा है। अहंकार मेरे भीतर स्थान तो नहीं बना रहा है। अशुभ विचारों की चपेट में तो नहीं आया हूं। यदि आया हूं तो मुझे उनसे कैसे बचाव करना है? मैं कहीं अनीति का वाहक तो नहीं बन रहा हूं? मेरे द्वारा कोई अन्याय तो नहीं किया जा रहा है? किसी अनीति के मार्ग पर तो मैं नहीं बढ़ रहा हूं? अप्रामाणिकता के क्षेत्र में तो मेरी गति नहीं हो रही है? हमें समीक्षा करनी चाहिए और अच्छी तरह से विचार करना चाहिए कि अनीति किसलिए की जाय? खाने के लिए बहुत कम वस्तुओं की आवश्यकता होती है। खाने के लिए ज्यादा धन की आवश्यकता नहीं होती है। कितना खाएगा आदमी? वह ज्यादा नहीं खा पाएगा तो व्यर्थ का पाप का भार माथे पर क्यों बांधना? क्यों अपने पर भार लादना? पाप का भार बड़ा भयंकर होता है। उसके बंधे रहने से हमारी आत्मा दुःखी हो जाएगी। हमारी आत्मा पीड़ित होती रहेगी, हमारी आत्मा परेशान होती रहेगी।

हम सोचें, विचार करें और अपनी आत्मा की तरफ भी अपना लक्ष्य बनाएं। दीक्षा लेना हर किसी के वश की बात नहीं है। जो ले ले अच्छी बात है। दीक्षा लेना भी किसी समस्या का समाधान नहीं है। दीक्षा के बाद भी यदि उसकी प्रवृत्ति नहीं सुधरती है तो वह दीक्षा विशेष कारगर नहीं होगी। वस्त्र बदलने के पहले हमारा चित्त बदलना चाहिए, हमारी वृत्ति बदलनी चाहिए। मौज-शौक की हमारी वृत्ति रहेगी तो वह हमें पाप की ओर ले जाएगी। मौज-शौक की तरफ जिसका रुझान होता है, वह हिंसा को देखने वाला होता है। वह हिंसा को करने वाला होता है। हिंसा को प्रश्रय देने वाला होता है। वह अन्याय के क्षेत्र में, अनीति के क्षेत्र में प्रवेश करे तो कोई बड़ी बात नहीं है क्योंकि वह मौज चाहता है। वह शौक चाहता है।

माता-पिता का दायित्व क्या है? धर्म-पत्नी कैसी होना? इन बातों पर यदि विचार करेंगे तो यह कहना व्यर्थ होगा कि हम क्या करें? इस सम्बंध में एक प्रसंग प्रस्तुत है-

जीवन निर्वाह होना एक बात है और मौज-शौक होना दूसरी बात है। जीवन में बहुत सारे मौज हो सकते हैं जिनके लिए हमें कोई ऐसा कार्य नहीं करना पड़ेगा जिससे किसी जीव की घात हो। जिससे किसी जीव की विराधना हो। किसी के साथ हमें अनीति के रूप में प्रस्तुत होना पड़े। हमारा शौक त्याग का होना चाहिए, भलाई का होना चाहिए। हम लोगों का अच्छा

कर सकें, किसी का भला कर सकें, ऐसे मौज-शौक यदि होते हैं तो वे हमें तृप्ति देने वाले होते हैं।

पैसे की भूख व्यक्ति को अनीति में धकेल देती है। घर के अन्य लोग मौन रख लेते हैं। ऊपर से कहते हैं कि हम तो अनीति करना नहीं चाहते पर टाबर-बच्चे नहीं मानें तो हम क्या करें?

आचार्य पूज्य गुरुदेव एक घटना सुनाया करते थे, फरमाया करते थे। एक वकील अपने घर पर भोजन कर रहा था कि बेल बजी। दरवाजा खुला। एक सेठ साहब सफेद कपड़े पहने हुए प्रवेश करते हैं और एक अटैची, एक सूटकेस वह वकील साहब के पास लाकर रखते हैं। वकील जानता है कि क्या है, कैसे लाया है, क्या लाया है, क्यों लाया है? फिर भी अनजान बनकर अपनी पत्नी को दर्शाने के लिए सेठ ने कहा कि वकील साहब आपके कार्य की, आपके परिश्रम की निष्पत्ति है। आपने जो कार्य किया उसके लिए पूरे 50 हजार रुपये हैं। पत्नी की तरफ वकील साहब देखते हैं। पत्नी का चेहरा गंभीर बना हुआ है।

सेठ अटैची रखकर चले गए। वकील ने वह अटैची अपनी पत्नी की ओर बढ़ाई। पत्नी ने कहा कि ये क्या है? कहा कि 50 हजार रुपये हैं। सेठ का कोई केस था। मैंने उसको जिता दिया। उसके एवज में ये 50 हजार रुपये मिले हैं। बात ही बात में उन्होंने अपनी प्रशंसा भी कर दी कि 10 लाख रुपये के झूठे लेन-देन के कागजात थे उनको मैंने ठीक करवाकर सेठ की जीत करवा दी। पत्नी ने कहा कि नाथ! मुझे ऐसे पैसे नहीं चाहिए। वकील ने कहा कि तुम्हारे आभूषणों के काम आएंगे। पत्नी ने कहा कि मुझे ऐसे आभूषण नहीं चाहिए, जिसके पीछे किसी का दर्द रहा हुआ हो। आपने सेठ जी को जिता दिया, यह गलत कार्य किया और 50 हजार रुपये रखकर आप खुश हो रहे हैं किंतु मेरे को खुशी नहीं है। मुझे ऐसे पैसे नहीं चाहिए और न ही मुझे आभूषण चाहिए। मेरी नैतिकता, मेरा शील ही मेरा आभूषण है। वकील साहब सुनकर सन्न रह गए। आगे पत्नी कहने लगी कि पैसे यदि घर में रहेंगे तो मेरा मन अशांत रहेगा। मेरा मन पीड़ित होता रहेगा। मैं नहीं चाहती कि ऐसे पैसे घर में रहें।

यह होता है धर्मपत्नी का कर्तव्य। सीता को लेकर जब रावण लंका पहुंचा तो मंदोदरी ने भी रावण से कहा कि नाथ! आप ये क्या कर रहे हो?

किंतु उसकी बात को दबा दिया गया। जब रावण ने मंदोदरी से कहा कि तुम जाकर सीता को समझाने का प्रयत्न करो तो मन से नहीं चाहने के बावजूद पति का आदेश पाकर वह सीता के पास भी गई। सीता ने कहा कि बहन, तुम धर्मपत्नी हो और पतिव्रता के नाते पति के आदेश से तुम समझाने आ गई होगी किंतु तुम स्वयं बताओ कि क्या नारियों को इस प्रकार से जीवन जीना चाहिए या उनको शील और नैतिकता का जीवन जीना चाहिए? मंदोदरी सीता से कहती है कि होना तो वही चाहिए लेकिन दुनिया की दशा बड़ी विचित्र है। सीता ने कहा कि बहन, दुनिया की दशा दुनिया जाने। हम भी यदि वैसे ही होते रहेंगे तो दुनिया के जो रूल्स हैं, वे कहां मिलेंगे?

आज नैतिकताएं कागजों में मिलती हैं किंतु वे हमारे जीवन का अंग बननी चाहिए। वकील साहब ने अपनी धर्मपत्नी का विरोध स्वीकार किया। उनकी धर्म पत्नी ने वकील साहब को सही दिशा दी। वकील साहब ने भी विचार कर लिया कि आगे से ऐसा कोई भी केस मैं हाथ में नहीं लूंगा जिसमें झूठ-कपट करना पड़े, छल-कपट करनी पड़े। हकीकत में न्याय मिलता है या न्याय होता है, यह मैं नहीं समझ पाता हूं, क्योंकि जिस समय जहां जो अपराध घटे, उस समय जो बॉडी लैंग्वेज होती है, उस समय जो विचार होते हैं, उस समय जो आकार-प्रकार होता है, वह बाद में नहीं हो सकता है। एक घंटे के बाद भी वैसा हमारा आकार-प्रकार नहीं बनेगा, वैसे ही विचार नहीं बनेंगे।

आप विचार करो। एक व्यक्ति को क्रोध आया। क्रोध में वह तमतमाया और मुंह से कुछ शब्द बोले। उसके हाथ-पांव से जिस प्रकार के एक्शन हुए, वैसे ही दो घंटे के बाद वह चाहे तो हो सकती है? दो घंटे के बाद न तो वैसी शब्दावली हो सकती है, न चेहरे का आकार-प्रकार ही बनेगा और न हाथ और शरीर के एक्शन ही वैसे बन पाएंगे। तो फिर? फिर हम गवाह किस रूप में लेंगे? हम एकदम सही, हकीकत कैसे बयां कर सकेंगे?

खैर! जैसी भी स्थिति है, जो भी स्थिति है, वह अलग विषय है। किंतु वकील साहब ने अपनी पत्नी की बात को स्वीकार कर, समझकर यह निर्णय कर लिया कि मैं अब गलत केस नहीं लूंगा। पैसा कितना भी आ जाए, वह परमात्मा नहीं है। उससे शांति नहीं मिलेगी। पैसों से शांति मिलती तो अमेरिका के लोग डिप्रेशन में नहीं आते।

आचार्य पूज्य गुरुदेव देवगढ़ विराज रहे थे। अमेरिका के एक सज्जन पुरुष डॉक्टर कुंदनसिंह जी सिंधवी आए और गुरुदेव की सेवा में बैठे। वैसे वे राजस्थान के उदयपुर के ही थे किंतु अमेरिका रहने लगे थे। बैठते ही उन्होंने कहा कि गुरुदेव, शांति कैसे मिले? गुरुदेव ने कहा कि डॉक्टर साहब आप ऐसा क्यों पूछ रहे हो? आप तो ऐसी दुनिया में रह रहे हो जहां पैसों की कमी नहीं है, धन की कमी नहीं है। उन्होंने कहा कि म.सा. पैसों की कमी नहीं है, धन की कमी नहीं है किंतु आज अमेरिका के बहुत से लोग डिप्रेशन में जा रहे हैं। आत्म समाधि, शांति की खोज में जा रहे हैं। अमेरिका के लोग शांति की खोज में जाने की तैयारी कर रहे हैं या खोज में चले गए होंगे। लेकिन हमारी क्षुधा, हमारी भूख कितनी तीव्र हो पाई? हम रोज-रोज आध्यात्मिक बातें सुनते हैं पर जैसे ही पाश्चात्य संस्कृति का सहयोग मिला, हमारी वृत्तियां एकदम बदल गईं।

धार्मिक और आध्यात्मिक भावना गौण हो गई और हाय पैसा! हाय पैसा! बस पैसा चाहिए। उसके लिए नीति-अनीति कुछ भी देखने की तैयारी नहीं है। पैसा मिल गया तो लगता है शांति मिल गई किंतु विचार करें कि जब अमेरिका में रहने वाले भी कह रहे हैं कि गुरुदेव शांति कैसे मिले तो क्या समझ में नहीं आ जाना चाहिए कि पैसा शांति का हेतु नहीं है। आचार्य देव ने उनका दिशा-निर्देश किया। कहने का आशय है कि हम किस प्रकार से शांति की दिशा में जाना चाहते हैं?

एक प्रसंग है। एक युवा दंपति आचार्य देव के समीप पहुंचा। विवाह को कुछ ही महीने हुए थे। वे कहने लगे कि गुरुदेव शीलव्रत के पच्चक्खाण करा दीजिए। आचार्य देव ने कहा, भाई क्या बात है तो उन्होंने कहा कि हमारी भावना दीक्षा लेने की है। पंडित लालचंद जी मुणोत साक्षी के रूप में थे। आचार्य देव ने कहा कि इतनी जल्दी अभी पच्चक्खाण की कोई बात नहीं है। पच्चक्खाण कभी भी लिए जा सकते हैं। आचार्य देव को लगा कि आखिर बात क्या है? फिर उन्होंने विदुषी महासती नानू कंवर जी म.सा. से कहा कि आप बहन से जानकारी करो कि राज क्या है? किस कारण से इनकी मानसिकता पच्चक्खाण की बनी हुई है? आचार्य देव ने उस दंपति से कहा कि पहले आप ज्ञान-ध्यान सीखिए। उसमें देखिए कि कैसे क्या कुछ होता है? पच्चक्खाण की और दीक्षा की बात भी आगे हो पाएगी।

धोका जी, सुगनचंद जी धोका, वे दंपति कौन थे? आज जो धर्मेश मुनि जी म.सा. और जयश्री म.सा. हैं, वे ही थे। उस समय वे मुनि नहीं

बने थे, दीक्षा नहीं ली थी। राजनांदगांव की यह घटना है। उन्होंने कहा कि वे शीलव्रत का पच्चक्खाण करना चाह रहे हैं। उस पर गुरुदेव ने विचार किया कि कारण क्या है? अभी तो कुछ महीने हुए शादी को और अभी यह शीलव्रत पच्चक्खाण लेने की बात क्यों कर रहे हैं। वहां पर भी थोड़ी बात समझने की होती है। फिर उन्होंने नानू कंवर जी म.सा. से बात कही। नानू कंवर जी ने बातचीत करते हुए सारी स्थिति को समझने का प्रयत्न किया फिर उन्होंने आकर गुरुदेव से बताया कि किस प्रकार से उनकी विचारधारा बनी?

धर्मप्रकाश जी। हां पहले धर्मप्रकाश जी नाम था, बाद में धर्मेश मुनि जी नाम हुआ। उनकी पहली पत्नी का देहवसान हो गया था। दीक्षा की बात कही तो घर वाले नहीं माने। दूसरी शादी हुई तो उन्होंने उस बहन से बात कही कि मेरी दीक्षा लेने की भावना थी। जयश्री जी ने कहा, दीक्षा लेने की मेरी भी भावना था। मैं भी चाहती थी कि दीक्षा लूं किंतु घर वालों के भय से, घर वालों के डर की वजह से मैं अपनी भावना व्यक्त नहीं कर पाई। उन्होंने कहा तो फिर अब क्या सोचना है? चलो अभी चलते हैं गुरुदेव के पास। वे गुरुदेव के पास आए और शीलव्रत व दीक्षा लेने की प्रतिज्ञा की बात कही, किंतु गुरुदेव ने अपने फर्ज को निभाया कि आखिर क्या कारण है? जब उनको ज्ञात हो गया तो उनको दीक्षा भी दे दी। आज शासन की प्रभावना में लगे हुए हैं। कहने का आशय कि कहीं अनीति का मार्ग नहीं अपनाया जाए, कहीं गलत मार्ग नहीं अपनाया जाए। गलत रास्ता न चुना जाए, इसके लिए हमारी तत्परता होनी चाहिए।

उधर आप देख रहे हैं कि तपोधर्मी गुलाब मुनि जी म.सा. के संथारा-संलेखना का आज 28वां दिन है। मासखमण के निकट पहुंच रहे हैं। संथारा-संलेखना का 28वां दिन हो गया है। बीच में कई बार चौविहार कर लिया, कई बार तिविहार कर लिया। चलते रहे, चलते रहे हैं। अभी भी अपनी शांत मुद्रा से, शांत भाव से हैं। कोई हो-हल्ला नहीं। एकदम शांत। मुझे कहने की कोई जरूरत ही नहीं है क्योंकि यहां बैठने वालों में बहुतों ने दर्शन किए। लोग आते रहते हैं, दर्शन करते हैं। उन्होंने स्वयं अनुभव किया कि किस प्रकार से शांत मुद्रा से बैठे हैं? न कोई मोह, न कोई ममत्व। परिवार वाले एक बार जब आए तो लिखकर इतना बताया कि मोह मत बढ़ाओ। मोह को बढ़ने मत दो। ऐसी प्रेरणा दी। उसके बाद परिवार वाले भाई और अन्य कोई बाहर

से ही दर्शन कर लेते हैं। ज्यादा बोलने-समझने की बात नहीं रहती है। हम भी विचार करें कि यह वृत्ति कैसे बनी? यह अवस्था कैसे आई? हमारे जैसे वे भी इनसान हैं किंतु भावनाओं का प्रभाव, विचारों का प्रभाव, हमारी वृत्ति बदल जाती है तो ये निर्वेद की स्थितियां अपने आप हो जाती हैं। उसको निर्वेद के लिए विशेष कुछ करना नहीं पड़ता है।

रावण और विभीषण की बात हो रही थी। विभीषण रावण के पक्ष में नहीं बना। विभीषण वहां से हटे और राम के पास आये। राम की संगति से उनमें वैसे ही संस्कार बने और वे लंका के राजा बना दिये गये। मेरे कहने का आशय यह है कि जैसी हमारी वृत्ति होती है, उस प्रकार से हमारी विचारधारा चलती जाती है। हम दशहरे के प्रसंग से जीवन में बदलाव लाने का प्रयत्न करें। केवल रावण का वध कर देने से हमारा कार्य पूरा नहीं हो जाएगा। आज जिस-जिस रूप में रावण की व्याख्याएं हो रही हैं, रावण के जन्म हो रहे हैं, उन सारी स्थितियों को समझकर हमें नैतिकता की दिशा में कुछ करने के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। यदि ये प्रयत्न करेंगे तो सच्चे मायने में हम अपना कल्याण करेंगे। हम अपने कल्याण पथ पर तो बढ़ेंगे ही परिवार और समाज को सही दिशा दिखाकर सही दिशा में गति करवाने वाले बनेंगे।

इतना ही कहते हुए विराम।

08 अक्टूबर, 2019

4

उपदेश के तीन तत्त्व

शांति जिन एक मुज विनति...

एक प्रश्न है कि उपदेश किसको दिया जाना चाहिए?

इसके बहुत-सारे उत्तर आ सकते हैं। एक उत्तर तो बहुत स्पष्ट है कि पात्र को उपदेश दिया जाना चाहिए। जो उपदेश के अभिमुख हो उसे उपदेश देना चाहिए। उपदेश देने में न जाति की बात है, न पार्टी की बात है और न ही उम्र की बात है। बात है व्यक्ति की पात्रता की। व्यक्ति की पात्रता होनी चाहिए और उपदेश के अभिमुख होना चाहिए। अभिमुख का मतलब है कि सुनने की तैयारी होनी चाहिए। उपदेश लेने का मूड होना चाहिए। उपदेश देने वाला उपदेश दे और सुनने वाले का ध्यान दूसरी तरफ रहे तो कारगर नहीं होगा। इसलिए, उपदेश के लिए पात्रता जितनी जरूरी है, उतनी ही अभिमुखता आवश्यक है। सन्मुखता आवश्यक है कि वह उपदेश के अभिमुख हो। उपदेश ग्रहण करने के लिए अपनी तैयारी हो।

आगमों में इस विषय की सुंदर व्याख्या देखने में आती है। वहां बताया गया है कि गुरु महाराज जब शिष्य को उपदेश देने के लिए तैयार होते हैं तब पहले उसकी अभिमुखता को लक्षित करते हैं। वे कहते है– सुयं मे आउसेणं तेणं भगवया एवमक्खायं...'हे आयुष्मान्!' का संबोधन करते हुए उसको अभिमुख करते हैं। सुनने की दिशा में तैयार करते हैं कि वह सुने। उसमें पात्रता है किंतु अभिमुखता के लिए यह कथन किया गया कि वह अभिमुख बन जाए। जब तक अभिमुख नहीं बनेगा, वह सूत्र ग्रहण करने में समर्थ नहीं होगा।

इंद्रभूति गौतम भगवान महावीर के चरणों में पहुंचे। वे शिष्य बनने के लिए नहीं पहुंचे, उपदेश सुनने के लिए नहीं पहुंचे। उनकी भावना थी

शास्त्रार्थ करके भगवान महावीर पर विजय प्राप्त करने की। भगवान महावीर ने सबसे पहले काम किया अभिमुखता का। भगवान ने कहा– इंद्रभूति गौतम! इन्द्रभूति गौतम ने अपना नाम सुना और वह भी बड़े अपनत्व से, तो भौचक्का रह गये। इन्द्रभूति वाद-विवाद की सारी बात भूल गए। उनका सारा ध्यान भगवान की ओर आकर्षित हो गया। वे श्रोता बन गये। सुनने के लिए तैयार हो गए। अभिमुख हो गए। तब भगवान महावीर ने कहा कि तुम इतने विद्वान् हो, पर आत्मा के विषय में संशय कर रहे हो। आत्मा के विषय में कनफ्यूजन में पड़े हो? इतना सुनने के साथ ही उनके सारे शास्त्रार्थ खत्म हो गए। अब कुछ बचा ही नहीं है। भीतर जो चीज पड़ी हुई थी, जो गांठ थी, जो संशय था, उसी को भगवान महावीर ने पकड़ लिया।

हम अपनी भाषा में बोलें तो दुखती रग। दुखती रग पर हाथ पड़ते ही विश्वास एकदम पक्का हो गया। हमारी बीमारी को डॉक्टर केवल यूं कहे कि ये है आपकी बीमारी तो हमारा मन उसके लिए तय कर लेता है कि डॉक्टर एकदम बढ़िया है। नीम हकीम भी दुखती रग को पकड़ ले तो आदमी समझ लेता है कि ये डॉक्टर एकदम सही है। हमारी दुखती रग को इसने एक बार में पकड़ लिया है। गौतम अभिमुख हो गये, दीक्षित हो गये, चरणों का आश्रय प्राप्त कर लिया।

आचारांग सूत्र में एक सूत्र आया है– जहा पुण्णस्स कत्थइ तहा तुच्छस्स कत्थइ, जहा तुच्छस्स कत्थइ तहा पुण्णस्स कत्थइ। अर्थात् पुण्यवान व्यक्ति को जैसा उपदेश दिया जाए, वैसा ही उपदेश सामान्य व्यक्ति को भी दिया जाए। सामान्य व्यक्ति को जैसा उपदेश दिया जाए वैसा ही उपदेश पुण्यवान व्यक्ति को भी दिया जाए। उपदेश में भेद नहीं होना चाहिए। ऐसा नहीं होता कि बड़ा राजा आ गया तो उसको कुछ अलग उपदेश दिया जाए और सामान्य व्यक्ति आ गया तो कुछ अलग उपदेश दिया जाए। उपदेश का विषय एक ही होना चाहिए। वह होना चाहिए– संवेग और निर्वेद का उपदेश। संसार से विरक्ति का उपदेश। साधु संसार में फंसने का उपदेश दे या संसार से निकलने का? सभा में बैठे लोग बोलते हैं– "संसार से निकलने का उपदेश दें।"

अब बात थोड़ी समझ में आ रही है कि संसार से निकलने का उपदेश दे। कौन निकलेगा और कौन नहीं निकलेगा, इसकी चिंता नहीं, इसकी टेंशन नहीं, इसका तनाव नहीं। जो भी हलुकर्मी होगा, उसको लगेगी बात। स्विच

लूज नहीं है तो एक बार दबाने से लाइट आ जाए और स्विच लूज हो गया है तो मेरे खयाल से कई बार दबाने पर वह प्रकाश देने वाला होता है। लाइट जलाने वाला होता है। अब तो लोग कम रखते हैं। पहले ये रोडलाइट्स इतनी नहीं थीं। कहीं-कहीं बड़े शहरों में हो जाती थी, छोटे गांवों में होना मुश्किल था। रात्रि के समय लोग निकलते तो टॉर्च हाथ में रखते और वह टॉर्च भी कभी रंग दिखा देती। कभी जल जाती तो जल जाती, नहीं तो उसको हिलाना पड़ता। उसको हिला-हिलाकर, झटका लगाकर जगाना पड़ता तब उसका स्विच ऑन होता और उसमें प्रकाश आता। इसका मतलब है कि कहीं थोड़ा लूज है, जिसके कारण एक झटके से प्रकाश नहीं होता। पहले के जमाने में डीजल की गाड़ियां रात को ठंडी हो जाती तो सुबह उनको धक्का लगाना पड़ता था। रास्ते पर कहीं रुक जाती तो नीचे उतरकर धक्का लगाना पड़ता। धक्का लगाते तो इंजन गर्म होता और स्टार्ट होता था। हमने ये बातें देखी हैं। आप लोगों ने भी देखी होंगी। हो सकता है कि छोटे बच्चों ने नहीं देखी होगी क्योंकि अब तो सेल्फ स्टार्ट, रिमोट से गाड़ी चालू हो जाती है। अब धक्का लगाने का काम ही कहां है?

बात मैं बता रहा हूं कि उसका स्विच यदि ठीक है तो उसमें जल्दी बोध प्राप्त होगा। बोध शीघ्र पैदा होगा। पर स्विच ठीक नहीं है तो आज नहीं तो कल होगा, कल नहीं तो परसों होगा। धीरे-धीरे होगा। लूज स्विच वाला भी धीरे-धीरे रोशनी देने वाला बन जाता है। इसलिए, दो स्थितियां देखनी चाहिए कि पात्र है, अभिमुख है तो उसको उपदेश दिया जाए।

बालक के रूप में एवंता कुमार आए तो भगवान ने उपदेश दिया और विद्वान् के रूप में इंद्रभूति आए तो भगवान ने उपदेश दिया। ऐसा नहीं कि सिर्फ राजकुमारों और विद्वानों को ही उपदेश दिया हो। लकड़ियां काटकर जीवन-यापन करने वाले एक लकड़हारा को भी भगवान ने उपदेश दिया और डेली (रोजाना) सात व्यक्तियों को मौत के घाट उतारने वाले, 1141 व्यक्तियों की घात कर चुके अर्जुन माली के पहुंचने पर भगवान ने उसे भी उपदेश दिया। ऐसा नहीं कि 'अरे! अरे! हट-हट, कहां से आ गया? सभा में नहीं आना।' भगवान ने ऐसा कोई भेद नहीं किया। भगवान ने ऐसा भेद किया था क्या? ऐसा कोई भेद नहीं किया था। इसलिए भगवान कहते हैं कि हो सकता है कि तुम्हारी निगाह में व्यक्ति पापी हो, किंतु वह सदा पापी रहने वाला नहीं है। हिंसक व्यक्ति सदा हिंसक ही रहेगा, यह जरूरी नहीं है।

चोरों में धुरंधर माना जाने वाला रोहिणेय चोर भी भगवान के पास गया तो भगवान ने उसे भी उपदेश दिया।

भगवान के पास कोई आ जाए तो भगवान उसके उपादान को देखते हैं। उसके भीतर वह चीज है, जिसमें वह प्रकट हो सकता है। मिट्टी को कुंभकार जानता है कि यह घड़ा बनाने योग्य मिट्टी है। कुंभकार रेती में हाथ नहीं डालेगा। कुंभकार कौन-सी मिट्टी में हाथ डालता है? कुंभकार उस मिट्टी में हाथ डालता है, जिससे घड़ा बन सकता है। वैसी मिट्टी में ही वह हाथ डालता है क्योंकि वह जानता है कि यह मिट्टी घड़ा बनाने लायक है। हरेक रेती घड़े बनाने में समर्थ नहीं है। किसी को आर.सी.सी. का मकान खड़ा करना है तो वह काली मिट्टी में हाथ नहीं डालेगा। वह सीमेंट में काली मिट्टी नहीं, बल्कि बजरी मिलाएगा। ऐसा नहीं है कि मिट्टी ही मिलानी है तो कोई भी मिट्टी मिला दे। मिट्टी मिट्टी है पर हर किसी मिट्टी को मिलाने से काम नहीं चलता है।

वैसे ही भगवान उनके उपादान को देखते हैं। जिसका उपादान प्रखर हो उसका बोध जाग्रत् हो जाता है। इससे व्यक्ति बदला जा सकता है। व्यक्ति बदल सकता है। पापी भी धर्मी बन सकता है। हिंसक भी अहिंसक बन सकता है। धर्मात्मा भी पापात्मा बन सकता है। बन सकता है या नहीं? बन सकता है। पापी अहिंसक बन सकता है और अहिंसक, धर्मात्मा भी क्रूर हो सकता है। आज कोमल है किंतु परिस्थितियां कभी उसको क्रूर भी बना सकती हैं। ऐसे बहुत सारे प्रसंग हमारे सामने हैं। ऐसे बहुत सारे उदाहरण हमारे सामने मौजूद हैं, किंतु अभी एक ही विषय पर चलना है। उपदेश का विषय, उपदेश की विषय-वस्तु संवेगात्मक और निर्वेद होनी चाहिए। संवेग और निर्वेद उस तथ्य का नाम है, जो संसार सागर से तिराने वाली नौका है।

समुद्र से तिराने वाली नौका होती है। नदी के इस पार से उस पार ले जाने वाली नौका होती है। नौका पानी पर तैरते-तैरते व्यक्ति को दूसरे किनारे पहुंचा देती है। वैसे ही संसार सागर से तिराने वाली नौका संवेग और निर्वेद हैं। यह नौका यदि बनी रहेगी, इस नौका पर हम आरूढ़ रहेंगे तो संसार सागर में डूबने का काम नहीं होगा। बहुत से गुरुओं ने उपदेश दिए होंगे किंतु तीर्थंकरों का उपदेश संवेग और निर्वेद का उपदेश है।

बी.एम.डब्ल्यू. क्या होती है? कीमती गाड़ी है ना? क्या नाम है? यही नाम है ना? सभा में बैठे लोग बोलते हैं—बी.एम.डब्ल्यू. नाम है। मेरे को नाम कम ध्यान में है। सही नाम क्या है, पता नहीं। इसलिए पूछ लेता हूं। एक

आदमी गाड़ियां देखने गया। एक आदमी उसको उन गाड़ियों के गुण-दोष बता रहा है, उसने उसके गुण-दोष को जाना कि यह गाड़ी ऐसी है, वैसी है। इसमें ये-ये गुण हैं, इसमें ये गुण हैं, उसमें वो गुण हैं। इसमें ऐसा होता है, उसमें वैसा होता है। इस गाड़ी में ये खासियत है, इस गाड़ी में ऐसी खासियत है। उस व्यक्ति ने गाड़ियों के गुण-दोष जाने। उसको बी.एम.डब्ल्यू. गाड़ी पसंद आ गई। आज बहुत से लोग क्वॉलिटी वाली चीज को ज्यादा पसंद करते हैं। 5 पैसे ज्यादा लगें तो कोई बात नहीं है, किंतु चीज क्वॉलिटी वाली होनी चाहिए। लेकिन, जिसको क्वॉलिटी नहीं क्वांटिटी चाहिए, वह सब्जी मंडी में सुबह सब्जी लेने नहीं जाएगा। वह शाम को सब्जी लेने के लिए जाएगा। सुबह नहीं जाकर शाम को जाता है। शाम को क्या मिल जाता है? कम पैसों में ज्यादा क्वांटिटी मिल जाती है। क्वॉलिटी मिले या नहीं मिले, किंतु क्वांटिटी जरूर मिल जाती है। क्वॉलिटी चाहने वाला कब जाता है और क्वांटिटी चाहने वाला कब जायेगा? क्वॉलिटी वाला सुबह जल्दी जाता है। उस समय उसको ताजी सब्जियां मिलती हैं। एकदम फ्रेश सब्जियां मिलती हैं। जो क्वॉलिटी चाहता है वह सुबह जल्दी जाएगा और क्वांटिटी चाहने वाला शाम को जाता है। तब सब हाथ डालकर छांटकर लेते-लेते उसमें से छंटनी करके ले जाते हैं। पीछे छंटी हुई सब्जी रह जाती है तो उसको कम पैसे में ज्यादा क्वांटिटी मिल जाती है। क्वांटिटी वाली सब्जी शाम को मिलती है और क्वॉलिटी वाली सुबह मिलती है। क्वांटिटी वाला शाम को जाता है और क्वॉलिटी वाला सुबह जाता है। ऐसे भी लोग होते हैं, किंतु अधिक लोग क्वॉलिटी चाहने वाले होते हैं, वे क्वॉलिटी चाहते हैं।

जिसको क्वॉलिटी पसंद है, वह संवेग के उपदेश को पसंद करेगा। संसार में धन के उपदेश देने वाले और धन कमाने के गुर बताने वाले बहुत हैं। लोगों को कैसे परास्त करना है, वैसे उपदेश देने वाले, वैसे गुर बताने वाले गुरु भी बहुत हैं। लोगों को कैसे ठगना है, ये तरीके बताने वाले भी बहुत हैं। अन्य-अन्य बहुत सारे तरीके बताने वाले हैं किंतु संसार में डूबते हुए को तिरना कैसे है, संसार से पार कैसे पाना है, इसका उपदेश, इसका गुर बताने वाले विरले ही होते हैं। वे तीर्थंकर होते हैं या तीर्थंकर का उपदेश होता है। उसके माध्यम से हम उस विषय को जान सकते हैं और उससे तिर सकते हैं।

एक उदाहरण है, एक चोर पकड़ा गया। राजा ने उसको दंड दिया। चोरी पकड़ी गई तो जो भी न्याय-प्रक्रिया होती है, वह सारी न्याय-प्रक्रिया

अपनाते हुए राजा ने उसको मृत्युदंड दिया। राजा के चार रानियां थीं और चारों रानियों को राजा का वरदान मिला हुआ था। राजा ने कहा, मांगो जो मांगना है। रानियों ने कहा, नाथ! अभी स्टॉक में रखिए, खजाने में रखिए। जिस समय जरूरत पड़ेगी, उस समय मांग लेंगी। एक महारानी को मालूम पड़ा कि ऐसे अपराधी को दंड मिला है। उस रानी का मन हुआ कि एक दिन उस अपराधी की मैं खातिरदारी करूं। उसने सम्राट् से कहा कि मैं आज आपसे वरदान लेने के लिए आई हूं। राजा ने कहा, आपका वरदान आपके हाथ में है, आपके पास सुरक्षित है, जो मांगना चाहो मांगो। रानी ने कहा कि जिस चोर को फांसी की सजा दी है, मृत्युदंड दिया है, उस अपराधी को एक दिन के लिए मैं बरी कराना चाहती हूं और उसको अपने घर आमंत्रित करके खाना खिलाना चाहती हूं, पुरस्कृत करना चाहती हूं। राजा ने कहा, तथास्तु! तुम जैसा चाहती हो वैसा ही होगा।

महारानी ने चोर को बुलाया। उसको नहलाया, धुलाया, बढ़िया सुंदर वस्त्र पहनाए और बढ़िया सुगंधित षट्रस भोजन कराया। भोजन कराने के उपरांत एक हजार स्वर्ण मुद्राएं दीं। दूसरी महारानी को मालूम पड़ा। देखा-देखी तो सब जगह ही होती है। इसका नाम क्यों हो जाए? इसका नाम सबसे ऊपर क्यों आ जाए? दूसरी महारानी भी राजा के पास पहुंचकर कहती है कि मुझे आपने जो वरदान दिया था, उसको अभी लेना चाहती हूं। राजा ने कहा कि बोलो क्या चाहिए? क्या चाह रही हो? दूसरी महारानी भी वही वरदान मांगती है कि मृत्युदंड की सजा प्राप्त उस चोर को मैं एक दिन अपने घर आमंत्रित करना चाहती हूं। राजा ने कहा तथास्तु! तुम जैसा चाहती हो, वैसा ही होगा। दूसरे दिन उस महारानी ने उस अपराधी को आमंत्रित किया। उसे बढ़िया कपड़े और आभूषण पहनाए। बहुत बढ़िया खाना खिलाया और साथ में दस हजार स्वर्णमुद्राएं दी गईं।

मैं तुमसे कम नहीं हूं। एक रानी से दूसरी रानी को अपना वर्चस्व ज्यादा दिखाना था। अपने आपको दूसरे से बढ़िया दिखाना आम बात है। यह कुछ लोगों का स्वभाव होता है कि मैं उससे सुपर लगूं। मैं उससे सुपर हूं। सुपर कब लगेगा? पहली महारानी ने उसे एक हजार स्वर्ण मुद्राएं दीं, तो दूसरी महारानी ने दस हजार स्वर्ण मुद्राएं दीं। पहली महारानी ने खाली कपड़े ही पहनाए, मैंने उसे कपड़ों के साथ आभूषण भी पहनाए। उसने अमुक-अमुक भोजन कराया। उसने दो मिठाई खिलाई तो मैंने उसको चार मिठाई खिलाई,

ताकि वो कहे कि महारानी तो महारानी ही हैं। महारानी बहुत दिलदार हैं। उस महारानी के गुणगाान हों इसलिए उसने पहली महारानी से ज्यादा किया।

तीसरी महारानी को मालूम पड़ा तो वह कब चूकने वाली थी। उसने भी वही वरदान मांग लिया। उसने भी उस चोर को घर बुलाया। उसे बढ़िया भोजन खिलाया, वस्त्र पहनाए और जो कुछ किया जाना था किया। सारी चीजें करने के बाद एक लाख स्वर्ण मुद्राएं दीं।

चौथी महारानी को जब मालूम पड़ा तो वह भी पहुंच गई राजा के पास। राजा ने कहा कि महारानी तुम? कहा कि नाथ मैं भी वरदान लेने आई हूं। राजा ने कहा कि ले लो तुम भी। क्या लेना तुम्हें, बोलो? उसने कहा कि जिस अपराधी को आपने दंड दिया है, जिसे मृत्यु दंड दिया है, मैं उससे बात करके उसको अपने घर आमंत्रित करना चाहती हूं और आपसे निवेदन करती हूं कि उसके मृत्युदंड की सजा माफ कर दी जाए। रानी ने चोर को घर पर आमंत्रित किया। जो रोजाना रूटीन का खाना था, उसको खिलाया। विशेष कुछ भी नहीं किया। फिर उससे बात की कि देख भाई, जिंदगी बचेगी तो लाख बचेंगे और जिंदगी नहीं होगी तो क्या होगा? यदि आगे से तुम ऐसा धंधा नहीं करो, ऐसा कृत्य नहीं करो, मनुष्य जीवन सही दिशा में जीना चाहते हो तो तुम्हें राजा का वह आदेश मैं देने को तैयार हूं, जिसमें तुझे जीवनदान दिया गया है। वह चोर महारानी के पैरों में पड़ गया। महारानी से कहा कि मैं शपथ लेता हूं, प्रतिज्ञा लेता हूं कि फिर मैं कभी ऐसा कोई काम नहीं करूंगा, कभी भी नहीं करूंगा। महारानी ने मृत्युदंड से बरी होने का राजा का संदेश चोर को दे दिया। चोर बरी हो गया।

चोर बरी हुआ तो इधर-उधर खुसर-फुसर चालू हो गई। बातें होने लग गईं कि महारानी तो कंजूस निकली। बेचारे को न बढ़िया खाना खिलाया, न स्वर्ण मुद्राएं दी, न वस्त्र दिये और न ही कोई आभूषण दिए। महारानियों में भी बातें शुरू हो गईं कि उसने तो कुछ भी नहीं किया है। उस महारानी ने कहा कि मैंने ठीक किया। पहली महारानी ने कहा कि मैंने पैसे और स्वर्ण मुद्राएं कम दीं तो क्या हुआ, कम से कम बढ़िया तो किया। दूसरी ने कहा, मैंने आभूषण भी दिये और स्वर्ण मुद्राएं भी दीं, मैंने तुम्हारे से ज्यादा उपकार किया। तीसरी ने कहा कि नहीं-नहीं, मैंने तुम दोनों से ज्यादा किया और साथ में एक लाख स्वर्ण मुद्राएं दीं। बहस होने लग गई कि बढ़िया किसने

किया। सब रानियां राजा के पास पहुंच गईं कि आप निर्णय कीजिए। राजा से पूछा गया कि किसने बढ़िया किया? उस चोर पर किसने भला किया? किसने सबसे ज्यादा उस चोर का उपकार किया है? राजा ने कहा कि मुझसे क्या पूछना? उसी को बुला लो। वही निर्णय दे देगा। वही ज्यादा अच्छे से निर्णय दे सकता है क्योंकि वह भुक्तभोगी है। उसको क्या लगा, सही निर्णय वही देगा।

उसको बुलाकर पूछा गया कि बताओ, सबसे ज्यादा किस महारानी ने आप पर उपकार किया? उसने कहा कि महाराज! सबका ही उपकार है। महारानियों ने कहा, नहीं, ठीक-ठीक बताओ। उसने कहा, राजन्! सभी का उपकार है। मैं किसी के उपकार को नहीं भूल सकता हूं किंतु चौथी महारानी ने जो उपकार किया है, उसको तो मैं कभी भुला ही नहीं सकता हूं। अन्य रानियों ने कहा कि उसने कुछ भी तो नहीं दिया! स्वर्ण मुद्राएं नहीं दीं, वस्त्र नहीं दिये, कुछ भी तो नहीं दिया। क्या दिया उसने? उसने कहा, जो चौथी महारानी ने दिया वह किसी ने नहीं दिया। पैसे तो आदमी कभी भी कमा लेगा, कोई भी कमा लेगा, किंतु जीवन होगा तभी कमाएगा। आज लाख स्वर्ण मुद्राएं दे दीं और दूसरे दिन फांसी पर लटका दिया तो स्वर्ण मुद्राएं किस काम आएंगी? आभूषण और स्वर्ण मुद्राएं क्या काम आएंगी? न तो उनको चाट सकेगा और न ही उनको खा सकेगा। क्या काम आएंगी? भोजन कितना ही बढ़िया करा दो। बढ़िया भोजन परोसा हुआ है और ऊपर तलवार लटक रही है कि 'ए, ए, ए, यह गिरी, यह गिरी' तो वह भोजन कितना भाएगा? कितना गले के नीचे उतरेगा? उस खाने में कितनी रुचि रहेगी?

मृत्युदंड की सजा हट गई। उसके बाद सामान्य खाना भी मधुर लगेगा या नहीं लगेगा? निर्णय हो गया, स्पष्ट हो गया। चौथी महारानी ने मृत्यदंड से बचाया तो वह उन महारानियों में सबसे ज्यादा उपकारी थी। हालांकि यह प्रसंग, यह कथन, यह कहानी अभयदान को पुष्ट करने के लिए दी गई है, किंतु मैं इसका दूसरा प्रयोग कर रहा हूं। मैं ऐसा प्रयोग कर रहा हूं, जैसे वह मृत्युदंड से बरी हुआ, वैसे ही संवेग और निर्वेद से संसार से बरी हो सकते हैं। इसलिए सबसे उत्तम उपेदश किसका होगा? सबसे बढ़िया और उत्तम उपदेश कौन-सा होगा? सबसे बढ़िया उपदेश संवेग और निर्वेद का होगा। हम पैसा कमाने का गुर सीखते हैं, क्या वह ज्यादा उचित है? पुण्य कमाने का उपदेश

सुनना उत्तम है या मोक्ष जाने की बात करना? (प्रतिध्वनि– मोक्ष जाने की बात करना उत्तम होगा।)

मुक्ति जाने का एक ही मार्ग है, संवेग और निर्वेद। बिना संवेग और निर्वेद के कोई भी जीव मोक्ष नहीं जा पाएगा और न ही मुक्ति पाएगा। चाहे वह आज मोक्ष में जाए या कल। मरु देवी माता की तरह एकदम त्वरित चला जाए या भरत चक्रवर्ती की तरह चला जाए, किंतु संवेग की नौका पर बैठे बिना उसको मुक्ति नहीं मिलेगी। संवेग की नौका पर उसको आरूढ़ होना ही पड़ेगा। वह संवेग की नौका पर बैठेगा तभी उसको मुक्ति मिलेगी। इसके बिना मुक्ति नहीं मिलेगी। नौका पर बैठकर उसे जितनी चलाएगा उतनी जल्दी मुक्ति के निकट पहुंचेगा।

मरु देवी माता की नौका इतनी तेज चली कि हाथी के हौदे पर ही उनको केवलज्ञान हो गया और उनकी मुक्ति हो गई। भरत चक्रवर्ती कहां थे? भरत चक्रवर्ती कहां पर थे? अरिसा भवन में। अरिसा भवन मतलब, जहां शरीर की सजावट होती है। जिसको आज ब्यूटी पॉर्लर कहते हैं। कितने वर्षों से ये सब चालू हो गए? ओम जी, आपने जब शादी की, जब विवाह किया तब ब्यूटी पार्लर में गए थे क्या? आप कह रहे हो कि उस जमाने में ब्यूटी पार्लर नहीं था। उस जमाने में नहीं था। यदि होता और जाते तो थोड़े सुंदर दिखते। ब्यूटी पार्लर में जाकर सुंदर दिख भी जाते तो क्या होता? पत्नी तो एक ही मिलती। दो तो मिलती नहीं। ब्यूटी पार्लर में जाने वाले को दो पत्नियां मिलती हैं क्या? कुछ लोग कहेंगे कि एक को ही नहीं संभाल पाते हैं, दो का क्या करेंगे? अरे! खुसर-फुसर क्यों कर रहे हो? खुसर-फुसर करके बोल रहे हो कि एक ही नहीं संभले।

गुरु महाराज फरमाया करते थे कि आदमी मस्ती से भांग पी लेता है। कहता है कि क्या है शरबत है, लस्सी है किंतु जब उसको भांग की लहर आने लगती है तो झेलना बड़ा मुश्किल होता है। शादी करने में भी भांग के नशा जैसा होता है। साल-दो साल निकलते हैं, उसके बाद पत्नी के भाव मालूम पड़ने लग जाते हैं, दृष्टि मालूम पड़ती है। फिर कहते हैं कि अरे! कौन-से रास्ते पर आ गया? अब आ गए तो आ गए। अब फंस गए तो फंस गए। हालत यह हो जाती है कि न तो निकल पाते हैं और न ही पूरी तरह अंदर घुस पाते हैं। द्वंद्व में फंस जाते हैं। फिर 'माया मिली, न राम' वाली हालत

हो जाती है। जीवन में न संसार का सुख मिला और न ही साधु जीवन का सुख मिला। दोनों से वंचित रह गए और फिर कभी कुछ, कभी कुछ तनाव, कभी कुछ टेंशन, कभी कुछ लड़ाई, कभी कुछ झगड़ा। बस! जिंदगी चल रही है। चल रही है जैसे-तैसे करके। फिर कहते हैं कि हे भगवान! साता से पहुंचा देना। कहां तक? ठिकाने तक, मौत तक, श्मशान तक सही-सलामत पहुंचा देना। बीच में कहीं इज्जत नहीं चली जाए। इज्जत को देखते, मरते-डूबते बचा लेना।

हमने जिंदगी का क्या आनन्द लिया? गृहस्थ जीवन में रहकर भी जीवन का क्या आनन्द लिया? शादी नहीं की तब आनन्द में थे या शादी के बाद आनन्द में हैं? पहले ज्यादा आनन्द में रहे या शादी के बाद ज्यादा आनन्द आया। कोई-कोई बोल रहा है कि शादी से पहले आनन्द में थे। सोच-समझकर बोलना। सभी लोग सुन रहे हैं। आप लोगों की धर्मपत्नियां भी सुन रही होंगी। अब आप लोग बोल रहे हो कि जब हम अकेले में रहें तब पूछना कि आनन्द किसमें आ रहा है? सबके सामने क्यों नहीं बोल रहे हो? बोलो साहब! शादी के पहले ठीक लगा या बाद में ठीक लगा? सुभाष जी आप ही बता दो? बाद में ठीक रहा या पहले ठीक रहा? आप कहोगे कि पहले भी ठीक था और बाद में भी ठीक है।

अभय कुमार के लिए देव ने जीना भी अच्छा और मरना भी अच्छा बताया था। अभय कुमार मरे तो भी अच्छा और जीये तो भी अच्छा। मरेगा तो स्वर्गलोक में जाएगा और जीयेगा तो धर्म आराधना करता हुआ आनन्द से जीयेगा। अभी जी रहा है तो भी उसको कोई दुविधा नहीं है और मरने के बाद भी कोई दुविधा नहीं है। श्रेणिक राजा के लिए कहा था जीये तो ही अच्छा है। मरने के बाद तो यमदूत मिलेंगे। इसलिए तुम जीयो तो ही अच्छा है। तुम जीते जाओ, जीते जाओ। जीयो तब तक तो ठीक है। मरने के बाद नारक में नैरयिक बनोगे। भगवान महावीर के लिए मरना ठीक बताया क्योंकि जैसे ही यहां का समय पूरा होगा, यहां की आयुष पूरी होगी तो निर्वाण को प्राप्त करेंगे। अतः कहा गया है कि उनका मरना उत्तम है।

भगवान से एक प्रश्न पूछा गया कि भगवन्, जीव का जगना अच्छा या सोना अच्छा?

भगवान ने कहा– किसी का सोना सही है और किसी का जगना सही है?

सोना किसका सही है और जगना किसका सही है?

धर्मी पुरुष जगे तो सही है, अच्छा है और पापी आदमी सोये तो अच्छा है। पापी जग गया तो काल सौकरिक कसाई की तरह पाप उपार्जक होगा। जगा नहीं कि हिंसा चालू कर देगा। कत्लखाना चलाने वाला सोये तभी ठीक है। तब तक हिंसा रुकी हुई है। भावों की हिंसा भले ही न रुकी हो किंतु द्रव्य हिंसा रुकी हुई है। जैसे ही वह जगेगा, हिंसा चालू कर देगा। इसलिए, भगवान कहते हैं कि पापी व्यक्ति का शयन करना ही अच्छा है।

किसका बलवान् होना अच्छा है और किसका कमजोर होना अच्छा है? पापी व्यक्ति यदि बलिष्ठ होगा तो ज्यादा जीवों की घात करेगा और कम बल वाला होगा तो कम हिंसा कर पाएगा। धर्मी पुरुष यदि कमजोर होगा तो धर्म की आराधना नहीं कर पाएगा। वह जितना मजबूत होगा, जितना बलवान होगा उतना ही धर्म की आराधना कर पाएगा। बहुत स्पष्ट है कि धर्म की आराधना का पक्ष कभी भी देखेंगे, वह सच्चाई का होगा। भगवान महावीर ने यही बात बताई।

उपदेश किसको दिया जाए? इसी प्रश्न से मैंने चालू किया था कि किसको उपदेश दिया जाए? जो पात्र हो और धर्म के अभिमुख हो, किंतु अमीर-गरीब का कोई भेद नहीं होना चाहिए। पात्रता और अभिमुखता जरूरी है। ऐसे लोग ही धर्म की आराधना की दिशा में अग्रसर हो पायेंगे।

आचार्य पूज्य गुरुदेव महावीर जयंती के लिए नागदा जंक्शन (मध्यप्रदेश) में विराजे हुए थे। व्याख्यान उठने के बाद पीछे खड़े बलाई जाति के भाई सीताराम जी कहने लगे कि गुरुदेव बचाओ! कहकर वे रोने लगे। गुरुदेव ने पूछा कि क्या हो गया? बात क्या है? उन्होंने कहा कि लोग हमसे नफरत करते हैं। हमें मानवीय अधिकार नहीं मिल रहे हैं। दूसरी तरफ ईसाई और मुस्लिम हमें बड़ा सपोर्ट करते हैं। हमें सम्मान देने को तैयार हैं। हमारी एक लाख लोगों की संख्या है। हम लोगों का निर्णय है कि जिधर मुड़ेंगे, एक साथ मुड़ेंगे। गुरुदेव ने कहा, भाई तुम लोग यदि खोटे काम करना छोड़ दोगे तो सभी लोग सम्मान करेंगे। उसके बाद उन्होंने निवेदन किया कि गुरुदेव, क्या आप हमको उपदेश दे सकते हैं? आचार्य श्री ने कहा कि हमको उपदेश

देने में क्या दिक्कत है? उन्होंने कहा कि 70 गांवों के हमारे समाज के पंचों की बैठक गुराड़िया में है। वहां यदि आप उपदेश दे सकें तो हमें बहुत लाभ हो सकता है। आचार्य देव पधार गए। नागदा का व्याख्यान देने के बाद विहार किया। शाम को किसी गांव में रुके और सुबह गुराड़िया पहुंच गए। वहां उन्होंने धर्मनाथ भगवान की स्तुति करते हुए व्याख्यान दिया। आधे उपदेश में लोग खड़े हो गए और पच्चक्खाण ले लिया कि मांस नहीं खाएंगे, मटन नहीं खाएंगे, शराब नहीं पीयेंगे।

हमारे लिए गुटखा छोड़ना भी बड़ा मुश्किल होता है। हमारे लिए एक चाय छोड़ना बड़ा मुश्किल है। लोग कहते हैं कि चाय नहीं पीयें तो माथा/सिर दुखने लग जाए। चाय नहीं पीयें तो सिर दर्द करने लग जाता है। चाय के कारण न तो ठीक से एकासना कर पाते हैं, न ही कोई अन्य धर्म आराधना कर पाते हैं। लोग कहते हैं कि चाय नहीं पीवां तो माथो चढ़ जावे। उपवास हो या नहीं हो, चाय होना जरूरी है। गुटखा खाना जरूरी है। मरने के बाद में कागोल डालेंगे तो गुटखा रखना पड़ेगा। पुराने लोग तो जानते हैं कि कागोल क्या होती है। नए लोग भी कुछ-कुछ जानते होंगे? जानते हैं या नहीं जानते, मुझे पता नहीं है। मरने के बाद कागोल में क्या डालना पड़ेगा? गुटखा डालना पड़ेगा।

एक सेठ मरा। बेटे ने कहा कि मैं ये सब रूढ़िवाद की बातें नहीं मानता हूं। लोगों ने कहा कि अपनी शक्ति अनुरूप 5-10 ब्राह्मणों को तो जिमाना ही पड़ेगा, जिससे आपके पिताजी की गति सुधर जाएगी। उनकी सद्गति हो जाएगी और उनका नरक टल जाएगा। उनकी दुर्गति नहीं होगी। उनकी अच्छी गति होगी, सद्गति होगी। पंडित जी ने समझाने का काम किया। परिवार वालों ने समझाया। पंडित जी ने कहा कि यदि ब्राह्मणों को नहीं जिमाओगे तो दुर्गति हो जाएगी। सद्गति के लिए ब्राह्मणों को भोजन कराना जरूरी है। उसने कहा कि ठीक है। उसने 5-7 ब्राह्मणों को निमंत्रण दे दिया। ब्राह्मण आए, थाल पर बैठे और उसने 10-10 ग्राम अफीम की डली रख दी। कितनी? 10-10 ग्राम। कहा कि अरोगो। वे बोले कि अफीम कैसे खा सकते हैं? वह बोला पिताजी पहले अफीम खाते। अफीम खाने के बाद जब वह उग जाता, नशा चढ़ जाता तब भोजन करते थे। खाने के पाचन के लिए अफीम खाना ही होता था। इसलिए आप भी पहले अफीम खा लो, नशा चढ़

जाएगा फिर भोजन कर लेना। ठीक है ना? पंडित जी खाने के लिए बैठेंगे या भागेंगे? पंडित जी अफीम खाकर भोजन के लिए इंतजार करेंगे या रवाना होंगे? ब्राह्मणों ने कहा कि भाई ये अफीम कैसे खाएं? सेठ के पुत्र ने कहा, अफीम नहीं खा सकते तो पिताजी के लिए भोजन क्या काम का? अफीम खाए बिना पिताजी का भोजन कारगर नहीं होता है। उनको अफीम खाना ही पड़ता था, अफीम खाने के बाद वे भोजन करते थे। यदि आपको अफीम खाए बिना भोजन करा दूं तो वह बेकार ही जाएगा। वह पिताजी तक पहुंचेगा नहीं।

सारे पंडित देवता उठकर चुपचाप रवाना हो गए। अफीम खाकर कौन मरे? ये चीजें आज भी मानने वाले हैं। कहते हैं कि नहीं भाई, ये सब तो करना ही पड़ेगा। भले ही ब्राह्मण चाहे आगे जाकर उस चीज को कहीं भी डाल दें, फेंक दें लेकिन कुछ जजमान को तो देना ही पड़ेगा ताकि मरे हुए प्राणी का पेट भर जाए। ऐसी कुछ न कुछ परंपराएं रही हुई हैं। मैं यह कहता हूं कि एक गुटखा छोड़ने के लिए हम तैयार नहीं होते हैं और वे लोग पहले व्याख्यान में ही खड़े हुए। सारे लोग खड़े हो गए। एक भी बैठा नहीं रहा। सबने पच्चक्खाण ले लिया कि आज से मटन नहीं खाना, मांस नहीं खाना, शराब नहीं पीना। सबने प्रतिज्ञा ले ली। आचार्य देव ने कहा कि धर्म का पालन करने की दिशा में अभिमुख हुए हो अतः आज से स्वयं को धर्मपाल समझो। उनको धर्मपाल की संज्ञा देते हुए सभा विसर्जित हुई। तबसे उनका नाम धर्मपाल पड़ गया।

फिर गांव-गांव में आचार्यश्री का विहार चलता रहा। लगभग साढ़े तीन महीने के समय में गुरुदेव ने एक-एक गांव जाकर साढ़े सत्तरह हजार व्यक्तियों को मांस, मटन और शराब के त्याग करवाये। कितने व्यक्तियों को त्याग कराया? साढ़े सत्तरह हजार व्यक्तियों को। रतलाम चातुर्मास और इंदौर चातुर्मास के बीच के समय की यह बात है। सिर्फ 1-2 संत उनके साथ जाते थे। बाकी संत बड़े शहरों में रुक जाते। यहां पर तो रोज-रोज कहते हैं। इतनी मनुहार करनी पड़ती है कि 'संवर का ठेका, सामायिक का ठेका, प्रतिक्रमण का ठेका।' महाराज को क्या गरज पड़ी है? प्रतिक्रमण नहीं करोगे, संवर नहीं करोगे तो महाराज का क्या बिगड़ जाएगा? कौन-सा आप ये सब नहीं करोगे तो महाराज का चातुर्मास बेकार चला जाएगा? सुन रहे

हो या क्या कर रहे हो, बोलो भाई सांखला जी? आपने कितने संवर किए? चुन्नीलाल जी या क्या नाम है? कितने संवर किए आपने इस चातुर्मास में? कह रहे हैं कि 45 कर लिए। 45 कर लिए! हर साल किए या इस चातुर्मास में! कह रहे हो कि इस चातुर्मास में 45 कर लिए। कोई बात नहीं। एक-एक को खड़ा करके तो नहीं पूछ सकते हैं।

बन्धुओ! सोचें! क्यों हमें कहना पड़े? संवर करोगे तो लाभ किसको मिलेगा? भोजन करोगे तो पेट किसका भरेगा और भोजन नहीं करोगे तो नुकसान किसको होगा? नहीं करोगे तो नहीं करोगे, करना कोई जरूरी थोड़ी न है? जो भोजन करेगा, उसका पेट भरेगा। जो धार्मिक क्रियाएं करेगा उसको ही उसका लाभ मिलेगा। गुरुदेव का उन लोगों को एक उपदेश मिला और हजारों लोग त्याग-पच्चक्खाण के लिए तैयार हो गए कि मटन नहीं खाना, मांस नहीं खाना, शराब नहीं पीना। और भी कई व्यसन उन सबसे दूर हो गए। हमारे भीतर भी त्याग-पच्चक्खाण की पात्रता प्रकट होनी चाहिए।

जंबू कुमार का जीवन चारित्र बड़ा प्रेरक है। वे संवेग और निर्वेद की दिशा में गतिशील रहे। चाहे प्रभव चोर आया पास में चाहे धर्मपत्नियां। उन सबको कौन-सा उपदेश मिला? प्रभव ने चलाकर कहा था कि मेरी दो विद्याएं आप ले लो। कौन सी दो विद्याएं? एक तो ताला खोलने की, ताला तोड़ने की और दूसरी, लोगों को नींद में सुलाने की, जिससे लोग खर्राटे लेने लग जाएं। ये दो विद्याएं मेरे से ले लो और एक पैर चिपकाने की विद्या मुझे दे दो। जंबू कुमार ने कहा कि न तो मुझे तुम्हारी विद्याएं चाहिए और न ही मेरे पास कोई पैर चिपकाने की विद्या है। मैं किसी को स्तंभित करने वाला नहीं हूं। मैं तो चाहता हूं कि सभी चलें और गंतव्य तक पहुंचने का प्रयत्न करें। मैं किसी को सुलाने वाला नहीं हूं। मैं तो लोगों को जगाने के लिए तैयारी कर रहा हूं। मैं जग गया हूं तो मैं बचे हुए जीवों को भी जगाने का काम करना चाहता हूं।

दिवाली में दीया जलाते हैं लोग। कहीं-कहीं घर में जलाते हैं। ये बताओ कि कितनी माचिस लगानी पड़ती है। एक दीये को जलाकर उससे बाकी सारे दीये लगा-लगाकर जला लेते हैं। पहले एक दीया तो जलाना ही पड़ेगा। उसके बाद उसी दीये से दूसरे दीयों की बाती लगा देते हैं। लोग

कितने होशियार होते हैं? हर दीये के लिए अलग-अलग माचिस जलेगी तो इतनी माचिस जलाकर पेटी खाली नहीं करेंगे। वे एक-एक दीये को माचिस से जलाकर माचिस-पेटी खाली नहीं करेंगे। एक माचिस जलाकर इतने सारे दीये किससे जलाएंगे? उसी एक दीये से। वही बात है कि एक दीया जल गया तो वह एक दीया सारे दीयों को जला देगा।

जंबू कुमार कहते हैं कि मैं लोगों को सुलाने वाला नहीं हूं। मैं जगाने का उपक्रम करने वाला हूं। मेरा कार्य है जगाना और जो जगेगा, वह पाएगा।

सुत्योड़ा गोता खावे,
जाग्योड़ा माल उड़ावे रे...

'ये पर्व पर्युषण...' (सभा में बैठे लोग गाने लगते हैं।) कहां? कहां आए? किधर आए? वापस मनाना है क्या पर्व पर्युषण? कोई बात नहीं, वापस मना लें क्या? बोलो वापस मनाना क्या? आठ दिन पर्युषण मनाया अब वापस मनाने का मन हो तो मना लेते हैं। मन हो तो मनाएं, जबरदस्ती क्यों मनाएं? वैसे भी आगे आरोहणा शिविर का अवसर आ रहा है। जो आरोहणा शिविर में भाग लेने वाला है, वह यदि सही तरीके से भाग ले तो समझ लो कि उसके लिए पर्युषण है। उसमें भी रोज-रोज मनुहार करने वाले हैं कि रिजर्वेशन कराओ। क्या बोलते हैं उसे? रिजर्वेशन बोलते हैं या कुछ और? आप कह रहे हो कि रजिस्ट्रेशन। हां, वही, रजिस्ट्रेशन करवा लो। वह कराने की हमारी अपनी तैयारी होनी चाहिए। 'सुत्योड़ा गोता खावे और जाग्योड़ा माल उड़ावे।' सुतोड़ा रे तो पाड़ो ही जन्मे। सुतोड़ा रे भैंस नहीं जन्मे, पाड़ी नहीं जन्मे। सुतोड़ा रे तो पाड़ा ही जन्मे। एक दिन बोल गया हूं। वापस खुलासा करने की जरूरत नहीं है।

बंधुओ! उपदेश की ये तीन बातें हमारे सामने की गईं कि पहला पात्र होना चाहिए, दूसरा अभिमुख होना चाहिए और तीसरा उपदेश का विषय संवेग और निर्वेद का होना चाहिए। संसार से जो पार लगा सके, ऐसी नौका में हमें बिठाने वाला उपदेश होना चाहिए। ये तीन गुण जहां मिल जाएं फिर संसार सागर से तिरने में, संसार सागर से पार होने में कहां विलंब होने वाला है। हम अपने भीतर सबसे पहले पात्रता जाग्रत् करें। पात्र बनें, फिर अभिमुख बनें और संवेग और निर्वेद का प्रवचन सुनने की तैयारी करेंगे, हम धन्य बनेंगे।

गुलाब मुनि जी म.सा. गृहस्थी में भी संवेग और निर्वेद के झूले में स्वयं को झुलाते रहे और उसी दिशा में आगे बढ़ते रहे हैं। आज भी संवेग और निर्वेद के भावों में रमण कर रहे हैं। आज उनके संथारा को 29 दिन हो गए हैं। चल रहे हैं। अब आगे देखते हैं, क्या होता है। कल भी बात चली थी। बीच में भी चली थी कि जब तक उनका संथारा चलता रहेगा तब तक 5-5 सामायिक की आराधना रोज करनी है। जो कल वंचित रह गए वे अपना मन आज बना सकते हैं। जब तक संथारा चलेगा तब तक 5-5 सामायिक रोज करनी है। कोई भी यह नियम कर सकता है। आगे और करें तो आपकी मरजी है। इतना ही कहते हुए विराम।

9 अक्टूबर, 2019

5

दिशा-निर्देशक यंत्र

जय, जय, जय भगवान, अजर, अमर...

नवदीक्षित महासतियों का छेदोस्थापनीय चारित्र पर आरोहण हुआ। बड़ी दीक्षा के नाम से जिसकी प्रसिद्धि है, वह बड़ी दीक्षा संपन्न हुई। हम पहले सुन ही चुके हैं कि ये व्यवस्था प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के शासन में लागू होती है। शेष 22 तीर्थंकरों के शासन में एक सामायिक चारित्र ही जीवनपर्यन्त दिया जाता है। छेदोस्थापनीय चारित्र का अर्थ यह नहीं है कि पीछे की दीक्षा का कोई लाभ नहीं मिला। वह समाप्त हो गयी, वह व्यर्थ चली गई। वह व्यर्थ नहीं गई है, वह भी कार्यसिद्ध हुई है। उसका भी लाभ आत्मा को मिलता है। उसकी परिपालना भी आत्मा के लिए हितकर हुई है क्योंकि वह भी चारित्र ही था। कालमान छेदोस्थापनीय भी चारित्र ही है। अब से इसका कालमान गिना जाएगा।

दशवैकालिक सूत्र के जिन गाथाओं के माध्यम से छेदोस्थापनीय का चारित्र दिया जाता है, उनमें उसका सार-संक्षेप में रहा हुआ है। पहले अध्ययन में धर्म के स्वरूप को बताते हुए मुनि जीवन के प्रथम अंग, प्रथम चर्या का दिग्दर्शन कराया गया कि मुनि को सर्वथा प्रकार के आरंभ से दूर हो जाना चाहिए। अब उसे अपने अहंकार को गलाकर भिक्षा-चर्या के लिए प्रयत्न करना होगा। भिक्षा-चर्या के लिए जाने पर यह ध्यान रखना चाहिए या यह भी ध्यान रखना होगा कि गृहस्थ ने अपने लिए जो रसोई बनाई है, गृहस्थ ने अपने लिए जो खाना बनाया है, उसी में से थोड़ा-थोड़ा लेना है। जैसे भंवरा अनेक फूलों पर बैठकर थोड़ा-थोड़ा पराग लेता है, वैसे ही मुनि अनेक घरों से थोड़ी-थोड़ी भिक्षा ग्रहण करके अपने जीवन का निर्वाह करते हैं। यह ज्ञान प्रथम अध्ययन के माध्यम से दिया गया है।

दूसरे अध्ययन से यह बोध कराया गया कि जो कामनाओं का निवारण नहीं करता है, इच्छाओं, अभिलाषाओं में जीता रहता है, वह सुख प्राप्त नहीं कर पाता है। वह आनन्द को प्राप्त नहीं कर पाता है। वह पग-पग पर खेदित होगा, दुःखी होगा, तनाव में आएगा कि मैं कहां आ गया, किस जीवन को स्वीकार कर लिया। ये सारी स्थितियां कामना से पैदा होती हैं। इस प्रकार की कोई आकांक्षा मन में नहीं रहने से जीवन में लघुता आ पायेगी। 'लघुता से प्रभुता मिले, प्रभुता से प्रभु दूर' मतलब अपने भीतर लघुता पहले आएगी तो सारी समस्याओं का समाधान हो जाएगा।

इस सूत्र में, इस अध्ययन में एक और महत्त्वपूर्ण बात कही गई है कि यह मन बड़ा नटखट है। यह मन बड़ा चंचल है। किसी भी समय, किधर भी बहक जाता है। यदि कदाचित् संयमी जीवन से मन चल-विचल अवस्था को प्राप्त हो जाए तो उस समय मन में विचार करना चाहिए कि मैं पूर्व-परिवार वालों में से किसी का नहीं हूं और वे परिवार वाले भी मेरे नहीं हैं। कोई मेरा सगा साथी नहीं है। मैं अकेला जन्मा हूं और मृत्यु भी अकेले की ही होने वाली है। इसलिए मुझे किसी से कोई आशा, किसी से कोई आकांक्षा, कोई वांछा नहीं रखनी चाहिए। इस प्रकार से अपने मन को ढाढस दें, अपने मन को सांत्वना दें और अपने मन को स्थिर करें। अपने चित्त को स्थिर करें।

यदि मन को शिक्षित करने पर भी वह नहीं माने तो थोड़ा कड़ा रुख भी अपनाना पड़ेगा। कड़े रुख के बारे में बताया गया है कि आतापना लो, सुकुमारता का त्याग करो। सुकुमारता हमें असंयम की ओर ले जाने वाली होती है। सुकुमारता हमारे चित्त में उद्वेग पैदा करने वाली होती है। इसलिए, सुख सेलियेपन को छोड़ो, पुरुषार्थ करो, श्रम करो, मेहनत करो। डट जाओ काम में। 24 घंटे इस प्रकार से लगे रहो अपने कार्यों में, संयम जीवन की साधना में, सेवा आदि कार्यों में अपने आपको इतना व्यस्त रखो कि एक क्षण का भी अवकाश प्राप्त नहीं हो। दिनभर सेवा करते हुए अपने तन को इतना थका लो कि रात को जब सोने का प्रसंग आए तो बिना किसी स्वप्न के आराम से सोयें और आराम से जागें।

ऐसी यदि चर्या बना ली जाती है सुकुमारता का त्याग करके तो मन जल्दी से विचलित होने वाला नहीं है। किंतु, इसके लिए हमें सुकुमारता का

त्याग करना होगा। तभी संयम की शुद्ध-आराधना का पालन कर पाएंगे। इसलिए कहा गया है कि मन में जो कामना आई है, जो विषय-वासना के भाव आए हैं, उनको दूर किया जाए। उनको दूर करने वाला ही इस जग में सुखी हुआ है। उनके साथ जीने वाला कोई जीव सुखी नहीं हुआ है।

तीसरे अध्ययन में बताया गया है कि 52 विषय आचरण करने योग्य नहीं हैं। उसके लिए बताया गया है कि पूर्व में जो शुद्ध संयम की आराधना करने वाले संत-महात्मा, महापुरुष हुए हैं, उन्होंने इन 52 अनाचारों का, 52 सूत्रों का या 52 विषयों का आचरण नहीं किया। आचरण नहीं किया, इसका मतलब है उन्होंने उस ओर गति नहीं की, उन्होंने आचरण नहीं किया। हमारे पर भी यह थोपा नहीं जा रहा है कि तुमको इनका आचरण नहीं करना है। तुम्हें जो करना है इसका निर्णय तुम्हें लेना है। उस निर्णय के पहले यह ध्यान अवश्य रहे कि पूर्व महापुरुषों ने संयमी जीवन में, संयम में सजग आत्माओं ने इनका आचरण नहीं किया। इसका मतलब है कि हमें भी समझना चाहिए और हमारे भीतर भी यह दृढ़ता आनी चाहिए कि हम भी इन 52 सूत्रों का, 52 विषयों का आचरण नहीं करेंगे।

पंचासव परिण्णाया...

5 आस्रवों से जो परिज्ञात हो जाता है वह 3 गुप्ति से गुप्त होता है। जो 3 गुप्तियों से गुप्त हो जाता है, वह 6 काय की रक्षा करने वाला होता है। जो 6 काय के जीवों का संयम करने वाला होता है, 6 काय की रक्षा करने में समर्थ हो जाता है, वह 5 इंद्रियों का निग्रह करने वाला होता है। जो 5 इंद्रियों का निग्रह कर लेता है, वह निगृहीत कहलाता है। जो निगृहीत होता है, वह ऋजुदर्शी हो जाता है। क्या आप लोगों को बात समझ में आई? समझ में आई क्या ये बात? एक से दूसरी चीज जुड़ी हुई है।

सबसे पहले 5 आश्रव से हम दूर हों। 5 आश्रव से दूर होंगे तो 3 गुप्तियों से गुप्त रहेंगे। ज्ञानी मन की सुरक्षा होगी, वचन की सुरक्षा होगी, काया की सुरक्षा होगी। मन, वचन और काया का जिसने गोपन कर लिया, जिसने सुरक्षित कर लिया, वह 6 काय के जीव का संयम करने वाला होगा, रक्षा करने वाला होगा, संयम का परिणाम देने वाला होगा और जिसने 6 काय के जीवों की रक्षा करने में विशेषता हासिल कर ली, वह 5 इंद्रियों का निग्रह करने वाला बनेगा। जब वह इंद्रियों को निग्रह करने में समर्थ होता है

तो उसमें जितेन्द्रियता प्रकट होती है। तब वह साधक, वह मुनि ऋजुदर्शी हो जाता है। ऋजुदर्शी मतलब सरल दृष्टि वाला। उसमें टेढ़ापन नहीं रहता है। उसमें बांकपन नहीं रहता है। वह सीधा मोक्ष को देखने वाला होता है। वह एकमात्र मोक्ष को देखता है जैसे कोई धनुर्धर अपने निशाने को देखता है, लक्ष्य बनाता है।

मोक्ष देखने वाला हमेशा मोक्ष की ओर गति करता है। संसार में इधर-उधर डोलायमान नहीं होता। ये तीन अध्ययनों का सार था। मैंने संक्षिप्त में बताया है। चौथे अध्ययन में पांच महाव्रतों के स्वरूप को व्यक्त करते हुए 6 काय जीवों की रक्षा का विशेष स्वरूप व्यक्त किया गया है। ये 6 काय जीव चाहे सूक्ष्म हैं या बादर, चाहे त्रस्त हैं या स्थावर, इन्हें ध्यान में रखते हुए चलना चाहिए। न स्वयं हिंसा करना और न कराना। करने वाले का अनुमोदन भी नहीं करना। न दूसरों से करवाना और न करने वाले का अनुमोदन करना।

इस प्रकार से सत्य महाव्रत, अचौर्य महाव्रत, ब्रह्मचर्य महाव्रत एवं अपरिग्रह महाव्रत की शिक्षा दी गई है। इसके आगे छठे अध्ययन में रात्रि भोजन के लिए संयम कहते हुए इसका परित्याग करने की बात कही गई है। इसके आगे महत्त्वपूर्ण बात कही गई है कि इन पांच महाव्रतों एवं छठे रात्रि भोजन-त्याग व्रत को आत्महित के लिए तुम्हें स्वीकार करना है। आत्महित की भावना से स्वीकार करना है। कोई दबाव नहीं, कोई प्रेशर नहीं। इनकी आराधना करने से मेरी आत्मा का हित होगा, यह लक्ष्य हमारे मन में होना चाहिए। यह उद्देश्य हमारे भीतर होना चाहिए। यह बात हमें बहुत अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए। ये बात जब हमारे समझ में आ जाएगी तभी हम संयम में सुस्थिर आत्मा बन पाएंगे अन्यथा संयम से मन विचलित होता रहेगा। मन संयम से हटता रहेगा। 5 महाव्रत और छठा रात्रि भोजन के बाद 6 काय के जीवों का किस प्रकार से हनन होता है, उनकी किस प्रकार से विराधना हो सकती है, उन विराधना के प्रसंगों से स्वयं को बचाना है, स्वयं को हटाना है। जीवों की विराधना न होने का ध्यान रखकर संयम की पालना करनी है।

उसके आगे यतना का सूत्र दिया गया कि अयतना असंयम की ओर ले जाने वाली होती है। इसलिए हम कोई भी कार्य अयतना से नहीं करेंगे। हमारे

सारे कार्य चाहे सोना है, जागना है, उठना-बैठना है, चाहे खाना है, पीना है या चलना-फिरना, आदि यतना से करें।

"जयं चरे जयं चिट्ठे, जयमासे जयं सुवे,
जयं भुंजतों भासंतो, पावं कम्मं न बंधई"

कितनी सुंदर शिक्षा दी गई है कि ये सारे कार्य यतना से करने वाला मुनि पापकर्म का उपार्जन नहीं करता है। जिसकी दृष्टि सदा धर्म में लगी रहेगी, सदा संयम में लगी रहेगी। वह पापकर्म का उपार्जक नहीं होगा। उसके आगे कहा गया है कि देखो! सारी आत्माओं को, संसार के सारे प्राणियों को अपने समान समझना। उनमें स्वयं का अनुभव करना। उनमें स्वयं का दर्शन करना। स्वयं का दर्शन करेंगे तो हम किसी भी प्राणी को पीड़ित करने को तैयार नहीं होंगे। किसी भी प्राणी को दुःखी करने के लिए तैयार नहीं होंगे। 'मैं यदि किसी प्राणी को दुःख दूंगा तो वह दुःख मेरा है। मुझे उस दुःख का अनुभव होगा क्योंकि मैं उसमें मौजूद हूं। जो स्वरूप मेरा है, वही स्वरूप उस आत्मा का है, जिससे मुझे पीड़ा होती है। उससे उसको भी पीड़ा होगी। जो मुझे अच्छा नहीं लगता है, वह मैं दूसरों के लिए नहीं करूं।'

इस प्रकार के भाव हमारे भीतर गहरे पैदा होने चाहिए। इतना ही नहीं उसके आगे बताया गया कि हम धर्म कल्याण मार्ग को जानें व पाप-मार्ग को जानें। धर्म कल्याण व पाप मार्ग को सुनने से जानेंगे। अतः गुरु भगवंतों के मुखारविंद से आगम का श्रवण करें। आगमों के वचनों को श्रवण करें और श्रवण करके उन्हें समझने का प्रयत्न करें कि कल्याण मार्ग क्या है? पाप मार्ग क्या है? जो जीव-अजीव पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष को नहीं जानेगा, वह संयम के मार्ग की सम्यक् प्रकार से आराधना नहीं कर पाएगा। संयोग हमें दुःखी करने वाले होते हैं। उनको भी माया समझकर उनका त्याग करें और उच्च संवर की आराधना करते हुए हम सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके केवलज्ञान, केवलदर्शन को प्राप्त करके, लोक के अग्र भाग पर सिद्ध सिला के ऊपर सिद्ध क्षेत्र के सिद्धावस्था को प्राप्त हो जाएंगे। साधना के स्वरूप की शुरुआत से लेकर सिद्धि-गमन तक का सारा मार्ग, सारे दिशा-निर्देश इसमें दिए गए हैं।

एक व्यक्ति या अनेक व्यक्ति यहां से विदेश भ्रमण करने के लिए जाते हैं तो किसी कंपनी के माध्यम से जाते हैं। उन कंपनी वालों का अपना पैकेज होता है। वह पैकेज दे दिया तो फिर उसके बाद सारी जवाबदारी उन कंपनी वालों की हो जाती है। वह गाइड करती है कि कहां व कौन सी गाड़ी मिलेगी। कहां किस होटल में ठहरना। वहां रहने का, खाने का, घूमने, दर्शनीय स्थल दिखाने का सारा दायित्व उनके पैकेज में है। ये सारा दिशा-निर्देश किसका होता है? हो सकता है कि उनके द्वारा पहले से निर्धारित चार्ट बना हुआ हो। उसमें लिखा हुआ हो कि इस प्रकार से रहना है। यह-यह करना है। इसमें हमको क्या करना है? हमको किस समय क्या-क्या सावधानी रखनी है, हो सकता है कि सारी चीजें चार्ट के माध्यम से हमें बता दें।

वैसे ही ये पूरा कंप्लीट चार्ट हमें दशवैकालिक सूत्र इन अध्ययनों में साधना की ओर ध्यान दिलाता है। पूरा चार्ट, पूरा दिशा-निर्देश हमको बताता है। उसके माध्यम से हमें बताया जाता है कि हमें कैसे चलना है, कैसे सोना है, कैसे बैठना है, कैसे बड़ों का विनय करना है और किस प्रकार से मन, वचन, काया का गोपन करते हुए, उनका निरोध करते हुए हमको आगे बढ़ना चाहिए और आगे तुम्हारा लक्ष्य क्या है? तुम्हारा लक्ष्य सिद्धि गमन को प्राप्त करना है और तुम सूत्र में दिखाये अनुसार चलोगे तो तुम्हें केवलज्ञान की प्राप्ति होगी और सारे कर्म क्षय होंगे, सारे कर्मों का क्षय होगा। उससे तुम सिद्धि को प्राप्त हो पाओगे।

संक्षिप्त में साधना का मार्ग हमें दशवैकालिक सूत्र में बताया गया है। आपने भी सुना है और नवदीक्षित महासतियों ने भी सुना है। महासतियों को मुख्य रूप से उस पर विचार करते रहना है और कभी भी मन ऊंचा-नीचा हो तो यह विचार करना चाहिए कि मैंने अपनी आत्मा के लिए, आत्मा के हित के लिए यह साधु जीवन स्वीकार किया है। मेरे से किसी ने कोई जबरदस्ती नहीं की। न परिवार वालों ने धक्का दिया और न ही साधुओं ने खींचने की कोशिश की। मेरी इच्छा हुई, मेरा मन हुआ, मेरी तमन्ना हुई कि साधु जीवन स्वीकार करूं तो मैंने साधु जीवन को स्वीकार किया है। साधु जीवन आत्मा के लिए, आत्मा के हित के लिए स्वीकार किया है। शास्त्रकारों ने 4 अध्ययनों में जो दिशा-निर्देश दिये हैं, उन दिशा-निर्देशों के अनुसार संयम जीवन का पालन करते हुए अपने आपको आगे बढ़ाने का

प्रयत्न करेंगे तो तीर्थंकर देवों के पथ पर बढ़ते हुए शाश्वत सिद्धि को प्राप्त करेंगे। इतना कहते हुए विराम।

आज गुलाब मुनि जी म.सा. के संथारे का 30वां दिवस है। मासखमण का दिवस है। हमें भी उनसे कुछ प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। हम कुछ त्याग-पच्चक्खाण लेने का अपने आप में सोचें और स्वीकार करें।

10 अक्टूबर, 2019

6

चाबी, जो ताला खोल सके

शांति जिन एक मुज विनति...

एक चर्चा होती है कि ज्ञान-ध्यान करना चाहिए। यदि कोई पलटकर पूछ ले कि ज्ञान-ध्यान क्यों करना चाहिए, ज्ञान-ध्यान किसलिए करना चाहिए तो? हो सकता है कि हमारे पास उत्तर हो और भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के पास भिन्न-भिन्न प्रकार के उत्तर हों। यदि हम ज्ञान का केवल संग्रह करना चाहेंगे तो वह विशेष लाभदायक नहीं होगा। संग्रह छूट जाता है। वह साथ नहीं निभाता। जैसे व्यावहारिक क्षेत्र में हम अध्ययन करके अनेक प्रकार की डिग्रियां प्राप्त करने के बाद कहते हैं कि वह ज्ञान आत्मा के लिए विशेष लाभदायी नहीं है। वैसे ही हम चाहे आध्यात्मिक क्षेत्र में धार्मिक ज्ञान को इकट्ठा कर लें, वह ज्ञान भी हमारी आत्मा के लिए क्या कल्याण करने वाला नहीं बनेगा, वह भी विशेष लाभ देने वाला नहीं बनेगा?

कोई व्यक्ति चाबियों का गुच्छा लेकर घूम रहा है किंतु ताले में लगने वाली चाबी एक भी नहीं है। जो चाबियां ताले में लगे ही नहीं, उन चाबियों से क्या लेना-देना और क्या मतलब उनसे। वे चाबियां हमारे पास पड़ी भी हैं तो कोई मतलब नहीं है और नहीं रहें तो भी कोई फर्क नहीं पड़ेगा। हमने उन चाबियों को इकट्ठा करके रख लिया, किंतु ताले में लगने वाली एक भी चाबी नहीं है तो ऐसी चाबियों से क्या लाभ? वह एक चाबी ही काम की है, जो ताले में सही लगने वाली है। वह लाभ देने वाली है। अनेक चाबियों की आवश्यकता नहीं है। वैसे ही हमारी आत्मा के अज्ञान को हटाने वाला भी एक ज्ञान महत्त्वपूर्ण है। वह हमारे अंतर को जगाने वाला होना चाहिए। हमारे दीये को प्रकाश देने वाला होना चाहिए। जिस ज्ञान से हमारी आत्मा झंकृत नहीं हो रही है, हमारे अंतर-पट नहीं खुल रहे हैं, वह ज्ञान विशेष लाभ देने वाला नहीं रहेगा। उसका हम केवल संग्रह करते रहेंगे।

अभवी आत्मा बहुत-सारा ज्ञान इकट्ठा कर लेती है। हम से कई गुना ज्यादा ज्ञान उसको हो जाता है किंतु वह ज्ञान वैसा ही होता है जैसे चाबियों का गुच्छा लेकर घूमा जाय। चाबियों का गुच्छा लेकर घूमें और बहुत सारी चाबियां इकट्ठी कर लें, किंतु ताले में लगने वाली चाबी नहीं है। ठीक वैसे ही अभवी आत्मा का ज्ञान होता है। उन सारी चाबियों से ताला खुलने वाला नहीं होता है। इसलिए हमारा ज्ञान करने का उद्देश्य या ज्ञान-ध्यान करने की जो बात कही जाती है, उसके पीछे भाव होना चाहिए कि मेरी आत्मा पर पड़ा हुआ अज्ञान दूर हो। मैं यह जान सकूं कि मैं कौन हूं? मेरी आत्मा का स्वरूप क्या है? यह पहली शर्त है कि यदि आत्मा के स्वरूप को नहीं जाना, आत्मा का ज्ञान नहीं हुआ, आत्मा का बोध नहीं हुआ तो चाहे कितना भी ज्ञान इकट्ठा कर लिया, कितना भी ज्ञान संग्रह कर लिया, हमारे लिए विशेष उपयोगी नहीं बन पाएगा।

निःसार पदार्थ व्यक्ति कितना भी खाता रहे; वह उसको तृप्ति देने वाला नहीं होगा। कहते हैं कि खारा पानी प्यास नहीं बुझाता। उलटा प्यास जगाने वाला हो जाता है। वैसे ही खारा पानी या ऐसा किया हुआ ज्ञान, हमें तृप्त करने वाला नहीं बनेगा। हमारी आत्मा को शांति और समाधि देने वाला नहीं बनेगा। जो ज्ञान हमारे ताले को खोलने वाला है, हमारे अज्ञान को हटाने वाला है और आत्मा का बोध कराने वाला है कि हां, आत्मा का स्वरूप यह है!

केसी श्रमण ने परदेशी राजा को बोध दिया था, ज्ञान कराया था। वह ज्ञान परदेशी राजा के अज्ञान को हटाने वाला बना। वह ज्ञान परदेशी राजा के अन्तर् पट को खोलने वाला बना। अन्तर् चक्षु उद्घाटित करने वाला बना। उसका परिणाम या उसका प्रमाण इस रूप में मान सकते हैं कि जैसे ही उसको आत्मिक ज्ञान हुआ, वह साधु तो नहीं बन सका पर श्रावक के 12 व्रत स्वीकार कर लिए।

एक बड़ा मनोरम विषय वहां पर उपस्थित होता है। परदेशी राजा आत्मज्ञानी बन गया, तत्त्वज्ञानी बन गया। रोशनी पूरी नहीं तो थोड़ी-सी भी लाभदायक होती है। घर में जीरो वॉट का बल्ब जला दो तो वह अंधेरे को नष्ट कर देता है। उससे अंधेरा हट जाता है। अंधेरा दूर हो जाता है और प्रकाश आने लगता है। कितने भी बादल छाये हुए हों, सूर्योदय हो जाए तो उसकी आभा अहसास करा देती है कि सूर्य उदय हो गया है। दिन हो गया है। मालूम पड़ जाता है या नहीं पड़ जाता है? रात्रि के अंधेरे के बाद सुबह

बादल छाए हुए हैं। सूर्य बाहर नहीं आया है, पर उसकी थोड़ी-सी आभा यह दर्शा देती है कि सूर्य का प्रकटीकरण हो गया है। वैसे ही छोटा-सा बल्ब या एक चिनगारी, थोड़ा-सा प्रकाश हमें आत्मबोध करा देता है कि मैं हूं! अपने अस्तित्व का बोध उससे हो जाता है। परदेशी राजा को भी अस्तित्व का बोध हो गया। अस्तित्व का बोध होने के बाद ही हमारी सारी क्रियाएं, मुक्ति की ओर ले जाने वाली बनती हैं। उसके पहले किए हुए सारे कार्य, सारी क्रियाएं, पुण्य का बंध कराने वाली होती हैं। वे मुक्ति को दिलाने वाली नहीं हो पातीं।

परदेशी राजा जब आत्मज्ञानी बन गया तब उसके मन में विचार पैदा हुआ कि अब तक मैं राज्य के लाभ को, टैक्स आदि से मिले धन को तीन भागों में बांटा करता था। अब मैं उस लाभ को चार भागों में बांटूंगा। चौथे भाग से मैं बहुत-सी दानशालाएं, धर्मशालाएं खुलवाऊंगा और अनेक लोगों को वहां पर रोजी-भत्ता देकर रखूंगा। वहां पर प्रतिदिन बहुत सारा अशन पान-खादिम-स्वादिम निष्पादित होगा। रंक-भिखारी, श्रमण-महान, अतिथि-अनाथ कोई भी व्यक्ति चलते हुए वहां पर अन्न-जल ग्रहण कर सकता है। ऐसी सुविधा मैं राज्य में करूंगा। ये भाव किसके पैदा हुए? ये भाव किसके पैदा हुए? (प्रतिध्वनि– ये भाव परेदशी राजा के पैदा हुए।) वह जिस समय अज्ञान में था, उस समय ये भाव पैदा हुए या 12 व्रतधारी श्रावक, आत्मज्ञानी बन गया तब पैदा हुए?

अब यहां पर दो बातें खड़ी हो जाती हैं कि ये नया आरंभ-समारंभ क्यों चालू हो गया? दानशालाएं, भोजनशालाएं चालू करवाएगा और कोई भी खाए-पीए सबके लिए छूट है। वहां पर कितना अन्न बनेगा? कितने लोगों का भोजन बनेगा? मान लो सौ, दो सौ, पांच सौ या हजार आदमी जीमने के लिए आ गए तो उनके लिए भोजन बनेगा या नहीं बनेगा? इतना सारा आरंभ 12 व्रतधारी श्रावक को करना चाहिए या नहीं करना चाहिए? हम दुविधा में हैं। यहां पर हमारे मन में एक क्वेश्चन मार्क (प्रश्नवाचक) खड़ा हो गया। कैसे कहें कि आरंभ बोलना ठीक है? नहीं, नहीं, मन कहता है कि आरंभ नहीं बढ़ाना चाहिए। फिर परदेशी राजा ने इतना आरंभ कैसे बढ़ा दिया? वे गए केसी श्रमण के पास। केसी श्रमण से उसने कहा कि मैं ऐसा-ऐसा करने वाला हूं। केसी श्रमण ने इसके विषय में न तो 'हां' कहा और न ही 'ना' कहा।

न तो 'हां' और न ही 'ना' कहा। अब यहां पर एक और नई बात खड़ी हो जाती है। यदि श्रावक को ऐसा करना नहीं कल्पता है तो श्रावक के लिए यह उचित बात नहीं थी। केसी श्रमण को मना करना चाहिए था या नहीं करना चाहिए था। केसी श्रमण को कह देना चाहिए था कि तुमको ऐसा नहीं करना चाहिए। आगम एक बात और कहता है कि कोई भक्त मुनिराज के पास आकर, जैन मुनियों के पास आकर मुनि से कहे कि मुनिराज आप 10 जने हो। आज मैं आपके लिए भोजन की तैयारी कर रहा हूं। आज आपको मेरे घर पर ही भिक्षा लेनी है। आप किसी प्रकार का संकोच नहीं करें। मेरे घर में कोई कमी नहीं है। मैं आपके लिए विपुल रूप से अशन-पान-खादिम-स्वादिम का निष्पादन करवाऊंगा। मतलब, ऐसा भोजन बनाऊंगा। मुनि ऐसा सुनकर चुप भी रह जाता है तो दोष का भागी है। मुनि दोष के भागी हैं। ऐसा सुनकर मुनि को चुप नहीं रहना चाहिए। उसे तत्काल कहना चाहिए, 'भद्र! हे देवानुप्रिय! हमारे लिए बनाया हुआ आहार हमको लेना नहीं कल्पता है। हमारे लिए तुम्हें किसी भी प्रकार का कोई आरंभ-समारंभ करने की जरूरत नहीं है। हमारे लिए तुमको आहार नहीं बनाना है। तुम बनाओगे तो भी हम उसमें से लेने वाले नहीं हैं। इसलिए इस प्रकार की कोई प्रक्रिया तुम्हें नहीं करनी है।'

यह बात मुनिराज उस भक्त को बोल दें, किंतु यहां पर परदेशी राजा ने जब यह कही तो केसी श्रमण ने मना नहीं किया। केसी श्रमण को क्या कहना चाहिए था? मना करना चाहिए था या नहीं करना चाहिए था? ऐसे प्रसंग पर मुनि को न हां कहना और न ही ना कहना। यह आगम की बात है। मुनि यह नहीं कहे कि 'वाह! तुमने बहुत अच्छा किया। यहां पर रोज दो सौ, पांच सौ आदमियों को खाना मिलेगा।' ऐसी प्रशंसा और अनुमोदना साधु नहीं करे। जहां पर हिंसा भी होती है और अनेक लोगों को लाभ भी होने वाला होता हो, वहां साधु न अनुमोदना करे और न ही निषेध करे। अनुमोदना करेगा तो आरंभ का दोष लगेगा, हिंसा का दोष लगेगा। यदि निषेध करता है तो अनेक लोगों को मिलने वाली वृत्ति का छेदन होगा। अनेक लोगों को मिलने वाले लाभ का भेदन होगा। इसलिए साधु इसके लिए न हां कहे और न ही ना कहे।

जे य दाणं पसंसंति, वहमिच्छन्ति पाणिणं।
जे य णं पडिसेहंति, वित्तिच्छेयं करेंति ते। सूत्रकृतांग– 1.11.20

यदि कोई अलग से भी पूछे कि साधु को ऐसा ही करना चाहिए या नहीं करना चाहिए, तब भी मुनिराज तटस्थ रहे। हां, तत्त्व की बात बता सकते हैं।

ऐसा कहीं कोई निषेध नहीं है कि श्रावक अपने कर्तव्य का निर्वाह नहीं करे। यदि अनेक लोगों को वह भोजन दे रहा है तो धर्म से विमुख नहीं हो रहा है। धर्म से विपरीत बात नहीं है। अनेक लोगों को लाभ पहुंचा रहा है तो वह धर्म से विपरीत नहीं है। वह उस प्रयत्न से बहुत-से लोगों को धर्म के अनुकूल भी बना सकता है। धर्म के अभिमुख बना सकता है। किसी को धर्म के अभिमुख बनाना गलत नहीं है, किंतु मुनिराज ऐसे कार्य की न प्रशंसा करेंगे और न निषेध करेंगे। धर्म कार्य, आत्म-शुद्धि के कार्य में मुनिराज प्रेरणा दे सकते हैं। जैसे आप लोगों को प्रेरणा दे दी जाती है कि सामायिक होनी चाहिए, संवर होना चाहिए, प्रतिक्रमण होना चाहिए। क्या पड़ा है इस संसार में? मुनि जीवन को स्वीकार करें। मोह-ममत्व का भेदन करें। ये उपदेश मुनि दे सकता है क्योंकि इसमें आत्मकल्याण का भाव रहा हुआ है। इसमें आरम्भ नहीं है। यह, वह चाबी है जो आदमी की आत्मा के ताले को खोल सकती है। ऐसी चाबी मुनिराज दे सकते हैं, किंतु जिससे संशय की स्थिति बन रही है, न ताला खुले और न ताला बंद हो, हिंसा भी होती हो और लाभ भी होता हो तब मुनि मौन रहेगा। जहां एकांत हिंसा की बात होती है, वहां मुनिराज निषेध कर सकते हैं।

जैसे कोई कत्लखाने में कत्ल करने के लिए पशु को ले जा रहा है, वहां पर निषेध करें कि भाई जीव की हिंसा मत करो। वहां उसको जीव हिंसा का निषेध करने का उपदेश दे सकता है क्योंकि जीवों की हिंसा करना पाप है, अधर्म है और अधर्म करने से दुर्गति में जाने की स्थिति बनती है। इसलिए ऐसे स्थान पर मुनिराज निषेध भी करेंगे। एक बात केसी श्रमण ने परदेशी राजा से और कही। वह भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। छोटे में बहुत बड़ा उपदेश है। कुछ अक्षरों का उपदेश है। बड़ा मार्मिक उपदेश है। अक्षर हैं– 'तुम अब रमणीक बन गए हो, अरमणीक मत बनना।' क्या उपदेश दिया? रमणीक बन गए हो, अब अरमणीक मत बनना।

रमणीक किसको कहते हैं? रमणीक का अर्थ क्या होता है? आत्मा को सुंदर बनाने, आत्मा के सौन्दर्य को बढ़ाने को रमणीक कहते हैं। रमणीक मतलब अच्छा, सुंदर। तुम सुंदर बन गए हो। तुमने आत्मा के सौन्दर्य को बढ़ा लिया है। अब आत्मा को वापस कलुषित मत बनाना। इस आत्मा

की सुंदरता को बनाए रखना। यह तब होता है जब हमारे आत्मबोध का दीया बुझे नहीं। वह प्रज्वलित रहे। वह प्रज्वलित कैसे रहेगा? उसको हवा के झोंकों से बचाना होगा। मिथ्यात्व, अज्ञान, दूसरे रूप में कहें तो भौतिकवाद की चकाचौंध के वातावरण से अपने दीये को बचाना पड़ेगा। भौतिकवाद की आंधी जोरों पर है। अर्थतंत्र या अर्थ प्रधान जीवन आज धर्म संस्कृति को बहुत बड़ी चुनौती दे रहा है। ऐसे समय में हम अपने आत्मतेज को, आत्मबोध को कैसे सहेजें?

कई मुमुक्षु आत्माएं यहां पर प्रतिदिन प्रवचन का लाभ लेती हैं। आज भी एक मुमुक्षु बहन पेटलावद से उपस्थित हैं, 'आयुषी'। यह पूज्य प्रवर्तक जैनेन्द्र मुनि जी म.सा. के पास 18 तारीख को दीक्षित होने वाली है। सुबह उसने दर्शन किए और दीक्षा के पथ पर बढ़ने के लिए मैंने भी कुछ प्रेरणा दी, कुछ बातें कही कि संयम जीवन श्रेष्ठ जीवन है। उसके अच्छी तरह से पालन के लिए आत्मा को रमणीक बनाने के लिए यतना और विनय दो चीजों का सदा हमें साथ निभाना है। हमारे जीवन से ये चीजें छूटनी नहीं चाहिए। पूज्य श्री उमेश मुनि जी म.सा. स्थानकवासी समाज में बहुत ज्ञानी, उच्च संत थे। उन्होंने बहुत सारा साहित्य भी रचा है। हमको उनसे प्रेरणा अवश्य लेनी चाहिए।

'गुणिषु प्रमोदम्'

गुणीजनों के प्रति मन में प्रमोद होना ही चाहिए। प्रमोद रहना ही चाहिए। यदि गुणियों के प्रति हमारे मन में प्रमोद नहीं आता है तो मन की बड़ी संकीर्णता है। मन की बड़ी कृपणता है। मन की बड़ी कंजूसी है। जैसे कंजूसी व्यावहारिक क्षेत्र में भी उचित नहीं है, वैसे ही आध्यात्मिक क्षेत्र में भी कृपणता उपयुक्त नहीं है। प्राणिमात्र के प्रति मैत्री भावना हो और गुणियों के प्रति प्रमोद की भावना हो। संयम जीवन राजा जीवन है। श्रावक जीवन भी उसी दिशा में गतिशील है या उसी दिशा का पथिक है। अंतर केवल इतना है कि वह इतना पुरुषार्थ जगा नहीं पाया है और साधु बनने वाले ने अपने पुरुषार्थ को जाग्रत् कर लिया है। वह भोगों के स्वरूप को जानकर उनसे निवृत्त हो चुका है।

श्रावक अभी उससे पूर्ण निवृत्त नहीं हो पाये हैं। जानते तो वे भी हैं कि भोग भुजंग है और वह जिसको डस लेता है, उसका जिंदा रहना बहुत मुश्किल है। मैंने सुना है कि कोबरा जाति का सर्प जिसको डस ले वह फिर पानी भी

नहीं मांगता। उसका जहर इतना भयंकर होता है। लेकिन वह तो एक जन्म को ही नष्ट करने वाला हो सकता है किंतु भोगों में डूबने वाला व्यक्ति पता नहीं कितने जन्मों को नष्ट करने वाला बन जाएगा? इन भोगों को जितना ईंधन दोगे, वह बढ़ेगा ही। वह घटने वाला नहीं है। भोगों की तृप्ति भोग भोगते हुए कभी नहीं होगी। कोई सोचे इतना भोग भोग लूंगा तो एक दिन स्वतः मन विरक्त हो जायेगा कि बस! अब नहीं भोगना है। किंतु ऐसा होता नहीं है।

पहले तो भोगों को भोगने से ऐसी तृप्ति होती नहीं है। रोज खाना खाते हैं और दूसरे दिन फिर खाने की इच्छा हो जाती है। शराब पीने वाला एक बार विचार करता है कि नहीं, नहीं, अब से मैं शराब नहीं पीऊंगा। वह मन में संकल्प भी करता है कि अब शराब नहीं पीऊंगा। लेकिन जैसे ही वह मधुशाला की तरफ से निकलता है, उसका मन कमजोर पड़ जाता है। वैसे ही भोगों की बात है। भोगों से विमुखता जरूरी है।

संज्ञा के थोकड़े में यह बताया गया है कि यदि भोजन की चीज सामने पड़ी है और पेट भरा हुआ हो तो भी कभी-कभी अनुकूल चीज सामने आने पर खाने की इच्छा पैदा हो जाती है। तपस्या पचकाई हुई है फिर भी कोई चीज सामने आ गई तो देखकर मन करता है, एक क्षण के लिए विचार आ जाता है उसके सेवन का, किंतु वह सम्भल जाता है। वह सोचता है कि आज तो मैंने तपस्या कर रखी है, आज तो तेले का पच्चक्खाण है। जो धर्म-चक्र में भाग ले रहे हैं उनमें कइयों के आज बेले के पच्चक्खाण भी होंगे। वो संज्ञा उनको भी हो सकती है। पदार्थों की समीपता, उनकी अभिमुखता, उनकी नजदीकी हो तो भावना जाग जाती है। वैसे भोगों की अभिमुखता हमें भोगों से मुक्त होने नहीं देती।

आगमकार कहते हैं– 'लद्धे विप्पिट्ठि कुव्वई' अर्थात् भोगों की प्राप्ति होने पर भी उन्हें पीठ दे देना। अपने आप से कहना कि नहीं चाहिए मुझे ये भोग और उनसे अलग कर लेना। आगे बढ़ जाएंगे तभी उनसे मुक्ति पाई जा सकती है अन्यथा उनकी लपेट में, उनकी चपेट में व्यक्ति फंसता जाएगा। फिर वहां से निकलना उसके लिए आसान नहीं होगा। कीचड़ में फंसे हुए पैर से व्यक्ति निकलना चाहे तो भी जल्दी से निकल नहीं पाता है। अपने आपको निकाल नहीं पाता है। वही दशा उन भोगों की होती है। किंतु जंबू कुमार, स्थूलिभद्र एवं इन मुनियों जैसे विरले होते हैं जो समझ चुके हैं और विचार कर लेते हैं कि अब मुझे इन भोगों में नहीं फंसना है। क्योंकि

जब हम भोगों का त्याग करते हैं, भोगों से आत्मा मुक्त हो जाती है तब भीतर आनन्द की जो वर्षा होती है वह भोगों को भोगते हुए कभी भी नहीं हो सकती। भोगों में भी व्यक्ति को आनन्द आता होगा, किंतु वह कृत्रिम है। वह वस्तुतः आनन्द नहीं है।

जिसने सच्चे आनन्द की अनुभूति नहीं की है, वही उसमें फंसा हुआ रह सकता है। जिसने कभी हीरों की पहचान नहीं की, रत्नों की पहचान नहीं की उसको किसी ने 5-10 पत्थर, कांच के टुकड़े पकड़ा दिए कि ये कीमती हीरे हैं, इनको सहेजकर रखना, तो वह उनको सहेजकर रखता है। वह सोचता है कि मेरे पास कीमती हीरे हैं। वह अपने मन में समझ रहा है कि मेरे पास कीमती हीरे हैं, जबकि वे सामान्य पत्थर या कांच के टुकड़े हैं। जब वह बाजार में उन कांच के टुकड़ों को ले जाएगा तो उसको कितनी कीमत मिलने वाली है? कितनी कीमत मिलने वाली है? (प्रतिध्वनि– उसको कीमत नहीं मिलेगी।)

वैसे ही जब तक व्यक्ति सच्चे आनन्द को नहीं समझ लेता है, तभी तक भोग का आनन्द मन को तृप्त करने वाला होता है। मन को आनन्द देने वाला होता है। जिस दिन उस व्यक्ति को मालूम हो जाएगा कि ये सारे कांच के टुकड़े हैं, इसमें कोई सार नहीं है तो, एक झटके में वह उन पत्थरों को फेंक देगा। अगर उसके प्रति ममत्व भाव है तो वह पत्थर को इकट्ठा किए रखेगा। वह सोचेगा हो सकता है, वह नहीं समझ रहा होगा, अन्य किसी को बताना चाहिए। हो सकता है तब तक वह उनको अंवेर कर रखे। किंतु जिस दिन पक्का निर्णय हो जाएगा, उस दिन वह उन पत्थरों को, कांच के टुकड़ों को अंवेर कर नहीं रखेगा। उनको फेंक देगा। वह असली रत्न को ही अंवेर कर रखेगा।

जैसे कांच के टुकड़ों को रखने पर भी मन में संतोष था कि वही असली रत्न है, वैसे ही संसार के सुख को तब तक सुख मानेगा, जब तक कि उसको सुख आता है, आनन्द आता है किंतु जिस दिन उसको समझ में आयेगा कि यह आनन्द वह नहीं है जो आत्मा का आनन्द है, तो फिर कभी मुड़कर संसार के भोगों की तरफ नहीं देखेगा। ज्ञान, दर्शन, चारित्र की आराधना से उसको जो आनन्द मिलेगा, उससे वह धन्य-धन्य हो जाएगा। जैसे नाक के श्लेष्म को फेंकने के बाद फिर उस तरफ वापस नजर नहीं दौड़ाई जाती है, वैसे ही संसार के भोग का त्याग करके धर्म में लगा आदमी पीछे मुड़कर नहीं देखता है।

बंधुओ! संयम में जो आनन्द आएगा, वहां पर आनन्द की जो वर्षा होगी, वह इंद्रियों के भोगों से कभी नहीं मिल सकता है। इंद्रियों का भोग करने से वह आनन्द कभी प्राप्त नहीं हो सकता है जो आत्म-रमण से आयेगा। हम भी विचार करें, चिंतन करें, मनन करें। जैसे बहन आयुषी अपने विचारों के अनुरूप अग्रसर होने वाली है, वैसे ही हमें भी प्रेरणा लेनी चाहिए।

आचार्य पूज्य गुरुदेव मुनि बने, आचार्य बन गए और जिनके नेश्राय में, जिनके नेतृत्व में अनेक दीक्षाएं संपन्न हो गईं। रतलाम में 25 दीक्षाएं हुईं, 21 दीक्षाएं बीकानेर में हुईं। और भी अलग-अलग जगह दीक्षाएं हुईं। ऐसा सुनकर कुछ युवक आए होंगे किसी कार्य से और उन्होंने विचार किया कि हमको ऐसे आचार्य भगवंत के दर्शन करने चाहिए। वे स्थानक में पहुंचे और प्रवेश किया। ऊपर आए और संयोग से गुरुदेव ही सामने मिल गए। वंदना की और कहा कि नानालाल जी म.सा. कहां हैं? आचार्यश्री कहां हैं? उनके दर्शन कर सकते हैं क्या?

(सभा में कुछ लोग हंसने लग गए।)

आप लोग हंस रहे हो। हंसने की बात नहीं है। क्या पता उनको कि ये ही नानालाल जी म.सा. हैं? मैं पहली बार गुरुदेव के दर्शन के लिए जयपुर पहुंचा। संपत जी, कहां आया था मैं? संपत जी को क्या मालूम? कौन आया, कौन किसका ध्यान रखता है? कोई आकर बोले कि मैं जोधपुर में दर्शन करने के लिए आया था तो कितने लोगों को आप जानते हो? जानोगे क्या नेता जी कि कौन-कौन दर्शन करने के लिए आए? मालूम रहेगा क्या? क्या मालूम पड़े! कितने लोग आते-जाते हैं।

मैं उस समय व्याख्यान में जाकर बैठा। एक संत व्याख्यान दे रहे थे। मैंने सोचा कि यही आचार्य श्री होंगे। इतने में ऊपर से आवाज आई "पधारजे घणी खम्मा" और एक धवल सेना नीचे उतरते हुए नजर आई। अब पहचानें कैसे कि आचार्य श्री कौन हैं? फिर एक संत पाटे की चौकी पर विराजे। उन पर दृष्टि गई तो समझा कि हां, ये आचार्यश्री होंगे! होंगे क्या, ये ही हैं। ये पाटे पर विराजे हैं और दूसरे संत नीचे बैठे हैं तो यही हैं आचार्यश्री। जब किसी ने पहली बार दर्शन किए, पहले कभी दर्शन नहीं किए हुए होंगे तो यही बात होती है। उन युवकों ने पूछ लिया कि आचार्यश्री के दर्शन करने के लिए हम आए हैं। वे कहां मिलेंगे? कहां मिलेंगे नानालाल जी म.सा.?

आचार्य श्री ने कहा कि "मैं ही हूं नाना।" क्या बोले? (प्रतिध्वनि– मैं ही हूं नाना।) लघुता का उत्तर दिया कि "मैं ही हूं नाना।" "नानो मैं ही हूं" ये नहीं कि आचार्य नानालाल जी म.सा. में ही हूं। ऐसा नहीं कहा उन्होंने। एकदम संक्षिप्त में, लघुता में उत्तर दिया।

भले ही हम कितनी भी ऊंचाइयों को प्राप्त हो जाएं। ज्ञान की ऊंचाइयां मिल जाएं, दर्शन की ऊंचाइयां मिल जाएं, चारित्र की ऊंचाइयां मिल जाएं किंतु हमारे पैर जमीन पर टिके हुए होने चाहिए। हमारे पैर ज्ञान, दर्शन, चारित्र की इस धरा पर टिके रहें। ऐसे ही पैरों को टिकाए हुए रखेंगे तो आनन्द की वर्षा निश्चित रूप से होगी। हम अपने आप में ऐसा प्रयत्न करेंगे तो धन्य बनेंगे।

गुलाब मुनि जी म.सा. के संथारे का आज 31वां दिन हो गया है। अपने शांत भाव में, समाधि भाव में और अविचल भावना में गतिशील हैं। शरीर का तो हम जानते ही हैं। शरीर तो शरीर ही है। खाने से इसको खुराक मिलती है तो शरीर बढ़ता है। खुराक नहीं मिलती है तो जो उसका धर्म है, वह वैसा ही करेगा। हमने अनुत्तरोपपातिक सूत्र में पढ़ा है कि धन्ना अणगार का शरीर कैसा हो गया। यह हम अभी प्रत्यक्ष अनुभव कर रहे हैं कि श्री गुलाब मुनि जी म.सा. के शरीर की स्थिति कैसी बन गई। उनको उठाने-बिठाने में भी पीड़ा होती होगी। प्रतिलेखना आदि के लिए उठना-बैठना पड़ता है फिर भी शांत भाव में हैं। कोई शिकायत नहीं। कोई 'उफ' नहीं। यह भी अपने आपमें एक बहुत ही प्रेरणा का विषय है कि किस प्रकार से समभाव को बढ़ाएं। शरीर के प्रति ममत्व रहेगा तो पूर्ण समभाव रखना मुश्किल होगा। थोड़ा भी ममत्व होगा तो मन ऊंचा-नीचा हो जाएगा। इस ममत्व के भाव से, इस देह ममत्व के भाव से ऊपर उठने के लिए हमारा प्रयत्न हो तो हम अपने आपको धन्य बनाएंगे। यही वह चाबी होगी जो हमारे ताले को खोल पायेगी। इतना ही कहते हुए विराम।

11 अक्टूबर, 2019

7

एक साथ—अपने हाथ

शांति जिन एक मुज विनति...

ज्ञान के प्रकाश से क्या लाभ है? ज्ञान को क्यों आलोकित करना या ज्ञान से क्यों अपनी आत्मा को आलोकित करना? इसका उत्तर है– चतुर्गति संसार के परिभ्रमण मिटाना बिना ज्ञान के संभव नहीं है। ज्ञान का उजाला होगा तो हमें दुर्गति का ज्ञान हो पाएगा। चतुर्गति में भ्रमण के कारणों का भी हमें बोध हो पाएगा। हम जान पाएंगे कि वस्तुतः इसमें हम भ्रमण ही करते रहने वाले हैं या इससे भिन्न भी मेरा स्वरूप है। ज्ञान, दर्शन और चारित्र तीनों मिलकर मोक्ष का मार्ग है। कभी कोई प्रश्न कर लेता है कि सम्यक् दर्शन का महत्त्व ज्यादा है या सम्यक् ज्ञान का अथवा सम्यक् चारित्र का? जहां पर परस्पर एक-दूसरे से मिलकर काम होता है, वहां यह नहीं देखा जाता है कि उसने क्या किया है और मैंने क्या किया है।

बांग्ला में एक बात कही गई है– 'मिली मिसी करी काज, हारी-जीती नाही लाज।' इसका अर्थ है कि मिल-जुलकर काम करो तो हार-जीत का कोई प्रश्न ही नहीं है। 'कौन विशेष है, कौन कम है' जैसा प्रश्न ही नहीं खड़ा होता। वैसे ही ज्ञान, दर्शन और चारित्र में कौन कम है और कौन ज्यादा है; ऐसा प्रश्न ही खड़ा नहीं होना चाहिए। दर्शन के बिना ज्ञान, ज्ञान नहीं है और ज्ञान के बिना दर्शन, सम्यक् दर्शन नहीं है और सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान नहीं हो तो सम्यक् चारित्र कोई काम ही नहीं कर पाएगा। वह चारित्र सम्यक् होगा ही नहीं। असम्यक् होगा। ज्ञान-दर्शन हो जाए और चारित्र नहीं हो तो भी सफलता प्राप्त नहीं हो सकती है। इसलिए सफलता के लिए हमें तीनों बिंदुओं की आवश्यकता रहेगी। हमें तीनों रत्नों की आवश्यकता रहेगी। सम्यक् ज्ञान भी होना चाहिए, सम्यक् दर्शन भी होना चाहिए और चारित्र भी सम्यक् होना चाहिए। ज्ञान यदि सम्यक् होता है तो हमारी दृष्टि भी सम्यक्

होगी। दृष्टि हमें सही दिशा की ओर ले जाएगी। हम देख रहे हैं कि पहले से काफी कुछ बदलाव हुए हैं। काफी कुछ परिवर्तन हुए हैं। पर बहुत अच्छी तरह से विचार करें तो ज्ञात हो पाएगा कि क्या परिवर्तन हुआ? ज्ञात होगा कि परिवर्तन सही दिशा में हुआ या गतानुगतिक? गतानुगतिक परिवर्तन के कुछ कारण हैं। जब हमारे सामने कोई नई चीज आती है तो उसके प्रति हमारा आकर्षण हो जाता है। उस नई चीज को स्वीकार करने को मन बेताब हो जाता है। उसकी हानि और गुण की ओर हम विचार नहीं करते हैं।

हमें पहले विचार करना चाहिए कि उस चीज को अपनाने से, स्वीकार करने से मुझे क्या लाभ होगा, क्या हानि होगी? विचार किए बिना हर वस्तु को स्वीकार करने से उसके दुष्परिणाम हमको देखने पड़ेंगे, भुगतने पड़ेंगे। आज मोबाइल का युग है। जिस तेजी से मोबाइल की बातें आगे चल रही हैं, मेरे खयाल से सोच-समझकर स्वीकार करने वाले कितने होंगे? देखा-देखी, देखा-देखी, देखा-देखी। उसके घर में टी.वी है तो मेरे घर में भी टी.वी. होनी चाहिए। उसके पास मोबाइल है तो मेरे पास भी मोबाइल होना चाहिए। उसके पास में पर्सनल मोबाइल है तो मेरे पास में भी पर्सनल होना चाहिए। उसके घर में कम्प्यूटर से काम हो रहा है तो मेरे यहां भी कम्प्यूटर से काम होना चाहिए। किसी के घर में फ्रीज आ गया है तो मेरे घर में भी फ्रीज होना चाहिए। इसका कोई उत्तर नहीं है कि अमुक के घर में फ्रीज आया है तो तुम्हारे घर में फ्रीज क्यों आना चाहिए? बस आना है तो आना है। पड़ोसी के घर में है तो मेरे घर में भी होना। हमने उसके हानि और लाभ पर विचार नहीं किया। कुछ लाभ होंगे तो हानियां भी होंगी।

मैं यह नहीं कहता हूं कि लाभ नहीं होता। लाभ भी होंगे किंतु हानियां भी कम नहीं हैं। जब लाभ-हानि की तुलना करेंगे, तो स्पष्ट हो जायेगा। मैं दूसरी बात यह कहना चाहूंगा कि हर किसी में लाभ और हानि की कुछ न कुछ गुंजाइश होती है। हम खाना खाते हैं तो उसमें भी हानि है, उसमें भी लाभ है। लाभ ज्यादा है या हानि ज्यादा है? खाने में नमक भी आएगा। हम कुछ भी खाएंगे उसमें शुगर आएगी। भले ही हम शक्कर नहीं खा रहे हैं किंतु रोटी ही खा रहे हैं, गेहूं की रोटी खा रहे हैं, चावल खा रहे हैं तो उसमें भी शर्करा का भाग है। नहीं है, ऐसी बात नहीं है। वह शरीर में पहुंचेंगे तो हो सकता है कि कुछ नुकसान भी पहुंचे। जब तक हमारी जठराग्नि ठीक है, सबका पाचन करने में समर्थ है तो ठीक है, किंतु नहीं खाएंगे तो शरीर नहीं

चलेगा। शरीर को चलाने के लिए खाना भी जरूरी है किंतु यह देखें कि क्या खाना है जो शरीर को लाभ पहुंचाए और ज्यादा नुकसान नहीं करे।

फ्रीज में रखी हुई चीजें ज्यादा फायदेमंद होती हैं या हानि पहुंचाने वाली होती हैं? जो चीजें स्वाभाविक होती हैं, वे ज्यादा हानि नहीं पहुंचाती हैं और फ्रीज वगैरह में रखी हुई चीजें आप थोड़ी देर बाहर निकालकर रखें तो जल्दी खराब हो जाएंगी। आपने किसी फल को फ्रीज में रखा है। आपने कुछ दिन उसे फ्रीज में रखे रखा, बाद में निकालकर एक दिन बाहर रख दिया। एक दिन बाहर रख दिया तो? (प्रतिध्वनि– फल खराब हो जाएगा।) वैसे वह फल शायद एक दिन में खराब नहीं होता। दो-तीन दिन तक भी ठीक रह सकता था किंतु इतना सोच, इतना विचार क्यों करना? मोबाइल आया, घर में हर व्यक्ति के पास पर्सनल मोबाइल तो होंगे और एक के पास एक है या अनेक हैं।

अभी 5-7 दिन पहले की बात होगी। एक घटना पढ़ने में आई। एक बेटा अपनी मां से अपने बड़े भाई का मोबाइल मांग रहा है। मां उसको नहीं दे रही है, टालने की कोशिश कर रही है। उस लड़के को गुस्सा आया और मां को चाकू लगा दिया। गर्दन पर चाकू फेर दिया। नाबालिग बच्चा, नाबालिग। अभी बालिग भी नहीं हुआ है। उसने कहा कि मैंने तो यह सोचा नहीं था कि मां का गला कट जाएगा। खाली डराने के लिए उपक्रम किया था, किंतु हो गया। इस मोबाइल के पीछे यह घटना घटी।

सुंदर जी भूरा मुझे बता रहे थे कि एक मुस्लिम दंपती की लड़की 10वीं क्लास पास हो गई। उसने अपने पापा-मम्मी से कहा कि मुझे मोबाइल चाहिए। दोनों पति-पत्नी विचार करने लगे कि क्या किया जाए, मोबाइल देना या नहीं देना? दोनों गहन विचार कर इस निर्णय पर पहुंचे कि मोबाइल तो देना पड़ेगा। नहीं दिए जाने पर बात नहीं बनेगी। उन्होंने कुछ शर्तें रखीं। शायद 5 या 7 शर्तें कि इन शर्तों पर आपको मोबाइल मिल सकता है। जैसे– रात को 10 बजे के बाद मोबाइल आपके पास नहीं रहेगा, हमारे पास रहेगा। और भी 4-5 शर्तें थीं। उन शर्तों के साथ उसको मोबाइल दिया गया। मोबाइल तो आप भी अपने बच्चों को देते होंगे! कितनी शर्तें रखते हो? उसको खोलकर, उसकी मेमोरी टेस्ट करने का आपको अधिकार है या नहीं है? (प्रतिध्वनि– नहीं है।) नहीं है? नहीं है? उसकी मेमोरी में क्या है, जानने के लिए देखते हो! यदि आप देख लो तो नाराज हो जाएगा। बेटा नाराज हो

जाएगा, बेटी नाराज हो जाएगी। 'यह मेरा पर्सनल मोबाइल है। आपने इसमें हस्तक्षेप क्यों किया?' क्यों बनी ऐसी बात?

रात्रि को एक डॉक्टर आए। दर्शन करने के लिए आ गए। सेना में डॉक्टर हैं। कुछ बातें चलीं। कुछ उनसे हमने पूछा। फिर उनका भी एक प्रश्न था। उन्होंने कहा कि आपकी अनुमति हो तो मैं पूछ सकता हूं। मैंने कहा हमें क्या परेशानी है, पूछ लो जो पूछना है। उनका कहना रहा कि घर में जो छोटा होता है, उसी को सबकी क्यों सुननी पड़ती है? उसको सबका अपमान और तिरस्कार क्यों झेलना पड़ता है? छोटा कुछ भी बोलता है तो बोल देते हैं कि 'हे! तू चुप रह। तू चुप रह।' उसको बोलने ही नहीं दिया जाता है। एकांतिक बात है। किसी घर में ऐसा हो सकता है किंतु हर जगह ऐसा होता है, ऐसी बात भी नहीं है। बहुत-सी जगहों पर छोटे ऊपर भी आ जाते हैं।

सेठ धन्नाजी की कहानी सुनी है हमने। उनके तीन बड़े भाई थे किंतु बड़े भाइयों की बात नहीं चल पाती थी या नहीं स्वीकृत हो पाती थी और धन्नाजी की बात स्वीकृत हो जाती थी। हालांकि वह भी उनके लिए एक प्रश्न बन गया कि धन्नाजी की बात ही क्यों स्वीकार की जाती है। जहां कहीं हम ऐसा इश्यू बना लेते हैं वहां दिक्कतें आती हैं।

हमारा शरीर अनेक अवयवों से युक्त है। शरीर में हाथ हैं, पांव हैं, सिर है, मुंह है, नाक है, कान हैं, आंखें हैं। सारे अवयव अपना-अपना काम कर रहे हैं। इसमें ऐसा नहीं होता है कि इस हाथ ने काम ज्यादा किया और इस हाथ ने कम काम किया। यह हाथ मेरे को आगे आने नहीं देता है। कोई काम भी होता है, खाना खाना होता है तो दायां हाथ आगे आ जाता है। आ जाता है या नहीं? खाना खाते हैं तो कौन-सा हाथ आगे आता है? (प्रतिध्वनि : दायां हाथ) दायां हाथ ही आगे आता है, ऐसी बात भी नहीं है। किसी का बायां हाथ भी आता है किंतु अधिकांशतया दायें हाथ से खाना खाने वाले होते हैं। अब यदि वे एक-दूसरे का देखते रहेंगे, ऐसा करते रहेंगे तो उसको मारवाड़ी में कहते हैं, 'ईशको करणो' जिसे हम ईर्ष्या करना बोलते हैं।

उन दोनों में ईर्ष्या नहीं होती है कि खाने का काम आता है तो ये हाथ आगे आ जाता है। सेवा का काम होता है तो मुझे आगे आना पड़ता है।

तब यह चुपचाप बैठा रह जाता है। हाथों के बीच आपस में कभी विवाद खड़ा हुआ क्या? यह ध्यान में रखना कि हमारे दोनों अवयव एक समान नहीं होंगे। अपने पैर एक समान नहीं होंगे। दोनों हाथों का काम एक समान नहीं होगा। एक में सक्रियता ज्यादा होगी, एक में कम होगी। ऐसा अनुभव किया क्या आपने? किया या नहीं किया? कभी भी देखना। किसी-किसी की बात अलग है। हमने ऐसा भी सुना है कि आचार्यश्री हरिभद्र सूरी दोनों हाथों और दोनों पैरों से लिखते थे। आज कितने मिलेंगे ऐसे? दोनों हाथों से लिखने की क्षमता फिर भी किसी में हो सकती है किंतु पैरों से लिखने की क्षमता हो सकती है क्या? उनके लिए बताया जाता है कि दोनों पैरों, दोनों हाथों से साथ में लिखते थे। चारों से एक साथ कैसे लिखते? चारों से साथ में कैसे लिखेंगे? समझ में कम आती है बात। संचालन एक स्थान से होता है। संचालन एक जगह से होता है या चार स्थानों से? संचालन की जगह एक है, फिर चारों से कैसे लिख पाएंगे? एक से सोचना एक से लिखना हो जाएगा किंतु ऐसी चर्चा है कि वे चारों से लिखते थे। अब कैसे लिखते थे, हमने तो देखा नहीं है, जाना नहीं है तो कैसे बता सकते हैं? किंतु ऐसी क्षमता किसमें है? कितने लोग हैं? गिने-चुने लोग होते होंगे।

टी.वी. पर महाभारत किसने देखी? राकेश जी देखी क्या? कौरव नरेश का नाम क्या था? (प्रतिध्वनि– धृतराष्ट्र।) उनकी आंखें कितनी थीं? (प्रतिध्वनि– आंखें नहीं थी।) आंखों में ज्योति नहीं थी। आंखों का शेप तो था, आंखें तो थीं किंतु आंखों में ज्योति नहीं थी। हम झट से उत्तर दे देंगे कि आंखें नहीं थी, पर ऐसा नहीं था। ज्योति नहीं थी आंखों में। आंखें तो थीं। महाभारत की जो घटना हुई, जो युद्ध हुआ, उसको कौन सुना रहा था? संजय। संजय सुना रहा था। अब यह बताओ कि संजय यहां बैठा हुआ सुना रहा है तो वह कैसे जान रहा है?

आज हम सोच सकते हैं कि कुछ यंत्र लगा रखे होंगे। हम घर से बैठकर देख रहे हैं कि युद्ध कैसे हो रहा है। यदि आज का युग होता तो बैठे-बैठे देख लो। पर उस समय ऐसा कथन मिलता नहीं है कि आप यहां पर बैठे हुए हो और टी.वी. में देख रहे हो। ऐसा कोई यंत्र लगा हुआ हो और उसको देखकर संजय सुना रहे हों। ऐसा माना गया है कि संजय की दृष्टि दीर्घ थी। जैसी भी दृष्टि रही हो किंतु ऐसे कितने लोग होंगे? कितने लोग मिलेंगे जो वहां की बात यहां बैठे जान रहे हैं? हमारे यहां पर बताया है अवधिज्ञानी के बारे

में। अवधिज्ञान है तो वहां की बात यहां बता सकता है। वहां क्या हो रहा है ये सब बताया जा सकता है। किंतु सामान्यतः देखें तो इस पंडाल के बाहर क्या हो रहा है, पास में ही एक और पंडाल लगा हुआ है, उसमें क्या हो रहा है, कौन-कौन बैठा हुआ है, हमने आते वक्त देख लिया वह अलग बात है, किंतु जिसने वहां से प्रवेश नहीं किया वह बता सकता है क्या कि उसमें कितने लोग बैठे हुए हैं? कौन क्या कर रहा है? कोई मोबाइल चला रहा है या नहीं चला रहा है? ये सब यहां बैठे हुए मालूम पड़ सकता है क्या? मालूम नहीं पड़ता है।

मेरे कहने का आशय है कि कुछ बातें ऐसी होती हैं जो कुछ विरल में होती हैं। हर किसी में नहीं होती है किंतु वसुंधरा बहुरत्ना है। इस वसुंधरा पर ऐसे-ऐसे रत्न हैं, जिसकी हम कोई तुलना नहीं कर सकते हैं। एक किताब निकली हुई है, क्या नाम है उसका? (प्रतिध्वनि– गिनीज बुक)। हां गिनीज बुक नाम है जिसका। उसमें किसके नाम लिखे जाते हैं? गिनीज बुक में उसके नाम लिखे जाते हैं जो अद्वितीय हो। अपने क्षेत्र में उसके समान, उसकी तुलना में कोई दूसरा व्यक्ति नहीं हो। ऐसे कितने नाम आए गिनीज बुक में? पंकज जी शाह कितने नाम हैं? पंकज जी कहेंगे कि नाम किसने देखे? गिनती कौन करेगा?

अरबों लोग हैं और गिनीज बुक में कितने नाम होंगे? (प्रतिध्वनि– हजारों में नाम हैं।) हजारों में होंगे? हजारों में हो गए समझ लो। अरबों के सामने हजार क्या होता है? आटे में नमक का भी पूरा काम करेगा या नहीं करेगा? आटे में जितना नमक डाला जाता है, उतने भी लोग होंगे या नहीं होंगे?

आप लोग विचार करें कि कोई भी नई चीज देखकर आकर्षित नहीं होंगे। उत्सुक नहीं होंगे। उसको अपनाने के लिए तैयार नहीं होंगे। कुछ भी अपना लेने के कारण हमने बहुत सारी हानियां उठाई हैं। आज हमारी संस्कृति की जो हानि हुई है, हो रही है उसके पीछे एक कारण यह भी रहा है कि ये पाश्चात्य चीजें हमारे सामने आईं और हम उनसे आकर्षित हो गए। उनके विचार सामने आए और हम आकर्षित हो गए। भारतीय संस्कृति आत्मशांति की संस्कृति थी और है भी। आत्मसमाधि यदि कभी मिलेगी तो आपको भारतीय संस्कृति के स्वरूप पर आना पड़ेगा। आध्यात्मिक सुख में

कोई तनाव नहीं, कोई टेंशन नहीं है। ये जिंदगी किन संस्कारों से मिलेगी? ये जिंदगी संसार में कहां पर मिलेगी? भारतीय संस्कारों से मिलेगी।

हमारी पढ़ाई, हमारा ध्यान, हमारी विचारधाराएं बदलीं। उसके बदलने से हम तनाव में ज्यादा गए। अपराध में ज्यादा गए। एक समय जब हम भारतीय संस्कृति में जी रहे थे, तब अपराध नहीं थे, ऐसी बात नहीं है। अपराध उस समय भी हुआ करते थे किंतु उस समय अपराध बहुत नगण्य होते। बहुत कम होते। आज चलती सड़क पर आदमी सुरक्षित चल रहा है, यह कहना मुश्किल हो रहा है। सुरक्षित घर पहुंच जाएगा, यह कहना भी कठिन हो रहा है। देखते हैं कि जब देखो, जहां देखो अखबार मार-काट, खून-खराबा से भरे रहते हैं। उसने उसको मार दिया, उसने उसको काट दिया। पिता ने पुत्र को मार दिया तो पुत्र ने पिता को मार दिया। पुत्र ने माता को मार दिया। क्या-क्या खेल हो गए। क्या-क्या तमाशे हो गए। ये खेल किसकी देन है? क्यों है ऐसा? क्योंकि हम हावी होना चाहते हैं। ये हावी होने की जो संस्कृति है, वह भारत की नहीं है। हावी होने की संस्कृति भारत की नहीं है। भारत की संस्कृति आदर प्रधान रही है। उसने हर वक्त दूसरों को आदर दिया है। छोटा है तो भी बहुत आदर दिया है और छोटा बड़ों को आदर देता है। यहां की संस्कृति में वे गुण हैं। इसी कारण से देखें, आज भारत में बहुत सारी संस्कृतियां आई हैं। भारत की संस्कृति ने सबको आदर दिया। कोई भी संस्कृति आई हमने उसको आदर दिया है। हमारे यहां की संस्कृति हावी होने की नहीं, आदर देने की है किंतु जहां हावी होने की बात है, वहां दुःख पैदा होता है, वहां तनाव पैदा होता है।

उस डॉक्टर भाई को भी समाधान दिया। यह एकांतिक ऐसी बात नहीं है। सबसे पहले हमें यह देखना चाहिए कि हमारे मन में ऐसा विचार आया क्यों? हमारे मन में विचार आया है तो पहली कमी हमारी है कि हमारे भीतर सहनशीलता की कमी है, नहीं तो हम में ऐसे विचार क्यों आते? मैं किसी पर हावी होने के लिए तैयार नहीं हूं तो मेरे विचार क्यों बनते? मैं यदि दूसरे को आदर देने की भावना में होता तो मेरे भीतर ये विचार पैदा ही नहीं होते। ये विचार पैदा होते क्या? बड़ों ने हमको क्यों डांट दिया, बड़ों ने क्यों बोल दिया? बड़ों ने कह दिया तो तिरस्कार हो गया। कैसी बात हो गई? बताओ, कैसी बात हो गई? ये लक्षण किसके हैं? ये भारतीय संस्कृति में नहीं हैं।

भारतीय संस्कृति कहती है कि बड़े कठोर शब्दों में कहे चाहे विनम्र शब्दों से, मधुर शब्दों से कहे तो क्या, चाहे कटु शब्दों से कहे तो क्या, उसको हितकारी मानें। ये भारतीय संस्कृति की देन है। आज हमें बड़ों की बात नहीं सुहाती है तो इसका मतलब क्या है? हम कहां जी रहे हैं? भारतीय संस्कृति में जी रहे हैं या कौन-सी संस्कृति में जी रहे हैं? आज भले ही हम भारत में जी रहे हैं किंतु संस्कृति किसकी है? संस्कृति कहां की है? उसके परिणाम हम क्या नहीं भोग रहे हैं? परिवार नियोजन करने की आवश्यकता क्यों पड़ी सरकार को। व्यक्ति स्वयं को मर्यादित रखता तो सरकार को उस प्रकार से सोचना ही नहीं पड़ता। आप सोचें, परिवार क्यों बिखर रहे हैं? संयुक्त परिवार कितने रह गए? मेरे खयाल से कुछेक होंगे, जिनके घर में प्रेम-वात्सल्य बना हुआ है और गाड़ी चल रही है।

मैंने एक दिन पहले भी कहा था कि बैंगलुरु का बम्बकी परिवार है। एक साल पहले उनके परिवार में 77 लोग बता रहे थे। बिना पुण्यवाणी के बहुत मुश्किल है कि परिवार संयुक्त रह जाए। भारतीय संस्कृति का जब तक दौर था, परिवार संयुक्त रूप से जी रहे थे। किसी ने किसी को कुछ कह दिया तो उसको यह नहीं लगता है कि मेरा अपमान कैसे कर दिया? मेरा तिरस्कार कैसे कर दिया? घर में रह रहे हो तो कैसा अपमान? कैसा तिरस्कार? मिल-जुलकर काम कर रहे हो फिर ऐसा क्यों? उसने सुनाया तो क्यों सुनाया? ऐसा विचार, ऐसी सोच मन में आयी ही क्यों? सुनाया तो क्या हो गया? पर, क्यों सुना दिया? ये ओछी वृत्ति है। बहुत संकुचित वृत्ति है। बहुत संकुचित दायरा है। उसने ऐसा क्यों नहीं किया? अरे! उसने कह दिया तो क्या गुमड़े हो गये? यदि एक का स्वभाव ठीक नहीं है तो क्या सबको उसकी बराबरी का हो जाना चाहिए?

संयुक्त परिवार होता किसलिए है? एक आदमी सही नहीं चल पा रहा है तो दूसरा मेंटेन कर ले। यही तो परिवार है। तभी परिवार चलता है। उसको मेंटेन करने के लिए हम तैयार नहीं हैं तो क्या होगा? एक प्रश्न हो सकता है कि कब तक करते रहेंगे? कब तक? कब तक कमाते रहेंगे? आखिर कब तक? यह प्रश्न कभी मत पूछो? मेंटेन कब तक करते रहेंगे, यह प्रश्न खड़ा हो क्यों गया? यह प्रश्न इसलिए खड़ा हुआ क्योंकि मैं कितने वर्षों तक कमाई करता रहूंगा? लाचार हो गया, विवश हो गया। अब उठकर जा नहीं पाता हूं। लाचारी है, मन तो अभी भी दौड़ता है कि दुकान पर जाकर बैठ जाऊं।

दौड़ता है या नहीं दौड़ता? मन में यह प्रश्न खड़ा होता है क्या कि मैं कब तक व्यापार करता रहूंगा? किसलिए करता रहूं? किस-किस के मन में उठा यह प्रश्न? मिन्नी जी कभी उठा क्या? क्या कभी प्रश्न उठा कि व्यापार नहीं करना। (प्रतिध्वनि– उठा है) आप बोल रहे हो कि उठा है तो व्यापार नहीं कर रहे हो क्या? दुकान पर खाली बैठ जाते हो? दुकान पर बैठते हो या नहीं बैठते हो? (प्रतिध्वनि– जब जरूरत पड़ती है तो बैठते हैं।) जरूरत पड़ती है। जरूरत कैसी? जरूरत किसकी?

आप यह विचार कर लो कि मैं घर में हूं ही नहीं। आपने यदि विचार कर लिया कि घर में हूं ही नहीं तो जरूरत कैसी पड़ेगी? जरूरत आप स्वयं समझ रहे हो। जरूरत हमारी नहीं है, यह तो आप समझ रहे हो। घरवालों को बोल दो, परिवार वालों को बोल दो कि मैं नहीं हूं। समझ लो एक पुतला ही हूं। मैं नहीं हूं, यह समझकर चलो।

भगवान महावीर, नंदीवर्धन के कहने पर दो साल घर में रुक गए। घर में वैसे रुके कि मालूम ही नहीं पड़ रहा है कि महावीर घर में रुके हुए हैं। कोई आह नहीं, कोई शिकायत नहीं, कोई कुछ नहीं। किसी प्रकार का अहसास नहीं कि महावीर घर में हैं। यदि व्यापार छोड़ दिया और आप नहीं हैं तो ऐसे बन जाओ कि क्या हो रहा है? कोई प्रतिक्रिया नहीं है। मेरी कोई जरूरत है ही नहीं। न मुझे किसी की जरूरत है और न किसी को मेरी जरूरत है। फिर तनाव होगा क्या? फिर टेंशन होगी क्या? भारतीय संस्कृति का मूल स्वर हम भूल गए। हम भूल गए अपनी संस्कृति की अन्तर्ध्वनि को।

आचार्य पूज्य गुरुदेव का चातुर्मास नोखा में संपन्न हो रहा था। संवत्सरी के दूसरे दिन कई जगहों पर पच्चक्खाण के प्रसंग से गुरुदेव पधार रहे थे। वहीं की एक बात है। वहां पर एक भाई ने निवेदन किया कि गुरुदेव मेरी दादी जी को भी आप दर्शन दे दो। कहा कि तुम्हारा घर कहां है? उसने बताया कि बस स्थानक के एक घर छोड़कर दूसरा घर ही मेरा घर है। गुरुदेव ने कहा कि भले आदमी! इतने दिनों तक क्यों नहीं बुलाया? आज बुला रहे हो? अब जवाब क्या दे? जवाब देने की बात नहीं थी इसलिए जवाब दे नहीं पाया।

उधर से लौटते हुए उस घर में भी गुरुदेव का पधारना हो गया। बाईजी को दर्शन देना हो गया। खींवराज जी लुणावत की धर्मपत्नी की आँखों की

ज्योति मंद पड़ गई। यों कह दें कि दिखना नहीं होता था। शरीर खाट से लगा हुआ था। कब तक रहेगा? क्या रहेगा? कुछ अता-पता नहीं! जब तक श्वास चल रही है तो समझ रहे हैं कि जीवन है। गुरुदेव ने देखा तो वहां पर भी कहा कि ऐसी अस्वस्थता थी तो पहले बोल देते तो कभी भी दर्शन दे देता। गुरुदेव ने माता जी को पच्चक्खाण कराया कि जब तक स्वयं अपना काम करना चालू नहीं कर दे तब तक उनकी पुत्रवधू कुछ भी दे, खाना-पीना, वह सब आगार और बाकी 18 पापों का त्याग। उनको त्याग करा दिया किंतु संथारा नहीं करवाया। स्वयं इस खाट पर जब तक हैं और कुछ खाने-पीने की चीज लाकर दे रहे हैं, वे सारा आगार और बाकी का त्याग।

उनका लड़का वहां था। आज तक गिनीज बुक में किसका नाम है कि जो एक दिन में सबसे ज्यादा बीड़ी पीने वाला है। क्या है ऐसा कोई नाम? एक बाईजी बोल रही हैं कि एक व्यक्ति है जो एक दिन में 36 सिगरेट पीता है। बस! वह तो 36 सिगरेट ही पीता है, एक दिन में। इसमें क्या बड़ी बात हो गई? वे श्रावक जी, जो उन बाईजी के लड़के थे, डेढ़ सौ बीड़ी एक दिन में पीते थे। डेढ़ सौ बीड़ी यानी पांच बंडल। पांच बंडल रोज पीते। एक नहीं, दो नहीं, तीन नहीं, पूरे पांच बंडल। उस समय शायद तीस का एक बंडल होता था। इसलिए पांच बंडल बीड़ी पीते थे। वह डेढ़ सौ बीड़ी रोज पीते थे। मुझे जैसा याद है, वे पांच बंडल बीड़ी रोज फूंकते। उस समय मैं भी वहीं पर था। मैं भी कई बार उनको बोल चुका था। मैंने पच्चक्खाण का कई बार बोला था किंतु वह कहता है कि मैं सौगंध नहीं ले सकता। उस दिन गुरुदेव पधारे तो मैंने कहा कि गुरुदेव घर पधार गए हैं, मौका है त्याग कर दो। बीड़ी पीना छोड़ दो। सौगंध ले लो। उससे पहले भी कइयों ने बीड़ी छोड़ने के पच्चक्खाण लिए थे। पास में एक दूसरा भाई भी खड़ा था। उसने कहा कि भाई, मैं भी पहले बहुत बीड़ियां पीता था किंतु पच्चक्खाण लिया और आज देखो छोड़ दी। कुछ भी नहीं हुआ, बीड़ी छूट गई। उन्होंने कहा कि गुरुदेव से यदि छोड़ी तो छूट ही जाएगी। मैंने कहा कि आप देख लो, विचार कर लो। उसने कहा कि मुझे भी दिला दो पच्चक्खाण। एक झटके में डेढ़ सौ बीड़ी नहीं पीने की सौगंध ले ली।

गुरुदेव का पधारना हो गया। हमको तो नहीं मालूम किंतु दो-चार घंटों में चर्चाएं कुछ और चलने लग गईं। चर्चा चलने लगी कि माताजी कहने लगे कि ग्लास बीच में क्यों रखी है। इसको बीच में से हटा दो, दूर रख दो।

घरवालों को लगा कि इनको सन्निपात हो गया है। सन्निपात में आदमी बेभान में बोलता है। व्यक्ति उस समय क्या बोलता है, उसे कुछ भी मालूम नहीं होता। घर वालों को भी लगा कि वे बेभान में ऐसे ही बोल रही होंगी। इतना ही नहीं वे खाट से भी उठने लग गईं। संयोग से दूसरे दिन पानी लेने के लिए मेरे जाने का प्रसंग बना और वहां घरवाले कहने लगे कि 'दादी ने दिखने लाग गयो है।' यानी दादी को दिखने लगा है। उनको दिखने लग गया और वे खाट से नीचे उतरने लगीं कि महाराज को धोवन दे दूं। मैंने कहा कि नहीं, नहीं रहने दो। क्यों तकलीफ दे रही हो? उन्होंने कहा कि नहीं, नहीं महाराज! और वे उठने लग गई। मैंने भी पूछा कि बाईजी, ये कितनी अंगुलियां हैं? मांजी ने कहा कि म.सा., बावजी आप भी कंई टाबरिया वाली बाता करो? ऐसे खेल तो टाबर/बच्चे खेलते हैं। आप भी ऐसा कर रहे हो। आप भी ऐसे बच्चों के खेल मेरे साथ खेल रहे हो। बावजी, आप भी क्या बच्चों की तरह मजाक कर रहे हो? फिर उठकर बहराने का लोटा लेती हैं और बहराती हैं। उसके बाद तो रोज गुरुदेव के दर्शन करने के लिए स्थानक पर आ जाती थीं।

ये आँखों देखा हाल है। डॉक्टर्स ने पहले भी चेकअप किया था तब ज्योति नहीं थी तो कहा कि आँखों में ज्योति नहीं है और अब ज्योति है तो उसको कौन नकार सकता है? ये सब कैसे हो गया? क्या हो गया? कुछ भी नहीं किया। न कोई आई ड्रॉप डाली, न कोई और दवा डाली। श्रद्धा का आधिक्य क्या नहीं कर देता? अनुराग होता है तो यह सब होता है। ऐसा नहीं है कि गुरुदेव की मांगलिक हो गई तो चमत्कार हो गया। मांगलिक तो सबके लिए होती है। सबके लिए काम करती है। सबको सुनाते हैं किंतु कारगर काम उसी का होता है जो पात्र होता है। उनमें पात्रता रही होगी, उनको आँखों की ज्योति मिल गई। खाट से उठने के बाद उनका चलना-फिरना-घूमना चालू हो गया। उनके पोती ने अठाई की और अठाई के पारणे में भोजन रखा होगा। संप्रदाय की कुछ भिन्नता थी। वहां संप्रदाय आड़े आ गया कि आप स्थानक में नहीं जाएंगे। आप स्थानक में नहीं जाओ। वहां जाना बंद करना पड़ेगा। क्या कर सकते थे? भवन में आना बंद कर दिया किंतु मांगलिक रोज सुनते हैं। गुरुदेव पंचमी के लिए पधारते तो स्थानक के बाहर आकर खड़े हो जाते। वहां आकर मांगलिक सुनते, दर्शन करते। हमारे बीच में ये होता है क्या कि तू दूसरी संप्रदाय का है, मैं तुझे मांगलिक नहीं सुनाऊं।

आती है क्या यह बात? साधुओं में भेद किसने किए? तेरा और मेरा किसने किया? (प्रतिध्वनि– श्रावकों ने)

बड़ी विचित्र बातें लगती हैं। अरे! साधुओं में तो भेद किया सो किया, यहां तक कि मंदिर में भेद है, मस्जिदों में भेद है। ये मस्जिद उनकी और ये मस्जिद उनकी। क्यों भाई? अल्लाह जब आपके सबके हैं तो फिर मस्जिद अलग-अलग क्यों? मंदिर अलग-अलग क्यों हैं? ये सुथारों का मंदिर, ये मुंदड़ा का मंदिर। ये श्वेताम्बरों का, यह दिगम्बरों का। होते हैं या नहीं होते हैं? (प्रतिध्वनि– होते हैं।) वहां पर वही लोग, उसी जाति के आदमी पूजा-अर्चना करेंगे। ये बड़ी विडंबना है। इस तरह भेद करना हमारी नासमझी है। हमारी समझदारी होती तो ऐसी स्थितियां नहीं बनती। मंदिर में मूर्ति वही है। मंदिर में रखी मूर्ति किसने बनाई? किसी कारीगर ने ही बनाई और दूसरे मंदिर में भी उस मूर्ति को उसी कारीगर ने बनायी। मंदिर बना तो बनाया किसी कारीगर ने ही। बस अधिकार हमारा हो गया, ठेका हमारा हो गया। हमने किस-किस को नहीं बांट दिया? परिवार बांटा, धर्म बांटा। जिसे भगवान की सत्ता मानते हैं उस मंदिर-मस्जिद के दरवाजे को भी हमने खुला नहीं छोड़ा। हमने उनको भी बांट लिया। यह दृष्टि हमें कहां ले जाएगी? हम इस दृष्टि से कहां पहुंच पाएंगे?

भारतीय संस्कृति की दृष्टि से विचार करें तो आत्मसमाधि की शोध ही हमारा लक्ष्य होना चाहिए। उसमें भोग को भुजंग माना गया है। वह पिशाच का रूप है। इस पिशाच के पल्ले जो पड़ जाता है उसकी हालत बड़ी खराब होती है। किसी को भूत लगने पर जैसे वह उससे छूट नहीं पाता है वैसे ही मोह का पिशाच जिसको लग जाता है उसकी हालत बड़ी विचित्र होती है।

बन्धुओ! धर्म में भेद खड़े करने के बजाय जो हमारे शत्रु हैं उन्हें दूर हटाओ। मोह पिशाच को दूर हटाओ। उसको एक किनारे करके अपने अंतरंग को साफ कर लो। फिर तुम्हें मालूम हो जाएगा। अपने भीतर की छवि को देखो। जिस दिन हम अपने में अपने को देखने लग जाएंगे तो सारी स्थितियां क्लीयर हो जाएंगी, साफ हो जाएंगी। उस अवस्था में जो आनन्द की वर्षा हमें मिलेगी, वह कुछ अलग ही होगी। उसकी कल्पना, उसकी तुलना हम किसी से नहीं कर सकते। आज हम उस आनन्द को नहीं जान रहे हैं। इसलिए हम उसकी चर्चा नहीं कर पा रहे हैं। जो असली आनन्द नहीं होता, हम उसे आनन्द मान रहे हैं। इंद्रियों से मिलने वाला आनन्द, सुख

पराधीन है। रामचरितमानस में कहा भी गया है कि 'पराधीन सपनेहु सुख नाहिं।' पराधीनता में कभी सुख नहीं है। आत्म स्वतंत्रता, अपनी आत्मा का अनुभव किया सुख का भोग कुछ अलग ही है। इंद्रियों के माध्यम से प्राप्त सुख पराधीन है और पराधीन सुख लंबे समय तक नहीं चलता। जिस दिन हमारे भीतर का भगवान, भीतर का परमात्मा जाग जायेगा उस दिन मंदिर-मस्जिद के भेद, सम्प्रदायों के भेद धरे रह जायेंगे। जब तक इनमें लगे रहोगे, भीतर के भगवान को भूले रहोगे। साथियो! छाया में, माया में मत जीओ। मूल को पकड़ो। मूल है अहिंसा। मूल है समभाव। मूल है ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना।

आज यदि कोई ज्ञान-दर्शन-चारित्र की आराधना हेतु संयम लेना चाहे तो आप कहेंगे कि आपका शरीर बहुत कोमल है। संयम-साधना इतना आसान काम नहीं है कि बस हम संयम लेने की बात करें और ये संयम लिया और हो गई पालना! संयम लेने के सपने देखना बहुत आसान है। दिमाग में संयम की कल्पना करना बहुत आसान है किंतु उसके लिए वैसा शरीर भी तो होना चाहिए। आपका शरीर कितना सुकोमल है! क्या वह संयम की कठिनाइयों को सहन करने में समर्थ होगा? आप कह तो बहुत रहे हैं 'संयम-संयम' किंतु इतना आसान नहीं है। इसलिए आप हमारी बात को सुनिए और उसको स्वीकार कीजिए। आप पहले घर में रहते हुए अभ्यास करें। आपको संयम का अभ्यास नहीं है। शरीर को पहले संयम के अनुकूल करें। शरीर को उसके अनुकूल ढालें। हमारी मनाही नहीं है किंतु यह अभ्यास पहले हो जाना चाहिए। आज भी हमारा प्रयत्न रहता है कि तुम पहले अभ्यास कर लो। क्या अभ्यास कर लेगा वह गृहस्थी में?

सेना में जाने से पहले सेना का अभ्यास क्या होगा? सेना में जाने पर ही मालूम पड़ेगा कि सेना का अभ्यास क्या होता है? यदि उस पर कोई अग्रसर नहीं हो पाता तो उसके लिए जबरदस्ती भी नहीं है। किंतु इतना अवश्य है कि हर नई चीज को देखकर हमारा मन आकर्षित नहीं हो। उसमें लुभाने की बात नहीं हो। यदि हम परिवार में सुखी अवस्था चाहते हैं तो कुछ ऐसी शर्तें रखनी होंगी। हम बच्चों को मोबाइल देंगे तो देखने का हमारा अधिकार रहेगा। आपको हम मोबाइल देंगे किंतु रात को दस बजे के बाद तुम्हारे पास मोबाइल नहीं रहेगा। इसके पीछे बहुत गहरा रीजन (कारण), बहुत गहरी भावना है। बच्चे की रक्षा की भावना है, नहीं तो किधर से किधर

बहकावा हो जाता है। बहकावे में आ जाते हैं। क्या हो रहा है? क्या है वह? लव जिहाद ही नाम है ना? (प्रतिध्वनि– हां) लव जिहाद, नाम भी मुझे याद नहीं है। कभी-कभी लोग सुनाते हैं तो सुनकर बड़ा विचार आता है। किस प्रकार से ये सारा गैंग जैसा कार्य है? किसी घर में धन वाली लड़की है तो कितना पुरस्कार मिलेगा? कितना पैसा मिलेगा?

लव जिहाद के नाम से व्यापार चल गया है। सुनने में आ रहा है आगे से आगे ले जाकर बेच देते हैं। यह क्या है? ये कैसी-कैसी हरकतें होती हैं? यह बहुत बड़ी विडंबना है। मैं जिस समय छत्तीसगढ़ के राजनांदगांव में था, उस समय बहुत कम घटनाएं घटती थीं। वहां पर एक बहन का पत्र मेरे पास आया। उसमें इसी प्रकार से लव जिहाद तो नहीं, पर उसके जैसा समझें, उसने वैसा कार्य किया था। संतान हो गई और अब उस परिवार की भावना है कि वह वापस जैन समाज में आ जाए। मैं उसमें क्या कर सकता था? यह तो समाज की बात है। भारतीय जैन संगठन के पदाधिकारी संयोग से वहां दर्शन करने के लिए उपस्थित हुए। मैंने उनसे कहा कि आपके कार्यक्रम में ऐसा भी कोई प्रसंग या मसौदा है क्या कि जो जैन समाज से बिछुड़ गया हो, वह यदि वापस आना चाहे तो आ सकता है? मैंने कहा कि मेरे पास यह पत्र आया हुआ है। वह पत्र मैंने उनको दे दिया। उसके आगे क्या हुआ, क्या नहीं हुआ, मुझे नहीं मालूम। उसने नाम रखा चंद्रशेखर। शेखर उनकी संस्कृति का नाम और चंद्र भारतीय संस्कृति का नाम। खाना-पीना कुछ भी नहीं किया और परिवार को भी छोड़ दिया। कहने का आशय है कि हमें जब ऐसी स्थितियां मालूम पड़ती हैं तो बड़ी विकट स्थितियां मालूम होती हैं।

हिंदू समाज से जो पहले पलायन कर चुके हैं, वे अब वापस हिंदू समाज में आना चाहते हैं। आर.एस.एस. के लोग बता रहे थे कि जो लोग पहले संस्कृति को छोड़कर चले गए और अब वापस संस्कृति में आना चाहते हैं तो उनको स्वीकार किया जाता है। उनके साथ कोई दुभेद की बात नहीं रखी जाती है। ये सारी स्थितियां क्यों बनती हैं? इनके पीछे राज क्या है? इस पर गहरे विचार की जरूरत है।

हम भगवान महावीर के सिद्धांतों को समझें, विचार करें और भारतीय संस्कृति के उदात्त भावों को समझने का प्रयत्न करें। उद्धात्त भावों में जीयेंगे तो जीवन जीने में कोई टेंशन नहीं होगा। सुख से जी सकेंगे। यदि हावी होने

की संस्कृति में जीयेंगे तो स्वयं का पतन होगा। हम तनाव में जीयेंगे, कषाय और चिड़चिड़ेपन में जीयेंगे तो अशांति में जाएंगे। उस से शांति के झूले में नहीं झूल सकेंगे। यदि हम साधु बन सके तो सबसे अच्छा। नहीं बन पाते हैं तो कम से कम घर में रहते हुए परिवार में भी सुख से, समाधि में जीयें, तनाव-मुक्त होकर जीयें। इस प्रकार का यदि लक्ष्य बनाएंगे तो धन्य बनेंगे। इतना ही कहते हुए विराम।

• पुनश्चः–

गुलाब मुनि म.सा. के संथारे का आज 32वां दिन है। वे शांत-भाव में अपनी समाधि और शांति के साथ संथारे में गतिमान हैं। उनसे भी हम प्रेरणा लें कि ऐसे जीवन में कैसे रहा जा सकता है? हम उनके संथारे के प्रसंग से नियम, त्याग, पच्चक्खाण लें। जैसी अपनी इच्छा, अनुकूलता, सुविधा।

एक बात और है। एक तरफ हम कहते हैं कि बच्चे स्थानक में आते नहीं हैं और दूसरी तरफ बच्चे स्थानक में आ जाएं तो हमें सुहाता नहीं है। बच्चे तो आखिर बच्चे ही हैं। हो-हल्ला, शोर करते हैं वे यहां आकर। आप कहते हैं कि माताएं ध्यान दें। क्या यह अच्छा नहीं होगा कि यहीं पर एक भाई या एक बहन इन बच्चों को एक जगह लेकर एक क्लास चलाकर इन्हें शिक्षा दे। आम के आम गुठलियों के दाम। इसमें लाभ है या नहीं है? फायदा है या नहीं है? राकेश जी क्या होना चाहिए? आप लोग बोल रहे हो कि ये कार्य राकेश जी को ही दे दो। ऐसी कोई बात नहीं है, कोई भी ले सकता है।

एक भाई थे डूंगरसिंह जी डूंगरपुरिया। उदयपुर में बच्चे आते थे तो वे उन सबको इकट्ठा करके उनको ट्रेनिंग देते। कभी कहानियां सुनाते रहते। कभी मौका लगता तो एकाध टॉफी दे देते। यदि कोई बच्चा कभी टट्टी-पेशाब भी कर देता तो उसकी मां और परिवार वालों को बुलाने की आवश्यकता नहीं समझते थे। वे स्वयं साफ-सफाई कर देते थे। वे स्वयं तो बहुत कम व्याख्यान सुना करते थे लेकिन बहुतों को सुनने में सहयोग देते और बच्चों को अच्छी-अच्छी शिक्षाएं देते। अच्छे-अच्छे संस्कार देते। इससे उन बच्चों को भी लाभ हो गया। एक घंटा बच्चे आ गए तो क्या हो गया? आ गए तो क्या हो गया?

यदि बनता है तो यह भी लाभ का कार्य है। यहां पर भी चला सकते हैं ऐसा शिविर। ये मौका अपने आप ही आया हुआ है। ऐसे मौके को क्यों

चूकना? शिविर का लाभ मिल जाता है। जब एक संथारा चलता है तब तक। पिछले दिन भी बोला गया कि रोज 5-5 सामायिक करनी है। जिन लोगों ने पच्चक्खाण ले लिया, उनका तो ठीक है, जो नए आये हैं उनमें से किसी की भावना है तो पच्चक्खाण ले सकते हैं। जब तक संथारा चलेगा तब तक 5-5 सामायिक रोज करेंगे।

12 अक्टूबर, 2019

8

घोटत-घोटत विद्या

शांति जिन एक मुज विनति...

कुएं में भरे पानी को निकालने के लिए कुछ प्रयत्न करना होता है। बाल्टी डालकर भी कुएं से पानी निकाला जाता है और मशीन, यंत्र लगाकर भी कुएं का पानी बाहर निकाला जाता है। कुएं में पानी होगा तो बाहर आएगा। यदि कुएं में पानी ही नहीं होगा तो वह बाहर आएगा कहां से? इसका अर्थ क्या हुआ? इसका तात्पर्य क्या हुआ?

जैसे कुएं में पानी होता है, वैसे ही हमारे भीतर ज्ञान है। बाहर का ज्ञान हमारे भीतर के ज्ञान को प्रकट करने वाला होता है। उससे हमारे भीतर रहा हुआ ज्ञान, सोया हुआ ज्ञान जाग्रत् हो जाता है। वह उदित होने लग जाता है। वह ज्ञान हमारे भीतर है। मैंने एक दिन पहले भी बताया था कि दीये में तेल है किंतु प्रकाश नहीं है। यदि उसमें प्रकाश नहीं होता तो माचिस लगाने पर उस बाती से हमको प्रकाश प्राप्त होता नहीं। उसमें प्रकाशकीय गुण है जो माचिस लगाने के साथ ही प्रकट हो जाता है। वैसे ही हमारे भीतर के ज्ञान को प्रकट होने का चांस है। हमारा प्रयत्न निरंतर रहना चाहिए कि हम कुछ अध्ययन करें। हमारा अध्ययन माचिस जैसा काम करने वाला होना चाहिए। हम किसी किताब को पढ़ते हैं तो वह जरूर हमारे भीतर ज्ञान को प्रकट कराने वाली होती है। उससे हमारे भीतर नई-नई क्रियाएं जाग्रत् होंगी। उससे नये-नये विचार जाग्रत् होंगे। विचार बदलते हैं किंतु विचारों के बदलने से विशेष कोई रूपांतरण नहीं होता। किताब पढ़ते हैं तो विचार बदलते हैं। व्याख्यान सुनते समय विचार बदलते हैं। विचारों में काफी बदलाव आ जाया करता है। ऐसा लगने लगता है कि मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए। वह नहीं करना चाहिए, यह करना चाहिए। ऐसा होना चाहिए, वैसा होना चाहिए। मुझे यह सुधार करना चाहिए, किंतु व्याख्यान के बाद वे बदलाव या वे विचार

गौण हो जाते हैं और जो बदलाव हमारे भीतर आना चाहिए, वह आ नहीं पाता है। किंतु वह आएगा, विश्वास रखें तो वह अवश्य आएगा।

बदलाव तब आएगा, जब हमारी भावनागत स्थितियों में परिवर्तन हो। विचार बदलने के साथ हमारी भावनाएं यदि बदल जाएं तो भावना और विचारों की जुगलबंदी शुरू हो जाएगी। उसमें बहुत बड़ा रूपांतरण घटित होगा। वैचारिक जगत् में परिवर्तन होना दिमाग से संबंध रखता है और भावना में आये परिवर्तन का संबंध दिल से होता है। जो परिवर्तन दिल से हो जाता है, वह महत्त्वपूर्ण होता है, दीर्घकालिक होता है। वैचारिक परिवर्तन दिमाग से होता है और थोड़ी देर में ही बदल जाता है, किंतु भावनागत परिवर्तन जल्दी से बदलता नहीं है।

हम भावनागत परिवर्तन लाने के लिए निरंतर अभ्यास करें। क्यों हमें कहा जाता है कि आप 15 मिनट स्वाध्याय कीजिए, आधा घंटा स्वाध्याय कीजिए। 15 मिनट तो बहुत कम है। हमारे जीवन का केवल एक प्रतिशत है। 24 घंटे में कितने मिनट होते हैं? 1440 मिनट। और उसका एक प्रतिशत? 14.4 मतलब 15 मिनट। हम क्या दे रहे हैं? केवल एक प्रतिशत समय हम स्वाध्याय के लिए निकाल रहे हैं। हमारे पास यदि समय हो तो हमें निरंतर अध्ययनरत रहना चाहिए।

आचार्य पूज्य गुरुदेव को हमने और बहुतों ने देखा होगा कि खाली बैठना उनको सुहाता ही नहीं था। पुस्तकों की एक पोटली अपने पास में बंधी हुई रखते थे। जैसे ही थोड़ी-सी फुर्सत मिलती, उस पोटली में से किताब निकालकर या डायरी निकालकर अध्ययनरत हो जाते। पास में कितने लोग बैठे हुए हैं, पास में क्या हो रहा है, क्या नहीं हो रहा है, उससे कोई लेना-देना नहीं। वे पुस्तक में लीन हो जाते थे। ये ज्ञान ही उनके भीतर दृढ़ता लाने वाला बना। कोई भी पुस्तक पढ़ेंगे तो यह समझ लीजिए कि वह खाली नहीं जाएगी। वह कुछ-न-कुछ हमें देकर जाती है। कुछ-न-कुछ हमें उसमें से प्राप्त होता है। यह बात अलग है कि हम उसमें से कितना प्राप्त कर पाते हैं। सम्राट् ने कह दिया कि मेरे खजाने से तुम्हें जितना धन ले जाना है, ले जाओ। अब ले जाने वाले की मरजी है कि वह क्या और कितना ले जाता है। यदि वह ज्यादा लोभ करता है, लालच करता है और बोरी भरता रहता है, भरता रहता है और समय पूरा हो जाए तो वह कुछ भी नहीं ले पाता है, पर जो समझदार होता है, वह थोड़ी ही बहुमूल्य चीजें, बहुमूल्य वस्तुएं लेकर रवाना हो जाएगा।

एक आदमी गोदाम में से अनाज के बोरे भरने में लगा रहेगा और एक आदमी रत्नों में से केवल एक रत्न ले गया। एक आदमी 10 बोरे अनाज के ले जाएगा और एक रत्न ले जाएगा तो भारी कौन पड़ेगा? (प्रतिध्वनि–रत्न ले जाने वाला) वजन में भारी अनाज पड़ेगा, पर कीमत? कीमत में एक रत्न भारी पड़ जाएगा। ये हमारे पर निर्भर है कि उसमें से हम क्या निकाल पाते हैं? हमने अनेक बार अनुभव किया होगा कि जब भी हम कोई पुस्तक पढ़ते हैं तो हमारे विचारों में कुछ पैदा होता है। हमारे विचारों में नई स्फूर्णा होती है। हमारे भीतर नए विचार कौंधते हैं। यदि हम और अच्छी तरह से प्रवेश करना चाहें, उसमें पारंगत होना चाहें, और अच्छी तरह से रीडिंग करना चाहें तो एक और फॉर्मूला है। वह फॉर्मूला है कि हम एक खाली कॉपी या डायरी अपने पास लेकर बैठें और जैसे ही पुस्तक पढ़ते हुए हमारे भीतर कोई विचार पैदा हो, उसको नोट करें। उस समय हम पढ़ना गौण करके लिखना शुरू कर दें। यानी पढ़ते-पढ़ते पढ़ना छोड़ कर लिख लें क्योंकि जो विचार बने हैं वे बने ही रहेंगे, यह कठिन है।

कभी-कभी कोई कह सकता है कि ये क्या हो गया? पढ़ते-पढ़ते बीच में लिखना शुरू कर दिया किंतु कोई दिक्कत नहीं है। पढ़ते-पढ़ते जैसे ही विचार पैदा हों तो उन्हें नोट कर लें। आप सोचेंगे कि पहले पूरा पैराग्राफ पढ़ लूं, पूरी कहानी पढ़ लूं और उसके बाद लिखूं तो वे विचार, जो आपके भीतर पैदा हुए थे, वे रहेंगे या नहीं रहेंगे, यह कहना मुश्किल है। विचार बहुत जल्दी बदल जाते हैं। बहुत जल्दी गुमनामी में चले जाते हैं। इसलिए पुस्तक पढ़ना बंद करें, लिखना चालू करें। ऐसा यदि करते हैं तो हमारा क्षयोपशम तीव्र होगा और उस किताब को पढ़ने में भी हमारी रुचि ज्यादा हो जाएगी। हम और गहराई से किसी भी किताब को, किसी भी बुक को पढ़ने लगेंगे। हम केवल ऊपर-ऊपर से नहीं पढ़कर गहराई से पढ़ना चाहेंगे।

वर्षा हो रही है। वर्षा के भी अलग-अलग नमूने हैं। एक रिमझिम-रिमझिम वर्षा होती है, दूसरी थोड़ी तेज वर्षा होती है। उससे भी भिन्न कई मूसलधार वर्षा होती है। हैं तो तीनों ही वर्षा, किंतु तीनों में फर्क है या नहीं है? तीनों में फर्क? एक व्यक्ति रिमझिम वर्षा में भीगता है, दूसरा कुछ तेज वर्षा में और तीसरा मूसलधार वर्षा में भीगता है। रिमझिम वर्षा में भीगने में टाइम लगेगा। पूरा शरीर, पूरे कपड़े गीले होने में समय लगेगा। उससे तेज वर्षा में भीगता है तो अपेक्षाकृत कुछ जल्दी भीगता है, पूरा जल्दी से भीग

जाता है और मूसलधार वर्षा में बहुत जल्दी से भीग जाएगा। वैसे ही हमारे भीतर हम किसी ज्ञान को प्रवेश कराने की कोशिश करते हैं या किसी बुक का अध्ययन करने के लिए तैयार होते हैं तो हमारे भीतर से स्पंदन होता है। हमारे भीतर विचार कौंधता है। हमारे भीतर रहा हुआ भाव जाग्रत् होने लगता है। उसको हम जितना मौका देंगे, जितना अवसर देंगे, उतना ही अपने भीतर उन विचारों को परिपक्व बनायेंगे और जैसे-जैसे हमारे विचार परिपक्व बनेंगे, हमारे भीतर दृढ़ता आएगी, हमारे भीतर धैर्य आएगा, सहिष्णुता आएगी, सहनशीलता आएगी, जिसकी आज इस युग में काफी कमी है। कमी तो अभी भी हो ही रही है।

एक जमाने में बहुत दृढ़ता थी, सहिष्णुता थी, सहनशीलता थी। आदमी सहन करना जानता था। आज सहनशीलता जितनी कम हो रही है, उतने ही परिवार टूटते चले जा रहे हैं। इसके पीछे यही कारण है कि हम स्वाध्याय से विमुख रहते हैं। 10-15 मिनट हम पढ़ लेते हैं तो लगता है काफी पढ़ लिया किंतु जिस तमन्ना से, लक्ष्य से और भावना से अध्ययन होना चाहिए, वैसा हो नहीं पाता है। हमने कोई कहानी ले ली और कैसे ही करके 15 मिनट पूरे कर लिए क्योंकि किताब पढ़नी है। वह अलग चीज हो जाती है और भावना से किसी चीज को पढ़ना अलग होता है। एक कार्य करने का भार माथे पड़ गया है इसलिए किया जा रहा है और एक कार्य भावना योग से करेंगे तो उसमें बहुत बड़ा अंतर होगा। जो कार्य भावना से किया जाएगा, उसमें सौंदर्य टपकेगा। उसमें सौन्दर्य पैदा होगा। जो कार्य माथे पर भार पड़ने के कारण करना पड़ रहा है, उसकी बात अलग बनेगी।

आचार्य पूज्य गुरुदेव उदयसागर जी म.सा. ने इसी जोधपुर की धरा पर जन्म लिया। नथमल जी खिमेसरा के घर में बड़े हुए। बड़े विनम्र स्वभाव वाले थे और बड़े विनयवान, गुणवान। अध्ययन-अध्यापन हुआ। शादी की तैयारी हुई। जैसा बताया जाता है कि खूंटा की पोल में शादी के लिए बारात निकली। दोस्त होते हैं, सीख देने वाले। पहले शादी कर चुके एक मित्र ने कहा कि देखो, ध्यान रखना। जब तोरण बांधने के लिए जाओगे तो सासू तिलक करेंगी किंतु तिलक करने के साथ ही वह नाक पकड़ती है। ध्यान रखना, नाक मत पकड़वाना। उदयसागर नाम तो बाद में पड़ा। पहले उनका नाम उदयचंद्र जी था। वे सजग थे, तोरण बांधा गया। सासू जी ने तिलक किया। जैसे ही नाक पकड़ने की तैयारी की उन्होंने माथा ऊंचा कर लिया। जैसे ही माथे को

धक्का लगा, गर्दन में धक्का लगा कि साफा नीचे गिर गया। आज की भाषा में हम बात करें तो मंगल में अमंगल हो गया। सबके चेहरे फक्क हो गए कि यह क्या हो गया? यह क्या हो गया? ऐसे मांगलिक कार्य के समय साफा गिर गया। दोस्तों ने साफा उठाया और सिर पर रखने लगे तो उदयचंद्र जी कहने लगे, बस! बस! गिर गया जो गिर गया।

गिरी पाग वैरागी बन गए
उदय सागर तोरण से फिर गए
तारण तिरण की जहाज, नाना गुरुवर की
सब बोलो जय-जयकार, नाना गुरुवर की
समता की दिव्य मिसाल, नाना गुरुवर की॥

पाग गिरी और जब वापस लगाने लगे तो बस। क्या हो गया? हो क्या गया, जो नहीं होना था वह हो गया। दूसरे शब्दों में जो होना चाहिए था वही हुआ। क्या हो गया? हम उस दृश्य को अपने सामने उपस्थित करें कि जैसा हुआ, उस समय वातावरण कैसा क्या बना? यदि शादी करने वाला व्यक्ति, युवक कहता है कि पाग नहीं लगाना। गिर गई तो गिर गई। अब मुझे शादी नहीं करनी है। उस समय वहां का वातावरण कैसा हो जाएगा? कितने आक्रोश की बात होगी? कोई प्रेम से समझाएगा तो कोई आक्रोश से बोलेगा। कोई डांट लगाकर समझाएगा तो कोई कुछ करेगा, कोई कुछ करेगा।

वह सारा दृश्य वहां पर भी हुआ किंतु उदयचंद्र जी दृढ़भूत रहे। घटना क्या घट जाती है। वह घटना यदि हमें झंकृत करने वाली होती है तो कुछ प्रेरणा देती है अन्यथा घटनाएं तो दिनभर घटती ही रहती हैं। हमारे भीतर उसका प्रभाव, हमारे भीतर उसका इफेक्ट/असर नहीं हो पाता है। बहुत सारी घटनाएं घटती हैं और निकल जाती हैं लेकिन कुछेक घटनाएं प्रभावी होती हैं।

उस घटना ने उनके भीतर का ताला खोल दिया। उनके हृदय का ताला खुल गया। अब वे तैयार नहीं। बड़ी मुश्किल हो गई। कोई कहता है कि हमारी इज्जत खराब हो जाएगी। यह होगा, वह होगा। ऐसे कैसे होगा। इस तरह की बातें हुईं। जिनको इज्जत प्यारी होती है, वे इज्जत का रोना रोयेंगे। पर, ये सामान्य बात है। परिवार वाले और ससुराल पक्ष वाले भी, कइयों को आक्रोश भी आयेगा, किंतु उसको सहन करने की क्षमता होनी चाहिए।

मैंने कहा न कि क्षमता, सहनशीलता। उदयचंद्र जी वैरागी बन गए। दीक्षा की बात होने लगी। घर वाले बोले कि किसी भी हालत में दीक्षा नहीं देंगे। तुम चाहे कुछ भी कर लो। ऐसे कोई दीक्षा होती है! घटनाएं तो घट जाती हैं। हम क्या जवाब देंगे दुनिया वालों को! हम क्या जवाब देंगे हमारे समधी जी को! उन्होंने कहा कि आप कुछ भी जवाब दो, मुझे नहीं पता। मैंने तो जवाब दे दिया।

दीक्षा की बात होती रही। समय निकलता रहा और उनके भाव प्रबल होते गए। उधर घर वाले भी अपने आप में मक्कम कि हम किसी भी हालत में दीक्षा नहीं देंगे। घर वाले सोच रहे हैं कि हम जब तक आज्ञा नहीं देंगे तब तक दीक्षा होगी कहां से। वे नहीं रुक पाए। उन्होंने कहा कि मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि जब तक मुझे दीक्षा की अनुमति नहीं मिलेगी तब तक तीन करण और तीन योग से दया का पालन करते हुए, गोचरी करते हुए विचरण करूंगा और घर में नहीं रहूंगा। वैसा ही उन्होंने किया। वर्षों तक ये कार्य चलता रहा। बताया जाता है कि बीच-बीच में उन पर काफी प्रेशर आने लगा कि पिटाई कर देंगे, ये कर देंगे, वो कर देंगे। ऐसा कर देंगे, किंतु वे अविचल रहे।

'जो बढ़े कदम वो न पीछे हटेंगे, महावीर के हम सिपाही बनेंगे।'

वीर योद्धा कभी पीछे कदम हटाने का काम नहीं करता है। उसके कदम आगे बढ़ते हुए चले जाते हैं। वे भी आगे बढ़ते हुए चले गए। अंततोगत्वा 1898 में उनको दीक्षा दी गई। जहां दीक्षा दी गई, वहां उनका मन नहीं बना। ज्ञान, दर्शन और चारित्र की जिस प्रकार से आराधना होनी चाहिए, वैसी आराधना उनको वहां लगी नहीं, जमी नहीं। 1908 में आचार्य पूज्य श्री हुक्मीचंद जी म.सा., शिवलाल जी म.सा. के पास पहुंचे और निवेदन किया। उनकी भावनाओं को देखा गया, परखा गया और पुनः 'छज्जीवणिया' सुनाकर उनको संघ में सम्मिलित किया गया।

दीक्षा भी हुई। शुद्ध संयम की आराधना के लिए भी तत्पर हुए और कालांतर में जब आचार्य पूज्य श्री शिवलाल जी म.सा. वृद्धावस्था की ओर अग्रसर हुए तो उन्होंने पूज्य श्री उदय सागर जी म.सा. को युवाचार्य बनाया। उनके शासनकाल में जिन शासन की भव्य प्रभावना हुई। रावलपिंडी, लाहौर तक विचरण क्षेत्र रहा और विभिन्न क्षेत्रों से अनेक दीक्षाएं हुईं। शारीरिक अड़चन से घुटनों और पैरों के दर्द के कारण लगभग 15 वर्ष तक रतलाम

में विराजना हुआ। अमरचंद जी साहब पितलिया विनती के लिए आए। आचार्यदेव ने कहा कि भाई आप को फुर्सत कहां रहेगी? उन्होंने कहा कि मैं बराबर सेवा का लाभ लूंगा। उन्होंने 32 आगमों का अध्ययन आचार्य श्री के सान्निध्य में किया और अनेक थोकड़ों का ज्ञान किया। इन थोकड़ों और आगमों के एक-एक सूत्र बड़े महत्त्वपूर्ण हैं। उनको यदि घोटकर पी लिया जाए तो जीवन की दशा आमूल-चूल बदल जाएगी। घोटकर पीने का मतलब यह मत समझ लेना कि कागज को लेकर पीस लो।

एक बाप ने बेटे से कहा कि बेटा जमाना पढ़ाई का है। पढ़ाई वाले की कद्र होती है। नहीं पढ़ने वाले को कोई नहीं पूछता है। इसलिए तुम्हें कमर कसकर पढ़ना चाहिए। दूसरे दिन पिताजी घर में आए तो बेटा रस्सी से कमर कसकर बैठा है। कमर एकदम कसी हुई है रस्सी से। रस्सी से कमर को बांध लिया और पढ़ने बैठ गया। पिताजी आए तो उन्होंने पूछा कि यह क्या हुआ? कमर पर रस्सी कसकर क्यों बांधी है? उसने कहा कि आपने ही कहा था कि कमर कसकर पढ़ तो मैंने कमर कस ली है। 'कमर कसने' का अर्थ होता है पूरा मन लगाकर पढ़ना। केवल शब्दों के अर्थ को पकड़ेंगे कि आपने कहा था कि कमर कसकर पढ़ाई करना, इसलिए मैंने कमर बांध ली है तो ऐसे कमर कसकर बांधने से काम नहीं होता है। हां, यदि दिल लगाकर स्वाध्याय करते हैं तो उसका फल निश्चित रूप से हमारे जीवन में होता है।

आचार्यश्री नानालाल जी म.सा. छत्तीसगढ़ में विचरण कर रहे थे। सड़क पर विहार हो रहा था और ट्रक निकला। सड़क पर ट्रक, गाड़ियां निकलती रहती हैं। वर्षा बरसी हुई थी। कीचड़ भी था, पानी भी था। ट्रक चलने से कीचड़ उछलना स्वाभाविक था। कपड़े खराब होने से बचने के लिए सड़क के साइड में पधार गए। साइड की तरफ जगह चिकनी थी। चिकनी जगह पर फिसल गये और हाथ के बल पर गिरे। हाथ में फ्रैक्चर हो गया। लगभग डेढ़ इंच हड्डी बाहर आ गई। आचार्यश्री उठे और संतों से कहा कि इस हाथ को खींचो। हाथ को खिंचवाकर पट्टे की तरह, कपड़े से उसको बंधवा दिया और जिस गांव में पहुंचना था, वहां पहुंच गए।

रात्रि में बात रायपुर वालों को मालूम पड़ी। सेठानी के नाम से प्रसिद्ध लक्ष्मीबाई जी धारीवाल डॉक्टर को लेकर पहुंचीं। उनके पति का वियोग हुए तीसरा दिन ही हुआ होगा। उन्होंने कहा, कोई बात नहीं। गुरु महाराज की देखरेख करनी है तो आ गई। आचार्यश्री ने कहा कि रात को इलाज नहीं

करवाऊंगा। रात को कोहनी में दर्द बढ़ गया। हाथ में पूरा सूजन आ गया किंतु कोई भी हाय-हल्ला नहीं, कोई हाय-विलाप नहीं। वही शांतता, वही दृढ़ता चेहरे पर झलक रही है, जो सामान्य आदमी की होती है। दूसरे दिन दोपहर के बाद डॉक्टर आए और हड्डी को बिठाकर प्लास्टर किया। कहने का मतलब है कि ज्ञान हमारे भीतर धैर्य को बढ़ाता है, सहिष्णुता को बढ़ाता है। ज्ञान की गरिमा कुछ अलग ही है। क्यों पढ़ने के लिए जोर दिया जाता है? इसे समझें।

आज पढ़ाई का रूप बदल गया है। आज पढ़ने के पीछे चारित्र निर्माण करने की बात नहीं है, व्यक्तित्व निर्माण की बात नहीं है। आज पढ़ाई का मुख्य उद्देश्य पैसा कमाना हो गया। मैं कनोड़ में था, उस समय बी.एड. कॉलेज के संचालक मेरे पास पहुंचे और कहा कि म.सा. बी.एड कॉलेज में आपका व्याख्यान होना चाहिए। उसके एकाध दिन पहले मेरे मन में विचार आया था कि अध्यापकों के बीच में अपने विचारों को यदि रखते हैं, तो व्यसन-मुक्ति की जो बात मेरे दिमाग में चल रही है, वह ज्यादा कारगर हो पाएगी क्योंकि अध्यापकों का संपर्क सीधा विद्यार्थियों से है और वर्तमान में जो गुटखा पद्धति है, वह ज्यादा करके युवा-वर्ग में है। उससे ऊपर वाली एज के लोग बीड़ी-सिगरेट के युग के हैं। उस युग की नशे की लत उनको पड़ी हुई है। वर्तमान युग के युवा बीड़ी-सिगरेट वाले कम होंगे गुटखा, पान-पराग खाने वाले ज्यादा होंगे।

मैंने यह विचार किया था। जैसे बी.एड कॉलेज का न्योता आया तो मैंने विचार किया कि सहज ही कोई मौका मिल रहा है तो जाना चाहिए। मैं वहां गया और व्याख्यान भी दिया। हालांकि 45 मिनट का ही टाइम था किंतु लगभग डेढ़ घंटे का कार्यक्रम मुझे वहां पर करना पड़ा। वहां के प्रिंसिपल ने कहा कि आज हमारे यहां का कार्यक्रम पिकनिक का था किंतु व्याख्यान के साथ ही पिकनिक हो गया है। हमें बड़ी तृप्ति हुई है। उस समय वहां प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे बी.एड के विद्यार्थियों से इंटरव्यू लिया गया और मैंने उनसे पूछा कि आप किसलिए टीचर, अध्यापक बनना चाहते हैं, तो अधिकांश विद्यार्थियों का उत्तर रहा कि जॉब प्राप्त करना, अर्थ प्राप्त करना, घर को चलाना है। आज के विद्यार्थी, जो विद्या ग्रहण करते हैं, उसके पीछे उनका, उनके परिवार वालों का मानस रहता है कि बेटा पढ़कर पैसा कमावे। क्या उद्देश्य रहता है? किसलिए पढ़ते हैं? किसके लिए पढ़ाते हैं? आप लोग भी

बोल रहे हो कि भौतिक ज्ञान के लिए। अरे भाई! भौतिक ज्ञान के लिए तो ठीक है किंतु वह ज्ञान भी किसलिए? किसके लिए पढ़ना? किसलिए पढ़ाते हो?

'विद्या ददाति विनयम्'

विद्या से विनय की प्राप्ति होनी चाहिए। विद्या सदाचार बढ़ाने वाली होनी चाहिए। हमारा आचार-विचार सदाचारमय होना चाहिए। यदि वैसा बनता है तब हमारी विद्या कारगर होती है, अन्यथा यदि हमने पैसे के लिए विद्यार्जन किया है तो फिर हम पैसा कमाने के लिए अग्रसर हो जाएंगे और होना पड़ता है।

एक डॉक्टर ने बात-चीत के दौरान बताया कि जब वह डॉक्टरी लाइन में गया, मेडिकल कॉलेज में प्रवेश लेने लगा तो उसे 80 लाख रुपये का डोनेसन देना पड़ा। डॉक्टर साहब को क्या करना पड़ा? 80 लाख रुपये देने पड़े। अब वह पढ़ाई करने के बाद वापस पैसा वसूल करेगा या नहीं करेगा? सदाचार की बात सीखेगा या कदाचार की बात करेगा?

कुछ दिन पहले चुरू वाले शांतिलाल जी कोठारी उपस्थित हुए। अभी वे कोलकाता में रहते हैं। उन्होंने 1985 में मुंबई में गुरुदेव के दर्शन किये थे यानी आज से 35 वर्ष पहले। बड़े कष्ट में या यूं कहें या समझें कि डांवाडोल स्थिति में थे। मैं सही शब्द नहीं ढूंढ़ पा रहा हूं। मतलब ऐसा समझ लीजिए कि क्या होगा, क्या नहीं होगा की हालत में चल रहे थे। कोलकाता के डॉक्टर शाह ने कहा कि आपको हार्ट की तकलीफ है। आप मुंबई जाओ। उन्होंने जसलोक हॉस्पीटल के डॉक्टर को चिट्ठी लिख दी और कहा कि आप वहां जाकर इलाज करवाओ।

35 साल पहले हार्ट की तकलीफ और उसका ऑपरेशन कराने की बात कोई सामान्य बात नहीं थी। आज तो हार्ट का ऑपरेशन वैसे हो रहा है जैसे सामान्य फोड़ा का ऑपरेशन हो। आज चलते-चलते एंजियोग्राफी हो रही है। ये सब होना सामान्य बात बन गई है। एक-एक हॉस्पीटल में रोज 10-15 ऑपरेशन हो रहे हैं। बड़े-बड़े हॉस्पीटलों में रोज 10-15 ऑपरेशन हो रहे हैं किंतु 35 साल पहले हार्ट का ऑपरेशन आदमी में भय पैदा कर देता था।

शांतिलाल जी मिन्नी उनके बहनोई जी वहां 'शारदा-कुंज' में रहते थे। वे गुरुदेव के दर्शन करने के लिए आए। दर्शन कर वे जसलोक हॉस्पीटल गए।

वहां डॉक्टर से बात की तो डॉक्टर ने कहा कि आपको हार्ट की तकलीफ है, तुरंत हॉस्पीटल में भरती होना चाहिए। तुरंत ऑपरेशन कराना पड़ेगा। उनके बहनोई जी ने विचार किया कि बड़ी बीमारी है, ऑपरेशन का बड़ा काम है। दूसरे डॉक्टर्स से भी राय ले लेनी चाहिए। वे मुंबई हॉस्पीटल में गए। मुंबई हॉस्पीटल के डॉक्टर्स से बात की। डॉक्टर ने उनका चेकअप किया। डॉक्टर ने कहा कि आपको हार्ट की कोई तकलीफ नहीं है।

यह क्या हो गया? क्या हो गया यह? एक डॉक्टर क्या कह रहा है और दूसरा डॉक्टर क्या कह रहा है? एक डॉक्टर कह रहा है कि अभी के अभी भरती हो जाओ। बाद में आओगे तो मैं केस हाथ में नहीं लूंगा। दूसरा डॉक्टर कह रहा है कि हार्ट की कोई तकलीफ है ही नहीं। ऐसी स्थिति बनती है तो आदमी में भय पैदा हो जाता है कि अगर सच में हार्ट की कोई तकलीफ हुई तो बाद में डॉक्टर साहब ऑपरेशन करेंगे नहीं। केस हाथ में लेंगे नहीं और मुंबई हॉस्पीटल में जाने पर डॉक्टर कहता है कि आपको हार्ट की तकलीफ है ही नहीं। वे दुविधा में पड़ गए कि क्या करें? वे गए वापस जसलोक के डॉक्टर के पास और कहा कि डॉक्टर साहब मुंबई हॉस्पीटल के डॉक्टर तो ऐसा-ऐसा बोल रहे हैं। डॉक्टर ने कहा कि देख लो। कराना है तो कराओ। वापस आओगे तो मैं केस हाथ में नहीं लूंगा। फिर वापस वे गए मुंबई हॉस्पीटल में और डॉक्टर से कहा कि डॉक्टर साहब ऐसी-ऐसी बातें हो रही हैं। उन्होंने कहा कि मैं कितने साल का लगता हूं? कहा कि लगभग 55 साल के होंगे। उन्होंने पूछा कि जसलोक के डॉक्टर की एज क्या है? कहा कि 35 साल। मुंबई हॉस्पीटल के डॉक्टर बोले कि जब हम भी 35 के थे तो हमारा भी यह ध्यान रहता कि स्कोर ज्यादा बने और हम ज्यादा से ज्यादा ऑपरेशन करने की फिराक में रहते थे। अब इस उम्र में हमारा भाव रहता है कि हम कुछ लोगों की सेवा कर दें। अब हमारी आंखें खुली हैं, वो बात नहीं है। अब भावना क्या बन गई? डॉक्टर एकदम स्पष्ट बात कह रहा है कि 35 वर्ष पहले हमारे क्या विचार थे? हम भी अपना स्कोर बनाने में लगे रहते कि मैंने इतने ऑपरेशन कर लिए, मैंने इतने ऑपरेशन कर लिए।

आपने कितने रन ले लिए जीवन में? ये बातें सिर्फ और सिर्फ धन कमाने में होती हैं। यह कौन बताएगा कि मैंने इतनी सामायिक कर ली। मैंने इतने पौषध कर लिया? नेमीचंद जी कुछ बोल रहे हैं कि इतने पौषध कर लिए। नेमीचंद जी ने पौषध कर लिए तो कर लिए। उन्होंने कोई गिनती नहीं

लगाई होगी। लेकिन हमने कितने पौषध किये? एक साल में एकाध पौषध हो गया तो बड़ी बात है। संवत्सरी भी निकल जाए तो निकल जाए। धक्के से निकल जाए। कोई प्रेरणा कर दे और करना पड़ जाए तो कर लिया। कोई कह दे तो सफेद कपड़े पहनकर बैठ गए। जबरदस्ती की बात अलग है किंतु राजी मन से, अपने मन से पौषध करने वाले कितने हैं? कितने हैं कि महीने में छः पौषध करते हैं? एक भाई कह रहा है कि वह महीने में छः पौषध करता है। अरे! ये अहमदाबाद में रहते हैं, छः पौषध करते हैं। करने हैं तो करने हैं। कठिनाई कुछ नहीं होती है। अपने मन में कठिनाई होती है। हमारा मन जिस वातावरण में चल रहा है उस से जब तक हम मुड़ेंगे नहीं तो कुछ नहीं होगा।

मैंने अभी बताया ना कि जब तक भावात्मक परिवर्तन नहीं आएगा, केवल वैचारिक परिवर्तन आएगा, वह यहां व्याख्यान में बैठने तक ही रहेगा। यहां व्याख्यान से उठकर जाने के बाद वह परिवर्तन नहीं रहेगा। यहां खड़े हो गए तो खड़े हो गए। यहां कोई दीक्षा लेने के लिए खड़ा हो गया तो बात अलग है पर बाहर जाने के बाद भाव क्या रहेंगे? दूसरे ही क्षण क्या हो जाएगा? रुपये का कितना हो जाएगा? मदनलाल जी, एक रुपये के कितने पैसे रहेंगे? चालीस या पचास? कितने हो जाएंगे? मालूम नहीं है। आप विचार करें कि आज जिस लक्ष्य से अध्ययन हो रहा है, वहां सत्यता की बात बनेगी या कुछ और! क्या बात बनेगी? कैसी बात बनेगी? इसलिए आज की पढ़ाई में पढ़ने वाले पढ़े-लिखे भी अपराध की वृत्तियों से जुड़ जाते हैं। नशे-पते की चीजों से जुड़ जाते हैं। पढ़े-लिखे लोग यदि नशा-पता करें तो बात समझ में नहीं आती है कि ये लोग क्या कर रहे हैं। वे पढ़े-लिखे हैं, जानते हैं कि नशा नाश का द्वार है। यह शरीर का नाश कर देता है, बुद्धि का नाश कर देता है, धन का नाश कर देता है, संस्कारों का नाश कर देता है, फिर भी लोग उससे जुड़ जाते हैं तो विचार होना स्वाभाविक है। लोग कहते हैं कि आदत पड़ गई। वह आदत पड़ क्यों गई, इसका उत्तर नहीं। बस पड़ गई, अब उसका छूटना मुश्किल हो गया।

ध्यान रहे। ये आदतें तब तक बनी रहेंगी जब तक भावात्मक रूप से परिवर्तन नहीं होगा। भावात्मक रूप से परिवर्तन नहीं होगा तो आदतें बदलेंगी भी नहीं।

महाराज के व्याख्यान में एक चोर गया। महाराज का व्याख्यान सुनकर उसने विचार किया कि मुझे दीक्षा ले लेनी चाहिए। उसने कहा कि

गुरुदेव, मुझे दीक्षा दे दो। मैं साधु बन जाऊंगा और अब ये सारे धंधे नहीं करूंगा। महाराज ने उसके ऊंचे विचारों को देख उसको दीक्षा दे दी। किसी भी संन्यासी, संप्रदाय में गया होगा किंतु दीक्षित हो गया। दीक्षा के बाद रोज गड़बड़ियां होने लगीं। साधु लोग परेशान हो गए। किसी साधु का सामान कहीं मिलता, किसी का सामान कहीं मिलता। इस साधु का सामान वहां पड़ा मिलता और उस साधु का सामान यहां पड़ा मिलता। वह चोरी तो नहीं कर रहा था किंतु हेराफेरी करने की आदत मिटी नहीं। इसका सामान उठाया और वहां रख दिया। उसका सामान उठाकर कहीं और रख दिया। यह रोज-रोज की परेशानी होने लगी। ये सब कैसे क्या होता है, कुछ समझ में नहीं आ रहा था।

एक दिन गुरु महाराज ने विचार किया कि अब मुझे देखना पड़ेगा कि आखिर बात क्या है। जिस कारण से रोज समस्या हो जाती है। यह साधु कहता है कि मेरा सामान तुम्हारे पास से मिला और वह साधु कहता है कि मेरा सामान तुम्हारे पास से मिला, तुमने मेरा सामान उठाया है। उससे थोड़ी बहस की स्थिति बन जाती है, थोड़ी क्लेश जैसी स्थिति बन जाती है। उस रात्रि में गुरु महाराज जगे। जैसे ही आधी रात हुई, चोर का समय हुआ। वह महात्मा जी, जो पहले चोर थे, उठे और इधर का सामान उधर, उधर का सामान इधर करने लगे। वह यह सब कर रहा था कि गुरु महाराज ने हाथ पकड़ लिया कि क्या कर रहे हो? उसने कहा कि मुझे मालूम ही नहीं पड़ता कि मैं क्या कर रहा हूं। वह समय उसके नशे का था, उसकी आदत का था। रोज की आदत थी, नशा था। नशे का, आदत का समय जैसे ही आता कि अन्दर कूक उठती है कि अब कर लो, अब कर लो। वह सारा उलटा-पुलटा कर देता।

हमारी स्थिति क्या है?

रोज सामायिक करने का नशा है चार बजे का। चार बजे उठकर सामायिक करनी पड़ती है। वह नशा जब तक पूरा नहीं हो जाए तब तक चैन नहीं पड़ता है। किंतु नशे से सामायिक मत करो, उद्देश्य से सामायिक करो। जागरूकता से सामायिक करो। सामायिक आदत से नहीं, नशे से नहीं, भीतर की जागृति से होनी चाहिए। उसके भीतर हमारा जागरण होना चाहिए। यदि जागरण नहीं हो रहा है तो वह भी केवल एक प्रवाह का रूप हो जाएगा। प्रवाह में हमारी सामायिक नहीं जानी चाहिए। हमारी धार्मिक क्रिया प्रवाह

में नहीं जानी चाहिए। हम उसका अनुभव करें और अनुभव करके उसका लाभ उठाएं। तभी तो हम धार्मिक क्रिया का लाभ उठाने वाले बनेंगे! उससे लाभान्वित होंगे, अन्यथा हम केवल क्रिया कर लेंगे, उसका विशेष लाभ नहीं उठा पाएंगे।

आचार्य पूज्य गुरुदेव श्री उदयसागर जी म.सा. ने जिन शासन की भव्य प्रभावना की। आज भी खिंवेसरा परिवार के लोग मौजूद हैं। उससे पहले उगमराज जी, संपतराज जी भी सेवा में मौजूद रहे हैं। उगमराज जी को क्या बोलते थे? ठाकुर साहब बोलते थे या क्या बोलते थे? (प्रतिध्वनि–ठाकुर साहब बोलते थे।) ठाकुर साहब उनको बोलते थे। ठाकुर साहब जैसा उनका रुतबा था।

आचार्यश्री उदयसागर जी म.सा. के जन्म को लगभग दो सौ वर्ष व्यतीत होने जा रहे हैं। दो सौ वर्ष पूरे होने को आ रहे हैं। उनके बाद के पूज्य गुरुदेवों ने जिनशासन की प्रभावना के लिए बहुत परिश्रम किये, बहुत मेहनत की। आज जिस प्रकार का सुखमय जीवन हम देख रहे हैं, सुखमय वातावरण देख रहे हैं उसकी जड़ों में हम झांकेंगे तो उसमें आचार्य देवों का खून-पसीना सींचा हुआ मिलेगा। वह क्षण भी कितना कठिन था, कष्टकारी था जिस समय नाना गुरु को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। जब वे आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए तो गिनती के साधु-साध्वी थे। साधु और साध्वियों को मिलाकर लगभग 70 के आस-पास की संख्या होगी। उसमें से भी बहुत सारे साधु वृद्ध थे। विचरण करने वाले तो कुछेक सिंघाड़े थे। दीक्षाएं जैसे-जैसे होती गईं आचार्यदेव ने साधुओं को पढ़ाया-लिखाया। नियम सिखाए। संस्कार देते हुए ये सारा कार्य उन्होंने किया। वैसे आचार्य का कार्य अलग होता है, प्रवर्तक का कार्य अलग होता है। किंतु वहां सारा कार्य आचार्यदेव को करना होता था। फिर जनता से भी संपर्क करना, जनता के बीच में आना होता था।

जब उस समय की बातें सुनते हैं, पढ़ते हैं और गुरुदेव के मुंह से भी सुनते थे तो लगता था कि कितना पुरुषार्थ था उनका। हमारे जैसों के लिए तो एक व्याख्यान आ जाए तो फिर उसके अलावा न कोई पढ़ाई, न कोई लिखाई और न कोई दूसरी बातें, न कोई जनसंपर्क। एक व्याख्यान कर दिया बस हो गया। उस समय कई जगहों पर पच्चक्खाण, त्याग के लिए घरों में पधारना होता था। बहुत ही पुरुषार्थ उनका होता रहा। कड़ी मेहनत से

जिनशासन को उन्होंने सींचा। उस कारण से हमें धर्म के संस्कार मिले, श्रद्धा के संस्कार मिले। हम श्रद्धा के संस्कारों को पल्लवित करें, पुष्पित करें।

जंबू कुमार ने आचार्य श्री सुधर्मास्वामी का उपदेश सुना और भरी जवानी में उनके भीतर वैराग्य जग गया। कुछ भी पता नहीं पड़ता है कि प्रीत कब लग जाए। कब प्रीत लग जाती है, कुछ भी पता नहीं पड़ता है। कभी बचपन में लग जाती है तो किसी को जवानी में लग जाती है। कभी-कभी बुढ़ापे में भी ये प्रीत लग जाती है और व्यक्ति उसमें आगे बढ़ जाता है। जब प्रीत लग जाती है तब भावात्मक परिवर्तन स्वतः अन्तर में घटित हो जाता है।

उस समय वह एकदम कोमल शय्या पर सो रहा था। गरमी का समय आने पर खस-खस की पट्टियां लग जाती थीं। आजकल ए.सी. वगैरह हो गए हैं, पहले तो गरमी में खस-खस की पट्टियां लगा दी जातीं और उनमें पानी का सिंचन होता था। जब हवा आती तो वह उससे टकराकर, उसमें से होकर आती थी। हवा ठंडी हो जाती थी, इसलिए गरमी लगती नहीं थी।

सरदी का समय आता तो शॉल, दुसाले आदि की व्यवस्था हो जाती थी। गादी, तकिये की सारी सुविधा हो जाती थी। पर, दीक्षा के बाद कहां कैसी सुविधा मिले, कहना आसान नहीं है। अनेक बार कई कठिनाइयों से गुजरना पड़ जाता है। भोजन भी कैसा मिलेगा, पता नहीं है! घर में व्यक्ति जो चाहता खाने को मिल जाता। मन की मुराद पूरी हो जाती। आज भोजन में यह चीज चाहे तो यह चीज मिल जाती। साधु बनने पर यह संभव नहीं है। वहां उसके मुताबिक कोई चीज बनने वाली नहीं है। वहां तो अनेक घरों से मांगकर थोड़ा-थोड़ा करके भिक्षा लेनी होती है। वहां कैसी भिक्षा मिलेगी पता नहीं होगा। कहीं पर तो भिक्षा दे दी जाएगी और कहीं पर भगा दिया जाएगा कि 'चल यहां से। हट्टा-कट्टा साधु है और आ गया मांगने के लिए। शर्म नहीं आती है। कहीं और जाकर मांग।' ऐसा नहीं है कि ऐसा नहीं होता है। कभी-कभी ऐसी घटना भी घट जाती है। पर वास्तव में जिसका अन्तर भावात्मक रूप से बदल गया है, उसके लिए सारी कठिनाइयां, कठिनाइयां नहीं रह जाती। उनमें भी वह आनन्द पा लेता है।

मुनि अवस्था में आचार्य गणेशलाल जी म.सा. भिक्षा के लिए गए। एक घर में प्रविष्ट हुए। वहां एक व्यक्ति संतान को गोद में लेकर खिला रहा

था। मुनि गणेशलाल जी ने कहा कि भाई कुछ खाना बना हुआ है घर में? उस व्यक्ति ने उनको ऊपर से नीचे देखा। मतलब पहले कभी साधु को देखा नहीं होगा, ऐसे ऊपर से नीचे गौर से देखता है। फिर कहा कि 'जाओ यहां से। हट्टे-कट्टे हो और मांगने के लिए आ गए। कमाकर नहीं खा सकते क्या? आ गया मांगने के लिए। ऐसे लोगों को दे दूं तो मंगतवाड़ा बढ़ेगा। जाओ यहां से।'

गणेशाचार्य जी ने कहा कि 'वा भाई, वा भाई जाता हूं यहां से। शांति रखो, गुस्सा मत करो, हम तो ये निकले।' वे वापस घूम गए वहां से। वहां से दरवाजे पर गए। पहले दरवाजे में छोटी खिड़की होती थी। उसकी एक बारी खुली रहती थी। उस बारी में से गुरुदेव ने एक पैर बाहर रखा, दूसरा पैर बाहर निकालने के लिए, उठाने के लिए तैयारी में थे कि उस व्यक्ति ने कहा कि 'ले, ले आया है तो ले जा, आया है तो ले जा।' क्या करना ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाने पर?

मुंह से कहना आसान है। ऐसी घटना घट जाए तो कहने लगेंगे कि 'जा-जा तुम्हारे जैसे बहुत सारे घर हैं, तुम्हारी रोटी के भरोसे नहीं बैठा हूं' किंतु नहीं। वे महात्मा वापस मुड़े। कहा कि वा भाई ठीक है, तुम्हारी इच्छा है तो दे दो। 'कोई नटे, कोई पटे' यही काम होता है। कहने में तो बहुत आराम से कहना हो जाता है किंतु हकीकत तो तब ज्ञात होगी जब घटना घटे।

जोधपुर से गुरुदेव का विहार बालेसर की तरफ हो रहा था होली चातुर्मास के लिए। बीच में बम्बौर गांव आता है। उसमें एक-दो या तीन घर जैनियों के थे। वहां से आगे बढ़ने लगे तो वहां पर भी गोचरी के लिए अनुकूलता नहीं थी। सोचा बीच में कोई ढाणी हो तो देख लेते हैं। उगमराज जी मेहता (जोधपुर, कर्मठ सेवाभावी) भी वहां आ गये। वे गोचरी में प्रायः साथ में रहते थे। आज उगमराज जी क्यों याद आते हैं? क्यों याद आता है उगमराज जी का नाम? कोई भी साधु आ जाए तो जैसा कि आप लोग बोल रहे हो, कि बाबजी कोई भी साधु आते तो उनके साथ में चले जाते। बड़ी सेवा करते थे साधुओं की, इसलिए याद रखा जाता है। बड़ी सेवा का मतलब हाथ दबाना मत समझ लेना। वह तो गृहस्थ से साधु को कराना भी नहीं कल्पता। संत-सती क्षेत्र से वाकिफ नहीं होते तो गोचरी-पानी के लिए घरों को बता देना ही बड़ी सेवा है। वैसे हमने कह दिया था कि हमारे विहार में साथ में आने की आवश्यकता नहीं है। सतियां जी को संभालना होता है

तो उनके साथ जाना पड़ता है। वह बात अलग है। संतों को क्या जरूरत है, फिर भी वे आ जाया करते थे वहां पर।

मैंने उनसे पूछा कि यहां कोई ढाणी है क्या? उन्होंने कहा कि बिल्कुल है। यहां पर ढाणियां ही ढाणियां हैं। दूर-दूर तक ढाणियां ही ढाणियां हैं। बस ढूंढ़ो तो मिल जाएगी। देवता जी म.सा., रमेश मुनि जी म.सा. भी गुरुदेव के साथ में थे। गुरुदेव से निवेदन किया कि हम गोचरी के लिए चलते हैं तो कहा कि जाओ। हम गए गोचरी के लिए। देवता जी म.सा. सड़क के किनारे पर रुके। मैं गया अंदर। लगभग आधा किलोमीटर अंदर जाना था। वहां पर दो ढाणियां थी। लेनी है रोटी तो आधा किलोमीटर देखने वाला नहीं चलेगा। जाना ही पड़ेगा। गए और कोई वैरागी मेरे साथ में था। चेहरे पर उत्तरासन लगा हुआ था। मुंह पर ऐसा बंधा हुआ था कि आदमी डर ही जाए कि ये कौन आ गया। मैं अंदर गया तो एक बहन थी। उसने हमको देखते ही, 'कुण हो, कुण हो, रुको-रुको, कुण हो थे।' वह महिला जोर से बोली। जो वैरागी भाई साथ में था वह रसोई में झांकने लगा तो वह और जोर से चिल्लाई। मैंने उस वैरागी से कहा कि तुम पहले इधर आ जाओ। पहले घर में ताक-झांक मत करो।

मैंने उस बहन से कहा कि हम जैन मुनि हैं। बोली, तो क्या? मैंने कहा कि घर में कोई राब-रोटी हो तो दे दो। बोली कि मुंह पर ये क्या बंधा है? उसको नहीं पता था कि ये सब क्या होता है। उसने और भी प्रश्न किए। उन सब बातों का मैंने समाधान भी दिया। फिर कहा कि 'वा लाऊ राब-रोटी, उबा रो (खड़े रहो)।' मैंने कहा कि ऐसे नहीं हम देखकर लेते हैं। सब कुछ देखने के बाद उसने आधी रोटी और एक लोटा राब बहरा दी। हमको अब क्या करना? हमारा काम तो हो गया। पानी वगैरह नहीं था तो नहीं लिया। दूसरे घर में गए तो वहां पर भी बहन ने पूछा कि कुण हो? बोली कि कौन हो तुम ऐसे कपड़े पहने हुए, तो उस पहली ढाणीवाली बहन ने कहा—ऐ बाई! ए तो महाराज है। राब-रोटी लेवे।' दूसरे घर पर फिर वैसी चिल्लाने की, डरने की कोई बात नहीं हुई। कई-कई जगह हो जाती है। वहां पर धैर्य रखना पड़ता है। ऐसी घटनाएं बहुत बार हो जाया करती हैं। कई साधु-साध्वियों के साथ घट जाते हैं ऐसे प्रसंग, किंतु ऐसे समय में साधु की परीक्षा होती है कि वह कितना दृढ़ है। इसलिए दीक्षा लेने वाले को पहले सोच लेना चाहिए कि दीक्षा नानी का घर नहीं है।

दीक्षा लेने के बाद सदा एक-सी स्थिति नहीं रहती है। वहां पर पता नहीं कि कैसा भोजन मिलेगा। गोचरी पर जाएंगे तो कैसी-कैसी बातें सुननी पड़ेंगी? किस-किस का सुनना पड़ेगा, क्या-क्या सुनना पड़ेगा! आज तक उसने किसी का नहीं सुना होगा। आज तक उसके हाथ दान देने की मुद्रा में रहे हैं। लेने की मुद्रा में, स्थिति में नहीं रहे होंगे। जो आदमी सदा यों हाथ करके (दान देने की स्थिति में हाथ करके) देने वाला होता है। हमेशा हाथ उलटा ही रहा है किंतु दीक्षा के बाद हाथ मांगने वालों की तरह करना पड़ेगा। हाथ को सीधा करना पड़ेगा। (मांगने की स्थिति में हाथ करना पड़ेगा।) जो हमेशा दान देता रहा है उसको बरतन देकर कहे कि तू मांगकर ला तो उससे मांगा नहीं जाएगा। वह कहेगा कि मुझे शर्म आती है। साधु जीवन में यह शर्म काम नहीं आएगी। उसको हटाना पड़ेगा। पहले जो आपके घर पर काम करता रहा हो, उसके घर जाकर मांगना पड़े, उसके आगे हाथ फैलाना पड़े तो ऐसा नहीं कि मैं वहां नहीं जाऊंगा। मैं उसके सामने हाथ नहीं फैलाऊंगा। ये तो मेरा नौकर था, ये तो दास था। ये पहले मेरी नौकरी करता था, चाकरी करता था। इसके यहां पर मैं नहीं जाऊंगा। उसे वहां जाना चाहिए या नहीं जाना चाहिए? (प्रतिध्वनि– जाना चाहिए) भेद रहेगा तो साधुता सही नहीं बनेगी। साधु के लिए तो सारे ही घर एक समान हैं। जो हमारे कल्प के अंतर्गत आते हैं, जिसके यहां मांस नहीं पकता है, जो यह नहीं कह दे कि मेरे घर पर नहीं आना, ऐसे घरों के अतिरिक्त चाहे किसी का भी घर हो, वहां भिक्षा के लिए जाना हो सकता है।

बंधुओ! ऐसा मत समझ लेना कि साधु-जीवन में कठिनाई है ही क्या? मांगो, लाओ और खाओ। मांगना जितना आसान लगता है, उतना है नहीं। बड़ी टेढ़ी खीर है। ध्यान रखना! चलना नंगे पांव होगा। कहीं सड़कें ठीक होंगी तो कहीं नुकीली होंगी जिनसे पैर छिल जाते हैं। छिल सकते हैं।

सड़कें कंकरीट वाली होंगी, कहीं पर कांटें होंगे, कहीं पर कीलें होंगी, कहीं पर कच्चे रास्ते होंगे। वहां पर चलने से कभी पैर में लहू की धार बह जाएगी तो क्या होगा? सूर्य ऊपर से आग बरसाता है। ऐसी आग के बरसते हुए समय में भी गोचरी के लिए जाना पड़ेगा। यदि ऐसे में गोचरी के लिए निकलना पड़ गया तो ऐसा होगा कि नहीं, नहीं इतनी गरमी में मैं नहीं जाऊंगा गोचरी के लिए। दूसरा चला जाएगा। दूसरा साधु कहेगा कि जब ये नहीं जा रहे हैं तो मैं क्यों जाऊं? यदि तुम नहीं जाओगे तो किसको जाना

पड़ेगा? भूख लगेगी तो जाना ही पड़ेगा। भूख लगती है तो जाना ही पड़ता है। अतः साधु जीवन में कष्ट, कठिनाइयां नहीं आती ऐसी बात नहीं।

अभी कुछ समाचार मिले हैं कि पतासी देवी सांखला का स्वर्गवास पिछले महीने सितंबर में हुआ। उनके परिवार वाले यहां मौजूद हैं। उन्होंने शोक तोड़ दिया। पहले भी भाई मदनलाल जी की माता जी का स्वर्गवास हो गया था पर उन्होंने शोक नहीं रखा। शोक रखना भी नहीं चाहिए। गई हुई चीज वापस आने की होती नहीं है। मेरा उन परिवार-जनों को सुझाव है कि अपने को स्वाध्याय से जोड़ें। स्वाध्याय से शोक दूर होगा। दिल को तसल्ली मिलेगी, समाधि मिलेगी।

हम यदि तीर्थंकर देवों का आधार लेकर स्वाध्याय करेंगे तो शोक की बातें हमारे दिमाग से निकल पाएंगी। हम अच्छे ग्रंथों का स्वाध्याय करें और स्वाध्याय की दिशा से अपने भीतर ज्ञान की पैदाइश करें। बाहर का ज्ञान चाबी का काम करे, बाहर का ज्ञान बाल्टी का काम करे जो कुएं से पानी खींच सकती है। इस प्रकार से यदि हम अध्ययन करेंगे तो हमारे भीतर नए-नए ज्ञान का प्रकाश हो पाएगा। नई-नई विचारधाराएं पैदा होंगी। उन विचारधाराओं से हो सकता है कि एक दिन हमारा दिल, हमारी भावना में भी परिवर्तन आ जाय और हम सही दिशा की ओर आगे बढ़ सकें। ऐसा यदि हम करेंगे तो धन्य बनेंगे।

गुलाब मुनि जी म.सा. के संथारा-संलेखना का आज 33वां दिन हो गया है। हम भी उनसे प्रेरणा लें। कुछ भी पच्चक्खाण, कोई भी नियम धारें अपनी क्षमता के अनुसार। इतना ही कहते हुए विराम।

13 अक्टूबर, 2019

9

अखूट खजाना भरा पड़ा

शांति जिन एक मुज विनति...

हमारे भीतर अनेकानेक शक्तियां हैं। हमारे भीतर शक्तियों की कमी नहीं है। बहुत सारी शक्तियां भरी हुई हैं। हम उनकी पहचान नहीं कर पा रहे हैं। हमें उनकी पहचान नहीं है, इसलिए उन शक्तियों का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। उन शक्तियों को प्रकट नहीं कर पा रहे हैं। हम एक दिन उनकी पहचान करने में समर्थ हो जाएंगे। जब उन शक्तियों की पहचान हो जाएगी, उनकी उपादेयता का जब हमें बोध हो जाएगा, उनकी उपयोगिता की जब हमें माहिती हो जाएगी तो वे शक्तियां कार्यरत हो जाएंगी। वे शक्तियां उपयोग में आने लग जाएंगी।

राजसमंद जिला के नाथद्वारा के आसपास के क्षेत्र में बड़ी-बड़ी पहाड़ियां थीं। वर्षों से पड़ी थीं। किन का ध्यान गया उस तरफ? (प्रतिध्वनि– किसी का नहीं) किंतु जब उसकी पहचान हुई और मालूम हुआ कि यहां पर कीमती पत्थर है तो उनकी खुदाई चालू हो गई। फिर जितनी भी पहाड़ियां उन्नत थीं, लगभग उतनी ही गहरी खदानें हो गईं। मतलब, उन्हें उतना गहरा खोद दिया गया। जैसा कि मुझे जानकारी में आया है, वहां पर ग्रेनाइट पत्थर उपलब्ध हुआ। इस भूमि में, जमीन में कौन-कौन-से खनिज नहीं हैं? कौन-कौन-से पत्थर नहीं हैं? ये हम पर निर्भर है कि हम उनमें से कितना प्राप्त कर पाते हैं। जब तक हमें पहचान नहीं होती है, तब तक हम उसको प्राप्त करने में उद्यमशील नहीं होते हैं। हम उद्यमी नहीं बनते हैं। इसकी उपादेयता क्या है? जरूरत क्या है? वह चीज है क्या? जब तक मालूम नहीं पड़ता, हम उस ओर उद्यमी नहीं होने पाते हैं, उद्यमशील नहीं होते हैं। जब मालूम हो जाए, तब हम रुकने वाले भी नहीं हैं।

एक सेठ था, जिसकी ब्रांच दूसरी जगह भी थी। उसके वहां एक व्यक्ति था, जिसके लिए यह भी कह सकते हैं कि वह सर्विस कर रहा था। दूसरे शब्दों में कहें तो उसकी कोई सर्विस नहीं थी। वह अपनी जरूरत-भर का पैसा खर्च करने के लिए, उड़ाने के लिए स्वतंत्र था। जैसे घर का मालिक जितना चाहे पैसा उठा सकता है, वैसे ही उसको छूट थी। उसका कारण यह था कि वह व्यक्ति सेठ की पेढ़ी पर आया और बाहर बेंच पर बैठा था। उस दिन सेठ की दुकान खूब चली। सेठ की दृष्टि उस लड़के पर गई। सेठ ने सोचा कि मैं रोज ही दुकान खोलकर बैठता हूं, रोज बिक्री होती है, पर आज जैसी बिक्री हुई है, वैसी बिक्री वर्षों में भी नहीं हुई है। लगता है इसी के पुण्य-प्रताप का योग है। सेठ ने उससे पूछताछ की। उसने कहा कि यह समझ लीजिए कि मैं अनाथ हूं। सेठ ने कहा कि तुम मेरे यहां पर ही रुको। तब से वह वहीं पर रुक गया।

वह बड़े उदार दिल का था। कोई भी व्यक्ति आकर कुछ याचना कर दे, कोई दुःखी-दर्दी है तो वह बड़ा द्रवित हो जाता और यथायोग्य सहयोग देने को तत्पर रहता। कई लोग गुणानुरागी होते हैं तो कई लोग टेढ़े भी होते हैं। कई लोग उसके गुण से प्रभावित थे कि कितना भला आदमी है। हर किसी के दुःख-दर्द में काम आता है। जो ऐसी भलाई का काम करता है उसकी चर्चा लोगों में भी होने लग जाती है। वह चर्चा कई लोगों के लिए कान दुखाने वाली होती है। 'इसकी प्रशंसा क्यों हो रही है? इसकी चर्चा क्यों हो रही है?' तब वे उसमें कोई न कोई दोष देखना प्रारंभ करते हैं और उनका मन होता है कि इसकी प्रशंसा को रोका जाए। इसकी हो रही चर्चाओं को रोकने का प्रयत्न किया जाए।

कुछ लोगों ने व्यूह बनाया। पहले के मन में बात आई। उसने दूसरे के कान में बात रखी तो उसने कहा कि दिमाग में तो मेरे भी यही चल रहा है। पर अपने को क्या लेना है? सेठ जब नहीं सोचते हैं तो हम क्यों बोलें? दूसरे ने कहा, नहीं, नहीं, सेठ जी को ध्यान है या नहीं है, अपना कर्तव्य होना चाहिए कि हम सेठ साहब को बताएं। ऐसे करके 5-7 व्यक्तियों ने गुट बना लिया। गुटबंदी प्रायः हिंसात्मक हुआ करती है। महात्मा गांधी ने गुटबंदी को हिंसक माना। उन्होंने माना कि किसी भी गुटबंदी का उद्देश्य सही नहीं होता है। गुटबंदी, ग्रुपिंग का उद्देश्य सही नहीं होता है। कहीं-न-कहीं स्वार्थ से जकड़ी हुई बात उनके बीच में होती है और उसी स्वार्थ के वशीभूत होकर वे

लोग एक हो जाते हैं। भला कितना करेंगे, ये नहीं कह सकते, किंतु बुरे कार्यों में ये लग जाएंगे।

अंतगडदसाओ सूत्र हम प्रतिवर्ष सुनते हैं। उसमें ललित गोष्ठी का एक उल्लेख मिलता है। 6 जनों की एक ललित गोष्ठी थी, ग्रुप था। वह जो कुछ भी करते उनके सामने किसी की भी बोलने की हिम्मत नहीं होती थी। उन लोगों ने अपना ग्रुप बनाया और एक दिन सेठ से धीरे से बात करने का समय लिया। धीरे से बात की। 'सेठ साहब, ये नया मुनीम, जो नया व्यक्ति आया है, आपको ध्यान में नहीं होगा किंतु खुले हाथ से पैसा खर्च कर रहा है। कोई लिमिट होनी चाहिए, पर उसकी कोई लिमिट ही नहीं है। आपको ध्यान में हो या नहीं हो, हमारा कर्तव्य था, इसलिए हमने आपको ध्यान दिला दिया। अब सोचना आपको है।'

सेठ के मन में विचार आया कि इन लोगों का दोष नहीं है, इनकी वृत्ति का दोष है। सेठ मन में दुःखी नहीं था। सेठ यह विचार कर रहा था कि वह कितना भी दे रहा हो, पर मेरे यहां तो बढ़ ही रहा है। फिर क्या सोचना। मेरे यहां यदि पहले से बढ़त हो रही है तो खर्च करने वाला कितना भी खर्च करे, क्या फर्क पड़ता है। मेरे यहां पर कमी नहीं होनी चाहिए। मेरे यहां कमी नहीं हो रही है तो वह यदि लोगों को दे रहा है तो कहीं-न-कहीं मेरा नाम भी जुड़ा हुआ है। सेठ को पीड़ा नहीं थी, किंतु सेठ ने सोचा कि काम करने वाले व्यक्तियों के भीतर इस प्रकार की वृत्ति पैदा नहीं होनी चाहिए। यह सोचकर उसने उस व्यक्ति को दूसरी जगह भेज दिया। उस व्यक्ति से कहा गया कि तुम दूसरी ब्रांच पर चले जाओ। वह व्यक्ति दूसरी ब्रांच पर चला गया।

अब वे लोग खुश हो रहे हैं कि हमने उसका ट्रांसफर करवा दिया। वह व्यक्ति दूसरी ब्रांच में गया तो वहां पर भी वही कार्य था। 5-25 इकट्ठे हो जाते हैं और कितना भी आ जाएं, उनको सहयोग देना उसका काम था। लगभग 6 महीने का समय निकल गया। 6 महीनों में सेठ ने कोई विचार नहीं किया कि वहां पर क्या हो रहा? कितना क्या कुछ हो रहा है? उन्हीं लोगों ने सेठ से कहा कि सेठ साहब 6 महीने हो गए, उस ब्रांच से आवक क्या हुई? लाभ क्या हुआ? कम से कम दृष्टि तो रखनी चाहिए। 6 महीने क्या लाभ हुआ? 6 महीने में उसने क्या किया? सेठ साहब का मन नहीं होते हुए भी सेठ जी ने संदेश भेजा कि 6 महीने में जो भी लाभ वहां कमाया हो, यहां पर भेज दो। वहां तो कुछ था नहीं। वह भी कुछ ज्यादा काम करता नहीं था,

बल्कि जब उसको जरूरत होती तो सेठ जी से मंगवा लेता। सेठ जी भी खुले दिल से पैसे भिजवा देते।

जब सेठ जी का समाचार पहुंचा तो वह गया हुआ था नदी में नहाने के लिए। उसके मन में संकल्प पैदा हुआ, एक विचार पैदा हुआ कि सेठ के भाग में जो भी हो, वह मेरे हाथ में आ जाए और उसके हाथ में एक पत्थर आ गया। सेठ जी के भाग में क्या है? सेठ जी के भाग में पत्थर ही है ना? नहीं? आप लोग अब सोच में पड़ गए कि सेठ के भाग में क्या है? हम बहुत आगे की सोचने लग जाते हैं। लगभग ऐसा कुछ पत्थर रहा होगा। उसने पत्थर के ऊपर मखमल का कपड़ा लगाकर खूब अच्छी तरह से पैक किया और जो भाई संदेश लेकर आया था उसके हाथ भिजवा दिया।

उधर लोगों को बड़ी उम्मीदें थीं, जिन्होंने सेठ से कह कर दूसरे ब्रांच की आवक जानने के लिए भेजा था। उन लोगों का दिमाग चकराया हुआ था। वे लोग गौर से देख रहे थे कि 6 महीने में क्या आया। उन लोगों ने देखा तो पत्थर! कहा कि सेठ साहब यह देख लो। सेठ साहब ने कहा, ऊपर चढ़ते हैं तो एक पगतिये का पत्थर टूटा हुआ है। वहां लगाकर देखा तो एकदम फिट बैठ गया। सेठ साहब ने कहा, देखो उसकी कितनी दृष्टि है? एकदम बराबर का पत्थर भेजा है।

सेठ यह विचार नहीं कर रहा है कि 6 महीने में पैसे कितने कमाए? जो कमाए, वे मंगवाए थे और भेजा पत्थर। कोई शिकायत नहीं क्योंकि सेठ अपने लाभ को देख रहा है। उसके भाग से मुझे एकतरफा लाभ की स्थिति बन रही है। वह यहां पर नहीं है फिर भी मुझे भरपूर लाभ मिल रहा है। वह खर्च कर रहा है। कितना भी खर्च करे कोई बात नहीं है। मेरी टूटत नहीं पड़ रही है, मेरी छीजत नहीं हो रही है। उन्होंने उस पत्थर को पगतिये पर लगा दिया।

कुछ दिन बीते होंगे कि एक दिन बाहर के कुछ व्यापारी आए। सेठ जी उनको भोजन कराने के लिए ऊपर ले जाने लगे। उसमें एक जौहरी था। पगतिये से ऊपर जाने लगे कि उस पत्थर पर दृष्टि टिकती है तो वह ठिठक गया कि सेठ ने यहां पर यह पत्थर लगाया! उसने सेठ साहब से कहा कि सेठ साहब, यह पत्थर पगतिये पर लगा है। यह पत्थर दूसरे पत्थरों से मिलता तो नहीं है, अलग लग रहा है। इसको कैसे लगाया? सेठ साहब ने कहा, ऐसा-

ऐसा हुआ। वहां से भेजा गया तो हमने लगा दिया। कहा कि मालिक! सेठ साहब! इसके भीतर बहुत बेसकीमती हीरा है। लाखों में जिसकी कीमत है।

'हीरे की कीमत भाई, कूंजड़ो तो जाणे कांई,
जौहरी सूं परख करावो रे भवि भाव,
आवश्यक अति सुखदायी रे

हीरे की कीमत किससे करवानी? जौहरी से करवानी या सब्जी मंडी में दुकानदार से? भिंडी की दुकान, सब्जी की दुकान में ले जाकर कहें कि इस रत्न या हीरे की कीमत आंक दो तो वह उसकी क्या कीमत आंकेगा? कहेगा कि सवा, दो सेर सब्जी ले लो। थोड़ा म्हारे कांटे में काणम् है तो इस पत्थर को रखेंगे तो उस काणम् को निकालने में पत्थर बराबर हो जाएगा और जौहरी के सामने वह जाएगा तो वह यह बता देगा कि कांच है या मणि है? काचः काचः मणि मणिः। वह कांच को कांच और मणि को मणि बता देता है।

सेठ ने पत्थर के बारे में जानने के बाद पहला काम क्या किया? उसने पत्थर वहां से निकाला और रख दिया। वह पत्थर को निकालकर कहां रखेगा? (प्रतिध्वनि–वह उस पत्थर को तिजोरी में रखेगा।) यह बात मैंने इसलिए बोली कि जब तक हमको अपने भीतर की शक्तियों का पता नहीं होता, जब तक हमें अपने भीतर की ऊर्जा का बोध नहीं होता, तब तक हम उनके प्रति लापरवाह होते हैं। तब तक उनका उपयोग नहीं कर पाते हैं। जब हम भीतर छिपी हुई शक्तियां जान लेते हैं और वे प्रकट होती हैं तो फिर उनका उपयोग सही दिशा में हो पाता है।

मनुष्य जीवन अनंत संभावनाओं से भरा हुआ है और दुनिया में सबसे विरल है। विरल का मतलब कि किसी पुण्यवान, भाग्यवान को ही प्राप्त होता है। हर किसी को नहीं मिलता है। हमें कभी-कभी विचार होता होगा कि शास्त्रकार कहते हैं कि मनुष्य-जन्म पुण्य से मिलता है, भाग्य से मिलता है और बहुत से लोग कितनी कठिनाई में रह रहे हैं। हम भी दुःखी हैं, तनाव में हैं। क्या मतलब है ऐसे मनुष्य-जन्म से? आदमी दुःखी क्यों है? तनाव में क्यों है? अपनी नासमझी से है। यदि उसने जीवन के मूल्य को समझ लिया होता, जीवन का मूल्य उसकी समझ में आया होता तो वह दुःखी नहीं होता। बहुत से लोग जब अपने जीवन के मूल्य को नहीं जान पाते हैं, नहीं समझ पाते हैं तो वे दुःखी हो जाते हैं। उनका रास्ता विपरीत हो जाता है।

सेठ के वहां पर जो युवक आया उसका एक रास्ता था और दूसरे जो लोग थे, उन्होंने एक दूसरा रास्ता अपना लिया। वे लोग भी वैसा कर सकते थे। उनको भी किसी ने मना नहीं किया। उन्होंने वैसा कार्य किया ही नहीं। हां और ना की बात तो आगे होती। उन्होंने वह रास्ता नहीं अपनाया। उन्होंने दूसरा रास्ता अपना लिया कि उसके नाम की चर्चा नहीं होनी चाहिए। उसकी प्रशंसा नहीं होनी चाहिए। किसी को डाउन करने का विचार आता है तो हमारे विचार, हमारी भावना, हमारी शक्तियां कमजोरी होती हैं, डाउन हो जाती हैं। हमारी शक्तियां बढ़ती नहीं हैं। हम किसी की भलाई की बात करते हैं, अच्छे विचार हमारे भीतर होते हैं तो उसमें हमारी शक्तियों का विकास होता है। हमारी शक्तियों को जागृति मिलती है किंतु हम बहुधा देखते हैं कि आदमी बुराइयों को देखने में ज्यादा लगता है, न की अच्छाइयों को। हम किसी को देखेंगे तो जल्दी से दृष्टि में अच्छाई आएगी या बुराई आएगी?

एक युवक और युवती सड़क पर हँसी-मजाक करते हुए चल रहे हैं। उनको देखकर क्या विचार आएगा? कैसा जमाना आ गया है! क्या विचार आएगा? हमने जाना वे कौन हैं? वो कौन है? हमने जाना नहीं, किंतु हमारे विचार क्यों आ गए? हम लोग चल रहे हैं सड़क पर, अब तो स्वच्छता अभियान चल गया है। भले ही मोदी जी कह दें कि 99 प्रतिशत भारत में स्वच्छता आ गई है, किंतु मौके पर जीने वाले लोग यह जान सकेंगे कि कितनी स्वच्छता आई है। अभी तो हम यहां चातुर्मास में रुके हुए हैं। विहार करते हैं तो कई जगहों पर सड़क के किनारे गंदगी मिलती है। अब उसके किनारे फूलों के पेड़ होंगे, पौधे भी होंगे किंतु दृष्टि गंदगी की तरफ ही जाती है और उसको देखकर हम करते हैं, 'अरे! ऊहूं! ऊहूं!

फूलों को क्यों नहीं देखा? पौधों को क्यों नहीं देखा? बहुतायत में हमारी दृष्टि गंदगी की तरफ जाएगी और उधर जाएगी तो हम वस्तुतः अपने जीवन की सच्चाई से मुंह छिपा रहे हैं। हम अपनी सच्चाई को जान नहीं पाए। जब अपनी सच्चाई को नहीं जान पाए तो उसका लाभ कैसे उठाएंगे? उसका आनन्द कैसे उठाएंगे? चीज एक ही है। एक आदमी आनंद उठा लेता है और एक दुःखी हो जाता है।

एक सेठ के चार बेटे थे। सेठ ने देखा कि ये लोग पढ़ाई-लिखाई तो करते नहीं हैं, मटरगस्ती करते हैं। कॉलेज के नाम से जाते हैं और इधर-उधर टाइम पास करते हैं। क्या मतलब है ऐसी पढ़ाई का? उन्होंने चारों बेटों

से अलग-अलग कहा कि हो गई पढ़ाई-लिखाई। अब प्राइवेट परीक्षा दे देना और इधर-उधर भटकने की बजाय ऑफिस में आकर, दुकान में आकर बैठो।

पहला लड़का विचार करता है कि क्या उपाय हो सकता है? उसने कुछ जरूरी कार्य बताकर दुकान में नहीं जाने का ही रोल अदा कर लिया। उसने उत्तर दे दिया कि मेरे ये काम है, वो काम है इसलिए दुकान में आना नहीं हो सकता है। दूसरा लड़का दुकान गया, किंतु मन से नहीं गया, दिल से नहीं गया। वह शरीर से तो चला गया, किंतु मन से नहीं गया। बैठा है दुकान पर और कोई आ गया तो उसके साथ चिड़चिड़ेपन का व्यवहार कर रहा है। कोई ग्राहक आ गया तो उसके साथ सही से व्यवहार नहीं कर रहा है। उसको लग रहा है कि मुझे बांध दिया गया है। मैं बंधन में क्यों रहूं?

तीसरा लड़का मन से गया। वह अपनी ड्यूटी निभा रहा है। उसको बोला गया कि सुबह 10 बजे से शाम 5 बजे तक तुमको दुकान में रहना है। 5 बजे मतलब, 5 बजे तक। 5 बजकर 10 मिनट भी वह नहीं करता। 5 बज गए तो बस! 5 बज गए हैं, मेरा काम हो गया है। चौथा लड़का 5 नहीं 8 बज जाए तो भी दुकान का काम करता है। वह अपनी ड्यूटी नहीं समझता है, बल्कि अपना काम समझता है। अब आप लोग समझ गए हैं। समझ गए आप लोग? क्या समझे आप? क्या समझ में आया? पहला धर्म स्थान में नहीं जाना चाहता है तो वह मना करता है कि मेरा यह काम है, वो काम है। दूसरे को जबरदस्ती पकड़कर ले आए। आ गया। व्याख्यान चल रहा है और नींद आने लग गई। समझ में ही नहीं आया कि क्या व्याख्यान हो रहा है। तीसरा व्यक्ति इंतजार करता है कि कब मांगलिक हो, कब व्याख्यान उठे और कब मैं यहां से निकलूं।

और चौथा? चौथा? वह देखता है कि आया हूं तो व्याख्यान भी सुनना है, मांगलिक भी सुननी है, वाचनी में भी बैठना है, रात को प्रश्नोत्तरी में भी बैठना है, संवर भी करना है, त्याग-पच्चक्खाण आदि भी करने हैं। बाहर के दर्शनार्थी कितने संवर करते हैं? गांव के हों चाहे परगांव के हों। यह हमारे भीतर की दृष्टि का बोध करवाने वाला दृष्टांत है कि हम किस रूप में धर्म क्रियाएं कर रहे हैं? ड्यूटी निभा रहे हैं या अंतर्मन से हम उसमें जुड़े हुए हैं? जब तक अंतर्मन से नहीं जुड़ेंगे तब तक हमारे भीतर की शक्तियां जाग्रत् नहीं हो पाएंगी।

आचार्य पूज्य गुरुदेव के चातुर्मास का प्रसंग था। पहला चातुर्मास था। बहुत से संघों की विनतियां चल रही थीं। अधिकांश अग्रगण्य श्रावकों का अभिमत था कि गुरुदेव का चातुर्मास जावद में होना चाहिए। कहां होना चाहिए? (प्रतिध्वनि–जावद में) और अभी तक नहीं करवा पाए। आप बोलोगे कि हमने तो विनती कर दी। विनती करने पर भी नहीं किया तो हम क्या कर सकते हैं? नाना गुरु ने भी नहीं किया और आपसे विनती की तो आपने भी नहीं किया। अब क्या करें? विनती कर दी, विनती करना हमारा काम है। जावद अधिकांश शांत क्षेत्र है और साधुमार्गी संघ की प्रधानता वाला क्षेत्र है और आचार्यश्री हुक्मीचंद जी का भी जावद क्षेत्र से संबंध रहा है। जावद शांत है इसलिए क्षेत्र सबसे उत्तम रहेगा। दूसरी जगह कोई-न-कोई झमेला है।

वहां रतलाम संघ भी विनती कर रहा था। रतलाम के मुख्य श्रावक गुरुदेव से विनती तो कर रहे थे किंतु उन्होंने खानगी में कहा कि हम विनती तो कर रहे हैं किंतु अंतरंग राय यही है कि चातुर्मास के लिए जावद ठीक है क्योंकि उस समय नजदीकी से श्रमण संघ से अलगाव हुआ था। कुछ ही समय निकला था श्रमण संघ से अलगाव हुए। और दूसरा कि जैनियों और वैष्णवों में भी मंदिर वगैरह को लेकर आपस में झमेला था। उनकी आपस में 'हां तू-हां तू' होती रहती थी। आचार्य देव ने अपने अंतर-भावों से विचार किया कि क्या होना चाहिए? चातुर्मास कहां होना चाहिए? उनके भीतर से आवाज आई कि 'रतलाम' और वह चातुर्मास, उनका पहला चातुर्मास कहां हुआ? (प्रतिध्वनि–रतलाम।)

रतलाम में चातुर्मास हुआ। एक पत्र भी रतलाम में गया था। निम्बाहेड़ा से अपने संबंधी के वहां पर किसी ने भेजा था। देखने वाले ने गुरुदेव को वह पत्र लाकर भी बताया जिसमें लिखा हुआ था कि ऐसा षड्यंत्र करना कि 'नानालाल फिर से रतलाम में आना भूल जाए, फिर से रतलाम का कभी नाम भी नहीं ले।' आचार्यश्री ने कहा कि जो होता है, अच्छे के लिए होता है। आचार्यश्री इससे जरा भी विचलित नहीं हुए। वे अपने ध्येय में चलते रहे। लोग तब आश्चर्यचकित हुए और दांतों तले अंगुलियां दबाने लगे जब देखा कि वैष्णव समाज के जो लोग जैन समाज के विरोध में आगे रहे थे, वे आचार्यश्री नानालाल जी म.सा. के व्याख्यान में सबसे आगे की पंक्ति में बैठ रहे हैं और रोज उपस्थित हो रहे हैं।

संघर्ष से घबराने से आदमी की गति नहीं हो सकती है। संघर्ष में लगने से भी नहीं हो सकती है। हम संघर्ष पैदा करें, ये हमारी नीयत नहीं होनी चाहिए। कुछ लोगों की नीयत होती है कि संघर्ष पैदा करो, संघर्ष पैदा करो। संघर्ष नहीं है तो भी पैदा करो। नहीं है कीचड़ तो पानी डाल-डालकर पैदा करो। ऐसे भी लोग होते हैं।

एक जगह के लोगों ने सड़क को बीच से तोड़ कर उस जगह मिट्टी डाल दी। उसमें पानी डालकर कीचड़ बना दिया करते। जब गाड़ियां वहां से निकलती तो कीचड़ में फंस जाती। गाड़ियां फंसती हैं तो फिर कहते हैं कि वे लोग ही जो कीचड़ बनाने वाले हैं, वे धक्का लगाकर गाड़ी आगे करवा देते और पैसे अर्जित कर लेते। उन्होंने कमाई का साधन बना लिया। वे पानी डालकर, मिट्टी डालकर कीचड़ पैदा करते और कीचड़ में फंसने वाली गाड़ियों को निकालते। वे ही लोग गाड़ियां फंसाने वाले हैं और वे ही लोग गाड़ियों को निकालने वाले हैं।

कुछ लोग ऐसे संघर्ष करने वाले होते हैं कि गाड़ियों को रोको, आगे बढ़ने मत दो। इस तुच्छ प्रवृत्ति के पीछे हालत खराब हो जाती है। उससे ज्यादा वे विकसित नहीं हो पाते हैं। वे वहीं तक, उतने में ही सीमित रह जाते हैं। उससे ज्यादा आगे बढ़ नहीं पाते हैं। संघर्ष देखकर कोई रुक जाए कि संघर्ष बहुत है, आगे कठिनाइयों को देखकर रुक जाए तो वह भी कभी आगे गति नहीं कर पाएगा। वह भी कभी मंजिल नहीं पाएगा। घबराकर, डरकर पांव रुकने नहीं चाहिए बल्कि ऐसी स्थिति से निकलने का उपाय ढूंढ़ना चाहिए।

आचार्य पूज्य गुरुदेव ने जलगांव चातुर्मास के प्रवेश के दिन सुंदर व्याख्या की थी जलगांव की। उन्होंने फरमाया जल चलता रहता है। वह अपनी गति से चलता रहता है। वह किसी से जाकर भिड़ता नहीं है। यदि चट्टान उसके बीच में आ गई तो भी उसके साइड से रास्ता निकालता है। साइड से बह जाता है और धीरे-धीरे उस चट्टान को काटकर रास्ता बना लेता है। वह उससे जाकर सीधा भिड़ता नहीं है। वह उससे जाकर सीधा भिड़ेगा तो उसे मौका नहीं मिलेगा। उसने अपना रास्ता साइड से निकाल लिया जिससे उसको गति मिले। वह रुका नहीं। चट्टान भले ही खड़ी रही जाए, किंतु उससे घबराना नहीं। वैसे ही कहीं पर घबराना नहीं है। कहीं पर संघर्ष है तो उससे घबराओ मत, अपने दिल में देखो। तुम्हारे भीतर यदि संघर्ष नहीं है तो तुम्हें कोई चिंता करने की बात नहीं है। तुम भी यदि संघर्ष का हिस्सा हो तो

कठिनाई हो सकती है, भय हो सकता है। जब तुम संघर्ष का हिस्सा हो ही नहीं तो घबराना क्यों?

आचार्य देव ने अपने एक चिंतन में लिखा कि संघर्ष से घबराकर कोई व्यक्ति रुक जाता है तो वह अपना विकास नहीं कर सकता है। संघर्ष को देखकर यदि कोई व्यक्ति रुक जाता है, उससे घबराकर उससे बचने का प्रयत्न करता है तो वह भी विकास नहीं कर सकता। विकास कौन कर सकता है? विकास किसका हो सकता है? किसका विकास हो सकता है? विकास उसका हो सकता है जो संघर्ष से भी रास्ता निकालकर अपनी मंजिल की ओर बढ़ेगा। जैसे जल। वह जहां भी होता है, उसे कठिनाई नहीं होती है।

जम्बू चारित्र में इस विषय में एक रोचक वृत्तांत है। जम्बू कुमार की धर्मपत्नियों ने देखा कि ऐसे काम नहीं चलेगा तो उन्होंने साधु-जीवन में आने वाली कठिनाइयों का वर्णन शुरू कर दिया कि नाथ! साधु-जीवन में कई बार स्थान की उपलब्धता नहीं होती। यहां तो हम सरदी का समय हो तो कमरा बंद कर लेंगे और ठंड लग रही है तो रजाई-कंबल ओढ़ लेंगे। वहां ये साधन नहीं मिलेंगे। कभी-कभी पेड़ के नीचे भी रात बितानी पड़ सकती है। एक तो ठंड की रात और ऊपर से पेड़ के नीचे। उस पर शीत लहर का चलना धूजनी छूटेगी। उस समय यदि ये विचार आये कि अरे! कहीं साधु बन गया तो क्या हालत होगी?

आचार्य पूज्य जवाहरलाल जी म.सा. दीक्षा से पहले वाली रात को दो रजाई ओढ़कर सोये। दूसरे दिन दीक्षा हुई और विहार हो गया। शाम को एक प्याऊ में जाकर रुकना हुआ। प्याऊ में कोई दरवाजा नहीं था, खुली प्याऊ थी। गांव वाले और कोई परिवार वाले दूसरे दिन सुबह-सुबह पहुंचे दर्शन करने के लिए कि म.सा. की साता पूछ लें। उस समय ज्यादा साधन विशेष नहीं थे। गाड़ी जोतकर आए थे। बैलगाड़ी में आए थे और पूछने लगे कि म.सा. रात को नींद तो आ गई ना? ठंड तो नहीं लगी? परसों, दीक्षा से पहले की रात को तो दो रजाई ओढ़कर सोये थे। यहां तो रजाई वगैरह नहीं थी। जवाहराचार्य, मुनि जवाहरलाल जी कहने लगे कि रात को प्रतिक्रमण करने के बाद सोया। एक चद्दर मेरी थी और किसी मुनि ने अनुग्रह कर अपनी चद्दर डाल दी तो ऐसी नींद आई, ऐसी नींद आई कि सुबह प्रतिक्रमण के समय संतों ने उठाया कि प्रतिक्रमण का समय हो गया।

हमारे ईश्वरचंद्र जी म.सा. विनोद में कई बार फरमाते थे–

'ठंड ठंड क्या करो, ठंड क्या खाती है,
लक्कड़ होकर पड़े रहो, ऊपर से निकल जाती है।'

ठंड-ठंड करने से ठंड ज्यादा लगती है। अरे! ठंड लग रही है। थोड़ी-सी रजाई इधर-उधर हो गई तो कहते हैं कि ठंड लग रही है, ठंड लग रही है। ऐसा करने से ठंड तो लगती ही है। रजाई को थोड़ा-सा हटाओ, थोड़ा शरीर हिलाओ और काम में लग जाओ। देखो, ठंड किधर चली जाती है। छोटे-छोटे बच्चे ठंड में उछल-कूद करते हैं या नहीं करते हैं? उसके लिए तो कहोगे कि टाबरां री ठंड तो बकरियां चरे? टाबरां री ठंड नहीं है।' (बच्चों की ठंड नहीं है, बाकी सभी के लिए ठंड है।) बच्चों को ठंड नहीं लगती है क्योंकि उनके संस्कारों में आई नहीं है कि ठंड लगे तो रजाई ओढ़कर बैठ जाओ और ठंड-ठंड करो। हमारे संस्कारों में आ गई है, इसलिए हमें ज्यादा ठंड लगती है।

जंबू कुमार की धर्मपत्नियां साधु-जीवन की कठिनाइयां बता रही हैं। वे कह रही हैं कि साधु-जीवन में ऐसे-ऐसे कष्ट आएंगे। शीत लहर आप कैसे सहेंगे? गरमी के दिनों में यहां पर सुगंधित चंदन आदि का शरीर पर उबटन हो जाता है। यहां पर ये सब मिल जाते हैं। वहां पर तो न तेल मिलेगा, न कोई चंदन। न शरीर का उबटन होगा। गरमी के दिनों में पसीना आएगा। शरीर से बदबू आने लगेगी। तब न स्नान कर पायेंगे, न ही कपड़ा गीला करके शरीर को पोंछ पायेंगे। ऐसी स्थिति में बताइए कि कैसे आप अपना जीवन-यापन करेंगे? साधु बनना कोई बुरी बात नहीं है। इसमें अच्छाई ही है, किंतु पहले अभ्यास कीजिए। अभ्यास कर लें उसके बाद साधु-जीवन स्वीकार कर लेना। उन्होंने अपना तर्क, अपनी बात प्रस्तुत की। अपने तर्क से सीख दे रही हैं कि कुछ समय घर में रहकर अभ्यास कर लो। उसके बाद आपका मन हो, आपको लगे कि मैं साधु-जीवन पाल सकता हूं तो आप साधु-जीवन स्वीकार कर लेना।

कायर व्यक्ति इन बातों को सुनकर सोचेगा कि 'अरे! इतने कष्ट हैं, इतने कष्ट हैं।' जागृतिश्री जी म.सा. के परिवार वाले कल-परसों आए थे। दीक्षा से पहले एक बार आए थे और कहा कि म.सा. हम दीक्षा नहीं देंगे। मैंने कहा कि हमने कब कहा कि आप दीक्षा लो। वे कहने लगे उसमें योग्यता नहीं है। वह दीक्षा पाल नहीं सकती है। मैंने कहा कि इस पर आप यदि बात करना

चाहो तो मैं बता सकता हूं। आप छोड़ दो उसको सतियां जी के साथ। एक सरदी, एक गरमी देखने दो। यदि सहन करने की क्षमता होगी तो मालूम पड़ जाएगा। यदि नहीं होगी तो स्वयं ही वह दूसरी बार गरमी, सरदी में जाने के लिए तैयार नहीं होगी। परीक्षण आपको करना है तो घर में बैठने से परीक्षा नहीं होगी। मेरा राजकुमार कितना शक्तिशाली है यह तब पता लगेगा जब वह किसी युद्ध में जाएगा। जब तक युद्ध में जायेगा नहीं तब तक उसकी ताकत को पहचानेंगे क्या?

आचारांग सूत्र में एक बात आई है। 'सूरे संगाम सीसे' यानी शूरवीर व्यक्ति संग्राम के शीर्ष में होता है। शूरवीर पीछे की पंक्ति में नहीं, आगे की पंक्ति में खड़े रहते हैं। वैसे ही कष्टों में, कठिनाइयों में जो व्यक्ति प्रथम पंक्ति में खड़ा रहे तो कोई विचार करने की बात नहीं है।

मैंने उनको कहा कि आपको परीक्षा करनी है। एक बार ऐसी ठंड में रखो और देख लो। विहार में साधुओं को जैसे स्वान मिलेंगे, वैसे ही वैरागियों को मिलेंगे। कई जगह खुले स्थान मिलेंगे तो कहीं बंद स्थान। वहां पर अपने आप पहचान हो जाएगी कि सरदी-गरमी सहन करने में कितनी समर्थ है? समर्थ होगी तो आगे बात करेगी और नहीं समर्थ होगी तो चुपचाप घर में आकर बैठ जाएगी कि नहीं, नहीं, मेरे वश की बात नहीं है।

मैं एक बार पुनः स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि हमारे भीतर अनेक शक्तियां हैं। अनेक संभावनाएं छिपी हुई हैं। हम अपने भीतर की संभावनाओं की पहचान करें। हम अपने भीतर की शक्तियों को जानें। जैसे पृथ्वी में बहुत सारे खनिज पदार्थ भरे हैं, वैसे ही हमारे भीतर अनेकानेक शक्तियां भरी हैं। हम उन शक्तियों को जाग्रत् करें। उन शक्तियों को प्रकट करें। उन शक्तियों को जानें। हम उन शक्तियों को जानेंगे, पहचानेंगे तो वे व्यक्त हो पाएंगी, प्रकट हो पाएंगी। हम उनका प्रयोग करने में समर्थ होंगे। धन्य बनेंगे।

हम देखते हैं गुलाब मुनि जी म.सा. को। उनके संथारा-संलेखना का आज 34वां दिन है। शरीर के पुद्गल कमजोर पड़े हैं। वे तो पड़ेंगे ही। फिर भी अपनी शांतता में हैं। किसी प्रकार की कोई शिकायत नहीं। यह उनके भीतर की शक्ति है, तभी तो यह काम हुआ। वह शक्ति हमारे भीतर है। बस, उसको जाग्रत् करने की आवश्यकता है। अन्यथा हॉस्पीटल जाकर वेंटीलेटर पर चढ़ा दिये जाओगे। श्वास है या नहीं है, जो श्वास चल रही

है वह नकली चल रही है या असली। बहुत कम लोग ऐसी हिम्मत करते हैं, जो अपने भीतर की शक्ति को पहचानकर उसे जगा लेते हैं। उन्होंने अपनी शक्ति को जगाया। अपने मन के राजा रहे। जब मन हुआ तो कहा कि आज संथारा पच्चक्खना है और दूसरे दिन कहा कि आज मुझे दीक्षा लेनी है। मन का राजा होना ही चाहिए। अपनी शक्ति की पहचान करो। अपनी शक्तियों की पहचान करने का प्रयत्न करेंगे तो धन्य बनेंगे।

जतनलाल जी हीरावत (देशनोक) का देहावसान हो गया। हीरावत परिवार में मेघराज जी हीरावत भी धर्मनिष्ठ, शासननिष्ठ थे। कर्मठ व्यक्तित्व था। हालांकि शारीरिक दृष्टि से काफी लाचारी हुई फिर भी धर्म के क्षेत्र में कोई समझौते की बात नहीं। धार्मिक क्रियाएं, सामायिक, संवर करना है सो करना है। भाई जतनलाल जी हीरावत ही नहीं, पूरा हीरावत परिवार शासननिष्ठा में, धर्मनिष्ठा में अग्रसर रहा है। 88 वर्ष की उम्र उन्होंने पाई, जैसा मुझे लिखकर बताया गया है। इतनी उम्र भी पुण्यवानी के योग से प्राप्त होती है। लंबी उम्र पुण्यवानी के योग से ही प्राप्त होती है। फिर धार्मिक क्षेत्र मिलना भी पुण्य का योग होता है। उनके पारिवारिक जनों को शोक-संतप्त होने के बजाय ये विचार करना चाहिए कि उन्होंने हमें धर्म के क्षेत्र में श्रद्धानिष्ठ बनाया है, कर्मनिष्ठ बनाया है। अतः क्यों शोक-संताप करें? हमको उन्होंने योग्य बनाया है अतः जैसे उनकी शासननिष्ठा, धर्मनिष्ठा रही है, वैसे ही परिवार-जनों को अपना लक्ष्य बनाना है और अपने आपको धन्य बनाना है।

इतना ही कहते हुए विराम।

• पुनश्चः—

नवदीक्षित महासतियां जी की आज 16-16 की तपस्या हुई हैं। महासती श्री सुखदाश्री जी म.सा. और महासती श्री वरदाश्री म.सा. की ये तपस्याएं जारी हैं।

14 अक्टूबर, 2019

10

जीवन मंत्र : जिम्मेदार बनें

गुलाब मुनि जी म.सा. की गुणानुवाद सभा

मनोरथ तीन हैं मेरे, प्रभु मैं पूर्ण कर पाऊं

मन रूपी रथ पर तीन विचार आरूढ़ हैं। तीन अध्यवसाय, तीन भावनाओं को पूर्ण करने की बात है। गुलाब मुनि जी आए और चले गए। आने वाला जाता ही है। आने और जाने का क्रम अनादि काल से है। संसार की नींव है, 'आना और जाना'। किंतु इस रूप में एक और बात है कि आना तो अलग से नहीं होता है किंतु जाना अलग से होता है। और मोक्ष में आना तो होता है, पर वहां से जाना नहीं होता है। संसार और सिद्ध अवस्था का यह अंतर है कि वहां पर आने के लिए द्वार खुले हैं, पर जाने के लिए रास्ता नहीं है। संसार से मुक्त होने का रास्ता है किंतु नए सिरे से संसार में आने के लिए किसी रास्ते की स्थिति नहीं है।

बात है गुलाब मुनि जी की। एक बार उन्होंने लिखा कि 'मैं प्रमाद में पड़ा हूं।' इसका क्या अर्थ निकला? अर्थ निकला कि उनका जीवन पुरुषार्थशील रहा है। हर वक्त सत्पुरुषार्थ में लगे रहते, सत्कर्म में लगे रहते। अब शरीर अशक्त है। पड़े रहना पड़ रहा है तो प्रमाद का जीवन है। हालांकि संथारा प्रमाद नहीं माना जाता है किंतु कुछ भी नहीं किया जा रहा है। उनके मन की पीड़ा है कि कोई पुरुषार्थ नहीं फलित हो रहा है। प्रमाद में पड़ा हूं। उनका फलितार्थ, उनका जीवन पुरुषार्थी जीवन रहा है।

एक बार उन्होंने लिखा था कि 'मैं आत्मा की खोज कर रहा हूं।' आत्मा की खोज कर रहा हूं। क्या आप दीक्षा या संथारे के बाद ही आत्मा की खोज कर रहे थे? इससे फलित क्या होता है? इसका अर्थ क्या लिया जाए कि केवल भावशून्य क्रियाएं नहीं होतीं। भावशून्य क्रियाएं नहीं करना, आदत

से सामायिक, साधना नहीं करना, बल्कि उसमें जागरूकता होनी चाहिए। उद्देश्य स्पष्ट होना चाहिए। हमारा लक्ष्य हमारे सामने मौजूद रहना चाहिए। वह कभी विस्मृत नहीं हो।

'मैं आत्मा की खोज कर रहा हूं' वाक्य यह दर्शाता है कि वे गृहस्थ अवस्था में सामायिक, संवर, पौषध जो भी क्रियाएं करते रहे हैं, भावशून्य नहीं रही होंगी। उनमें उनका लक्ष्य आत्मा की शोध का, आत्मा की खोज का, आत्मा की प्राप्ति का, आत्मा उपलब्ध हो जाए, मैं कौन हूं, इसकी पहचान करूं, उस दिशा में रहा है। ये बातें हम आज गुणानुवाद सभा या श्रद्धांजलि सभा के रूप में सुन रहे हैं। इन्हें औपचारिक नहीं समझना चाहिए कि किसी मुनि का स्वर्गवास हुआ तो एक श्रद्धांजलि सभा आयोजित की जाती है। कुछ वक्ता अपनी-अपनी बातें रख देते हैं। हमने जो सुना है, उस पर विचार करें तो बहुत सारे सूत्र मिलेंगे कि परिवार, समाज, समुदाय में हमारी क्या भूमिका होनी चाहिए। यदि आपने पूर्व वक्ताओं को बहुत अच्छी तरह से सुना है और उनके कुछ प्रेरणीय बिंदु यदि आप स्वीकार करते हैं तो ये समझ सकते हैं कि परिवार को कैसे जोड़कर रखना और समाज में अपनी क्या भूमिका अदा करनी चाहिए।

बहुत स्पष्ट है कि समुदाय विभिन्न लोगों से जुड़ा हुआ होता है और बहुत तरह के मस्तिष्क होते हैं। बहुत तरह के विचार वहां पैदा होते हैं। उन सारे विचारों का समीकरण करना, उन विचारों का समन्वय करना कभी-कभी टेढ़ी खीर हुआ करता है। फिर भी कोई सक्षम होता है। विशाल समुदाय को भी एक साथ, एक सूत्र में जोड़े रखा जा सकता है। ऐसा नहीं है कि ये बहुत कठिन कार्य है, संभव ही नहीं है। जो असंभव मान लेता है, वह कुछ करने में समर्थ नहीं होता। जिसको लगता है कि संभावना है, उसके भीतर कार्य करने की क्षमता पैदा होती है।

असंभव क्या है? असंभव है जीव का अजीव होना। जीव कभी अजीव नहीं होता। यह असंभव है। जीव अजीव कभी नहीं होगा। किसी काल में जीव अजीव हुआ नहीं, होता नहीं है और कभी भी जीव अजीव के रूप में परिणत नहीं होगा। एक द्रव्य दूसरे द्रव्य के रूप में कभी परिवर्तित नहीं होंगे। भले ही साथ में रहेंगे। आकाश, परदेश पर रहेंगे किंतु सबकी अपनी-अपनी स्वतंत्र सत्ता है। वैसे ही हम एक समुदाय में रहेंगे किंतु सबके विचार स्वतंत्र हैं।

उन विचारों से बाधाएं खड़ी नहीं होंगी। वे विचार भी कहीं-न-कहीं हमें एक-दूसरे से रिलेटिव करने वाले होंगे, जोड़ने वाले होंगे। हम केवल श्रोता नहीं बनें। श्रोता बनने का अर्थ होता है सुनना, किंतु आप ध्यान रखना कि श्रोता केवल सुनने वाला ही नहीं होता है। जो जीवन में आचरण करता है, वह श्रेष्ठ श्रोता होता है। नहीं तो कभी-कभी श्रोता सरौता का रूप बन जाता है। फिर वह श्रोता नहीं रहता है। श्रोता का अंतिम चरण, जो सुने उसका क्रियान्वयन करें। जो सुना उसको क्रियान्विती में पूर्ण करें। जो ज्ञान क्रिया में नहीं ढलता, वह सदा कुंवारा रहता है। समझ ही गए आप लोग! ज्ञान को क्रिया में ढालने का काम होना चाहिए। जो कार्य रूप में परिणत नहीं होता, वह कभी विश्वास देने वाला नहीं होता। जो कार्य रूप में परिणत नहीं होता, वह पक्का विश्वास देने वाला नहीं होता।

हम किसी सुनी हुई बात पर विश्वास कर सकते हैं, किंतु आत्मविश्वास के रूप में वही चीज बैठेगी, जो कार्य रूप में परिणत हो गई। जो कार्य रूप में पैदा हो गया वह विश्वास देने वाला हो गया, अन्यथा केवल सुने हुए का विश्वास रहेगा। वह अनुभूतिपूर्वक आत्मविश्वास का अंग नहीं बन पाएगा। इसलिए हम केवल औपचारिकता से न तो बोलें, न ही सुनें। हम जिम्मेदारी को महसूस करें। हम बोल रहे हैं तो हमारी क्या जिम्मेदारी होती है और सुन रहे हैं तो हमारी क्या जवाबदारी जिम्मेदारी बनती है। बोलना, केवल सभा को रंजित करना नहीं है। सभा का मनोरंजन हो जाए, सभा का मन प्रसन्न हो जाए इसीलिए ही नहीं बोला जाना चाहिए। बोलने वाले की अपनी जिम्मेदारी होती है और सुनने वाले की अपनी। हम उस जिम्मेदारी के महत्त्व को समझें और जिम्मेदारी को निभाने के लिए अपनी तत्परता को आगे बढ़ाएं।

गुलाब मुनि जी म.सा. कहें चाहे गुलाबचंद जी, उनके बारे में जैसा आपने अभी सुना उसका निष्कर्ष और निचोड़ निकालेंगे तो पायेंगे कि वे अपने आप में जिम्मेदार व्यक्ति थे। जिम्मेदार व्यक्ति जिम्मेदारी निभाता है। वह केवल औपचारिकता में नहीं जीते थे, यथार्थ में जीते थे। ये कुछेक बिंदु यदि हमारे जीवन में आ जाएं तो हम अनुभव करेंगे कि अब तक क्या जी रहे हैं, कैसे जी रहे थे और अब हमारे जीवन में क्या मोड़ आ गया है? जीवन के मोड़ की पहचान करने के लिए हमारी तैयारी रहनी चाहिए। वह मोड़ तब आएगा जब हम स्वयं जिम्मेदार बनेंगे। हम स्वयं जिम्मेदारी का

निर्वाह करेंगे। हम स्वयं यथार्थ में प्रवेश करेंगे तो ये सारी अनुभूतियां हम अपने आप में ले सकते हैं। हमने पूर्व वक्ताओं से सुना है। उन सारी बातों पर निष्कर्ष और निचोड़ के रूप में हमको अपने जीवन में किन-किन बिंदुओं से सरोकार करना है, यानी किन-किन बिंदुओं को अपने जीवन में उतारना चाहते हैं, वह लक्ष्य बनाएं।

आप बाजार में जाते हैं, दुकान पर जाते हैं तो बहुत सारी चीजें देखते हैं। दुकानदार भी बहुत सारी चीजें दिखाता है किंतु उनमें से निर्णय हमको करना होता है कि मुझे क्या खरीदना है? मुझे क्या लेना है? वैसे ही हमने जो सुना है, उसमें से कुछ निर्णय करें, कुछ निश्चय करें, कुछ विचार करें कि इनमें से मुझे अपने जीवन के लिए, अपने परिवार के लिए, अपने समाज के लिए क्या-क्या ग्रहण करना है? किन-किन बिंदुओं को स्वीकार करना है। आज से नहीं, अभी से उन बिंदुओं पर मुझे काम प्रारंभ कर लेना है और पूरी जिम्मेदारी से वे कार्य मुझे करने हैं।

इस प्रकार की भावना यदि भाते हैं, इस प्रकार की भावना को अपने साथ में संजोते हैं तो श्रद्धांजलि सभा या गुणानुवाद सभा या गुणों को कहना और सुनना, हमारे लिए लाभकारी हो पाएगा। हमारे लिए कुछ प्रेरणाप्रद हो सकेगा और हम उनसे कुछ अपने जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण बिंदुओं को संजो पाएंगे। ऐसा हम करें। यदि ऐसा करेंगे तो हमारे जीवन के लिए हितकर बनेगा, हमारा जीवन श्रेयस्कर बनेगा। बोलने में कितनी देर तक बोलें, कोई अभाव नहीं है।

अभी आप सुन रहे थे उनके जीवन के बारे में कि बोलते जाओ, बोलते जाओ, बोलते जाओ, अंत आने वाला नहीं है। कभी अंत नहीं आएगा। फिर भी हमें एक सीमा के अंतर्गत उन बातों पर विचार करना चाहिए। अपने जीवन को गुणानुवाद सभा से जोड़ते हुए एक-एक बिंदु पर अवश्य विचार करना है कि हमको अपने जीवन में, अपने परिवार के लिए, अपने समाज के लिए जिम्मेदार बनना है और पूरी जिम्मेदारी से कर्तव्य का पालन करना है। ऐसा लक्ष्य बनाएंगे तो अपने जीवन को धन्य बनाएंगे। इतना ही कहते हुए विराम।

17 अक्टूबर, 2019

11

परमधर्म का रूप

धर्म परम अरनाथ नो, किम जाणूं भगवंतो रे।
स्व-पर समय समझाविये, महिमा वंत महंतो रे॥

स्तुति के स्वरों में थोड़ा बदलाव आया है किंतु किसी भी तीर्थंकर देव की स्तुति की जाए, उसमें कोई भेद नहीं है। 'धर्म परम अरनाथ नो, किम जाणूं भगवंतो रे' की स्तुति का भाव है– हे अरनाथ भगवान! परम धर्म को कैसे जानें? स्व-समय और पर-समय की समझाइश दीजिए। आपको अभी बता रहे थे कि जीव आदि नौ पदार्थों का ज्ञान होने पर सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। सम्यक्त्व की प्राप्ति में जीव आदि का ज्ञान, जीव और अजीव का ज्ञान होना जरूरी है। यहां इस कविता में, इस स्तुति में बहुत गहरी बात रखी गई है और निश्चयनय को प्रस्तुत किया गया है।

धर्म के अनेक भेद हैं। श्रीमद् स्थानांग सूत्र में दस प्रकार के भेद बताए गए हैं। इसमें संघ धर्म, गण धर्म और कुल धर्म भी है। संघ की समाचारी का पालन करना और कुल की समाचारी का पालन करना भी धर्म है। श्रुत और चारित्र धर्म भी धर्म है। एक माता-पिता द्वारा अपने पुत्र, अपनी संतान का लालन-पालन करना भी एक धर्म है। लौकिक धर्म भी होता है और लोकोत्तर धर्म भी होता है। लौकिक धर्म को हम कहेंगे कि व्यावहारिक धर्म है। व्यावहारिक धर्म यानी कर्म, दायित्व, जवाबदेही का निर्वाह करना और अलौकिक यानी लोकोत्तर धर्म श्रुत धर्म और चारित्र धर्म है। ऐसे भिन्न-भिन्न प्रकार से धर्म को समझाया गया है। हम किस धर्म में लगे हुए हैं?

कल श्री गुलाब मुनि जी का संथारा सीझने के बाद गुणानुवाद सभा थी। वहां कई लोगों के, कई भाइयों के मुंह से निकला कि संतों ने बहुत सेवा की। वस्तुतः संतों ने सेवा का दायित्व समझा। किसी को कहना भी

नहीं पड़ा कि तुमको सेवा में जुटना है। सब अपना-अपना कर्तव्य समझकर उनकी सेवा-शुश्रूषा के लिए तत्पर थे। किसी ने भी नाक में सल नहीं डाला। किसी ने नहीं कहा कि रोज-रोज रात्रि को जागना पड़ता है। कब तक जागते रहेंगे? बल्कि सबकी आगे से आगे उनकी सेवा की तैयारी रही। अब कोई पूछ ले कि ये कौन-सा धर्म है? इसको क्या कहेंगे? इसको धर्म कहेंगे या क्या कहेंगे? यह साधु का कर्तव्य है। कर्तव्य का पालन करना संघ धर्म के अंतर्गत आएगा। कुल और गण धर्म के अंतर्गत आएगा।

परम धर्म क्या है? उसकी स्तुति में पृच्छा की गई है। उसके उत्तर में कहा गया है– 'शुद्ध आत्म अनुभव सदा', यानी शुद्ध आत्म-अनुभव के साथ जो क्रिया की जाती है, वह स्व-समय कहा गया है निश्चय में। व्यवहारों की बात नहीं कर रहे हैं। निश्चय में आत्मानुभूति होगी। शुद्ध आत्मतत्त्व का अनुभव हो रहा है और उस समय जो उसकी प्रवृत्ति हो रही है, वह प्रवृत्ति स्वसिद्धांत है, स्वसमय है। 'स्वसमय एह विलासो रे' अर्थात् यह स्वसमय का विलास है, उसमें आत्मरमण है। वह आत्मरमण स्वसमय है। ऐसा स्वसमय बड़ी कठिनाई से प्राप्त होता है। हम धर्म क्रियाओं को करते हैं। सामायिक कर ली, पौषध कर लिया। साधु जीवन की क्रिया समिति, भाषा समिति, सारी क्रियाओं के पालन को कह सकते हैं कि श्रुत और चारित्र धर्म का पालन है, किंतु इस पालन में भी आत्मानुभूति नहीं है। सिद्धांत के अनुसार हम जैन धर्म की क्रियाओं का पालन कर रहे हैं, किंतु अंतर से अछूते हैं, तो निश्चय नय से हम परम धर्म में नहीं हैं। स्व-समय में नहीं हैं। अंतर जिस समय भीगेगा, वह स्वसमय होगा।

शुद्ध आत्म अनुभव सदा, स्वसमय एह विलासो रे।
परवड़ी छाहड़ी जे पड़े, ते पर-समय निवासो रे॥ धर्म...

यह कड़ी बड़ी मनोरम है। इसमें आध्यात्मिक रस भरा हुआ है और एकदम निश्चयपरक बात कही गई है। जिस समय तुम आत्मानुभूति में चल रहे हो, अन्य अनुभूति नहीं है; जिस समय जिस क्रिया में तुम लगे हुए हो, उस क्रिया की अनुभूति हो रही है तो सही है, बाकी कोई सही नहीं है। बाकी तुम जिंदगी-भर संयम की समिति-गुप्ति की पालना करते रहो, किंतु आत्मानुभूति, शुद्ध आत्म-अनुभव जिन क्षणों में हुआ है वे क्षण, वे स्व-समय रूप हैं। वे आनन्द देने वाले हैं। वे स्वसमय का लाभ देने वाले हैं। मैं प्रसन्नचंद्र राजर्षि की कहानी नहीं कह रहा हूं। केवल उसका उल्लेख कर रहा

हूं। जैसे ही उन पर पुत्रमोह का भाव जगा, पर-पदार्थ की छाया उन पर आ गई और जैसे ही पर-पदार्थ की छाया, दूसरे पदार्थ की छाया आई वे पर के समय में चले गए। वे कषाय की छाया में चले गए। वे मोह-ममत्व में चले गए। वे आत्मा के स्वसमय से बाहर हो गए। व्यवहार में साधु हैं पर निश्चय में वे पर-समय में रमण करने लगे थे।

हम भी यदि किसी से लड़ाई-झगड़े में लगे हुए हैं, मान-सम्मान में लगे हुए हैं, क्रोध-माया-मान में लगे हुए हैं तो वह स्व-समय नहीं है। बात भले ही सामान्य हो, किंतु निश्चय में स्वसमय कब है?

'शुद्ध आत्मा अनुभव सदा, स्वसमय एह विलासो रे'।

जब शुद्धात्मानु भव दशा चल रही हो, तभी परम धर्म है।

आत्म-रमण का जो आनन्द है, वह स्वसमय का विलास है। वह स्वसमय की पहचान है। दस धर्मों में एक अस्थिकाय धर्म बताया गया है। जो द्रव्य का अपना धर्म होता है, वह उस द्रव्य का धर्म अस्थिकाय का धर्म है। जीव द्रव्य का अपना धर्म होता है, जड़ का अपना धर्म होता है। जड़ का जड़त्व और चेतन का चैतन्य होता है। उस धर्म की अनुभूति जब व्यक्ति कर लेता है तो वह अनुभूति स्वसमय का रूप है।

अभी आप सुन रहे थे कि कुत्ता, बिल्ली, गाय, भैंस उनके प्रति संवेदनशील हो गये जिस किसी ने उन्हें चारा डाल दिया, रोटी डाल दी या कुछ और डाल दिया। ये क्या है? इसको हम लौकिक धर्म के रूप में परिभाषित कर सकते हैं अथवा शुभ भावना से यह पुण्य के क्षेत्र में आते हैं? पुण्य में और धर्म में क्या भेद है? उसको डिवाइड करना हो तो कैसे करेंगे? पुण्य और धर्म में क्या भेद करेंगे? कैसे भेद करेंगे? बहुत स्पष्ट है कि जो क्रिया संवर का निष्पादन करे, जिस क्रिया का परिणाम संवर रूप में आता है, कर्मों से मुक्त होने का जिससे प्रसंग मिलता है वह होता है धर्म।

'क्रिया संवर सार रे'

जिसकी क्रिया का निचोड़, क्रिया का निष्कर्ष संवर रूप में होता है। मैंने कितने वर्षों तक संयम पाला, यह ज्यादा महत्त्वपूर्ण नहीं है। महत्त्वपूर्ण यह है कि मेरा संयम पालन, संवर रूप में कितना परिणत हुआ। एक अभवी आत्मा भी लंबे समय तक संयम-क्रियाओं का पालन कर लेती है। साधु-जीवन की क्रियाओं का आराधन कर लेती है, किंतु वहां पर धर्म नहीं मिलता

है। वह सारा का सारा पुण्य के क्षेत्र में जाता है। इसे लौकिक धर्म कह सकते हैं, संघ धर्म कह सकते हैं, व्यावहारिक धर्म कह सकते हैं किंतु आत्म-धर्म, स्वसमय उसमें वह प्रवेश नहीं हो पाएगा। बात समझ में आ रही है ना? आज थोड़ा हटकर विषय चल रहा है और जब तक आत्मानुभूति नहीं है तब तक सब कोरे हैं, सब अधूरे हैं।

नरेन्द्र मोदी जी ने पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह जी के लिए एक बात कही थी। उन्होंने कहा था कि हमारे डॉ. मनमोहन सिंह जी रेन कोट पहनकर नहाते हैं। क्या कहा? रेन कोट ही कहते हैं ना? (प्रतिध्वनि– हां) हां! रेन कोट पहनकर नहाते हैं और हम कौन-से धर्म की आराधना कर रहे हैं? हम भी यदि रेन कोट पहनकर सामायिक कर रहे हैं, रेन कोट पहनकर पौषध कर रहे हैं, धर्म क्रियाएं कर रहे हैं, साधु जीवन की पालना कर रहे हैं तो इन सबका क्या परिणाम होगा? मनमोहन सिंह जी की बात आई तो सभी थोड़ा मुस्कुरा दिए। सभी लोग हँस रहे हैं। वे नहाते हैं तो रेन कोट पहनकर नहाते हैं। रेन कोट पहनकर नहाएंगे तो शरीर की सफाई होगी या ऊपर-ऊपर से पानी निकल जाएगा? (प्रतिध्वनि– ऊपर-ऊपर से निकल जाएगा।) शरीर को वह पानी स्पर्श नहीं करेगा। रेन कोट का मतलब वही है कि जो आपके शरीर को पानी का स्पर्श नहीं होने दे। हम भी क्रियाएं करते जाएं और हमारी आत्मा से वे क्रियाएं स्पर्श नहीं हुई तो क्या हुआ? बोलो, कौन जवाब देगा? मोदी जी के कथनानुसार डॉ. मनमोहन सिंह जी रेन कोट पहनकर नहाते हैं तो आप कौन-सा कोट पहनकर आत्मिक स्नान कर रहे हैं। हम स्व-समय में रमण कर रहे हैं या पर-समय में?

जोधपुर की कौन-कौन बहनें हैं यहां पर? हाथ खड़ा करो। एक-दो ही हाथ खड़े हो रहे हैं। एक-दो ही बस! बालेसर की कौन-कौन बहनें हैं? बालेसर की काफी बहनों ने हाथ खड़े कर दिए। कभी आँगन नीपा क्या? आँगन नीपा क्या कभी? मतलब समझ गए ना? आप लोग जानते तो हो ना कि आँगन नीपना क्या होता है? (सभा में बैठी महिलाओं की प्रतिध्वनि– हां नीपा हुआ है) मैंने सोचा कि आप वर्तमान युग को जी रही हैं तो क्या पता जानती हों या नहीं। वर्तमान युग में क्या नीपते हैं? अब तो टाइल्स हो गई हैं। अब आँगन नीपना कौन जाने? पर जिन्होंने आंगन नीपा है, वे जानती हैं। उनसे मैं पूछना चाहता हूं कि जहां राख पड़ी होती है उस स्थान को नीपा जाता है क्या? राख मतलब जानते हैं क्या? राख हो तो क्या होता है? पहले

के जो आँगन नीपना जानते हैं, वे जानते हैं कि यदि राख पड़ी है तो उसको हटाएंगे नहीं तो उसको नहीं नीप सकते। यदि उसको नीपा भी जाएगा तो वह सही नहीं रहेगा, उसमें लेवड़े/पपड़ी उठने लगेगी। उसमें पपड़ी उठ जाती है। एक तरफ निपेंगे तो दूसरी तरफ उखड़ जाएगा। उस आँगन में पपड़ी उखड़ जाएगी। क्यों ओम जी? मालूम है कैसे निपते हैं? देखा तो होगा नीपते हुए? आप बोल रहे हो कि घर में होता तो था। होता था तो नीपते हुए तो देखा ही होगा! आँगन पहले कच्चे होते थे। पक्के तो अब होने लग गए हैं। इस पर पानी हो और चलें तो पैर फिसल जाए। थोड़ी ठंड में चलें तो पैर ठंडे कर दे और गर्मी में चलें तो पैर गर्म कर दे। पहले जो नीपा हुआ आँगन होता था वह गर्मी में ठंडा रहता था जबकि सर्दी में गर्म रहता था और यदि पानी गिर गया तो वह सोख लेता था। यदि आज की टाइल्स पर पानी गिरे तो? तो उस पानी को हटाने के लिए पोंछा देना पड़ता है।

टाइल्स की तरह हमारे भीतर की स्थिति है। हमारा मन भी पक्का हो गया है। जिस प्रकार से टाइल्स में पानी नहीं जाता है उसी प्रकार हमारे भीतर धर्म की बूंदें नहीं जा पाती। हमारा मन धर्म बूंदों को नहीं चूस पाएगा। कच्चे आँगन पर पानी डालने पर वह चूस लेता था। उस पर कपड़ा फेरने, उसे सुखाने या उस पर पोंछा फेरने की जरूरत नहीं पड़ती थी। वैसे ही मन की स्थिति बनेगी तो देखना कि क्या मजा आता है? क्या आनन्द आता है? थोड़ा पानी यदि पड़े तो वह चूस लेगा। यदि उस पर राख पड़ी है और उसमें गोबर मिलाकर, गारा बनाकर नीपो तो वह उखड़ जाएगा। इधर से निपो तो उधर से उखड़ जाएगा और उधर नीपो तो इधर से उखड़ जाएगा। मतलब कि वह नीपा नहीं जाएगा। वैसे ही जब तक रेन कोट पहने हुए रहेंगे, तब तक क्रियाओं का सार, क्रियाओं का निष्कर्ष, क्रियाओं का निचोड़ हमारे भीतर प्रवेश नहीं हो पाएगा। हमारी क्रियाओं का संवर रूप में निष्कर्ष पैदा नहीं होगा। यदि संवर रूप पैदा करना है तो 'शुद्ध आत्म-अनुभव सदा' आत्म-अनुभवपूर्वक हमें क्रिया करनी होगी। आत्मानुभूति की दिशा में हमें आगे बढ़ना पड़ेगा।

मैंने कल बात कही थी कि गुलाब मुनि जी ने लिखा कि 'मैं आत्मा की शोध कर रहा हूं, किंतु अभी तक वह मिली नहीं है।' आत्मा का मिलना तो बहुत आगे की बात है। आत्मा का मिलना और उससे रू-ब-रू होना तो आगे की बात है, पहले दर्पण में अपना चेहरा देख लें वही बहुत बड़ी बात

है। दर्पण में अपना चेहरा देख लिया कि ये मैं हूं, लेकिन मैं नहीं हूं। वह मैं हूं लेकिन मैं नहीं हूं। क्यों? क्योंकि वह तो केवल मेरी आकृति है। इसी प्रकार केवल आत्म-संवदेन भी हो गया, आत्मा की अनुभूति भी हो गई तो वही संवदेन है। आत्मा की अनुभूति उसी को कहेंगे। हम कहेंगे कि हमने आत्मा की खोज कर ली है। आत्मा को देखने का कार्य अवधिज्ञान एवं मनपर्याय ज्ञान से भी नहीं होगा, क्योंकि वह अमूर्त भाव है और अमूर्त भाव अदृश्य होता है। आंखों से, चरम चक्षुओं से उसको देखा नहीं जा सकता है। अतः आत्म-तत्त्व को आत्म-द्रव्य को हम अपने चरम चक्षुओं से देख नहीं सकते हैं। उसको देखने के लिए हमें बड़ा लेंस लगाना पड़ेगा।

इस पंडाल में रज-कण हैं किंतु वे नजर आते हैं क्या? वे अभी नजर नहीं आ रहे हैं किंतु यदि पंडाल में एक छेद हो जाए और सूर्य की किरणें आने लग जाएं तो वे नजर आने लग जाएंगे या नहीं! सूर्य की किरण अंदर आई तो वे नजर आयेंगे। बिना सूर्य की किरण के नजर नहीं आयेंगे। जैसे ही एक छेद हुआ और किरणें अंदर आने लगीं, वे हमें नजर आने लगे। इसमें रज-कण भरे हुए हैं। पूरे भरे हुए हैं किंतु आंखों से उनको हम पकड़ नहीं पाते हैं। ये तो प्रत्यक्ष हैं। ये तो अमूर्त नहीं हैं। मूर्त हैं। उनको भी आंखों से हम नहीं देख पाते हैं तो हमारी आत्मा को हम आंखों से कैसे पकड़ लेंगे! कैसे देख लेंगे! उसके लिए आत्मानुभूति होनी जरूरी है। वैसे ही सूर्य की किरणों को आने के लिए छेद होना जरूरी है। उस छेद से किरणें आती हैं तो छेद की रोशनी में हम देखेंगे कि यहां पर बहुत सारे कण रहे हुए हैं, तो वे हमें नजर आएंगे। आपने ऐसा कई बार देखा होगा कि जैसे ही सूर्य की किरणें आती हैं हमें छोटे-छोटे कण दिखाई देते हैं। आप लोगों ने अनुभव किया होगा।

मैं बता रहा हूं अनुभव की बात कि हम अभी रजकणों को नहीं देख रहे हैं। एक छेद हुआ, एक सुराख हुआ और उसमें से सूर्य की किरणें आईं और वे नजर आने लग जाएंगे। हम कहेंगे कि ये कहां से आ गए! ये अभी-अभी आए हैं, ऐसा नहीं है। ये पहले से पंडाल में पड़े हुए हैं किंतु हमें नजर नहीं आते। जब वे नजर नहीं आते तो आत्मा कहां से नजर आएगी? आत्मा तो बहुत सूक्ष्म है, अतिसूक्ष्म है। आत्मा सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ है। हम उसको ऐसे प्रत्यक्ष अनुभव नहीं कर पाएंगे। उसका प्रत्यक्षीकरण केवलज्ञान ही हो सकता है। जैसे ही सूर्य की किरणें भीतर आ गईं तो रज-कणों को देखना शुरू कर दिया, वैसे ही केवलज्ञान की किरणें जब हमारे भीतर प्रकट हो जाएंगी तो

उसमें हम आत्मा के अस्तित्व का ज्ञान कर पाएंगे। हम उसको देख पाएंगे, उसको समझ पाएंगे। समझ तो क्या हम उससे रू-ब-रू हो पाएंगे, किंतु वर्तमान में जीव-अजीव के ज्ञान की बात, अनुभूति की बात कि हमें यह अनुभूति होनी चाहिए कि मैं आत्मा हूं। हमारा यह नॉलेज हमें अनुभूति कराता है।

एक बात पर आप विचार करें कि बादल छाए हुए हैं, उमस है, गर्मी लग रही है। इतने में ठण्डी बयार चली। हमें शीतलता का अनुभव होने लगा। हमने अनुमान लगाया कि जरूर कहीं वर्षा हुई है, उसी का यह परिणाम है। इसी प्रकार एक लाश को कुछ भी करें, कैसे भी ढालें वह इधर से उधर ढल जाती है। वह अपने आप में कुछ नहीं करती है और एक चैतन्य शरीर चलता-फिरता है, देखता है। वह बात कर रहा है, सुन रहा है, सब कुछ कर रहा है किंतु एक लाश को इधर ढालो तो इधर लुढ़क जाएगी, उधर ढालो तो उधर लुढ़क जाएगी। उसको यदि चिता पर चढ़ा दिया तो वह नहीं बोलेगी कि मुझे चिता पर क्यों चढ़ाया जा रहा है। एक सचित्त, चैतन्य शरीर को चिता पर चढ़ा दो तो उसको अनुभूति होगी या नहीं होगी? (प्रतिध्वनि– होगी) एक खीरा, एक अंगारा लाश के हाथ में रख दिया और एक चैतन्य जीव के हाथ में रखो। चैतन्य शरीर में रहने वाले आदमी को अनुभूति होगी। उसको अनुभूति होगी किंतु लाश को? (प्रतिध्वनि– नहीं) ये जो अनुभूति हो रही है, यह अनुभूति का गुण, यह संवेदन का गुण चेतना का है। इसलिए चेतना का अनुभव कर सकते हैं, संवेदन कर सकते हैं कि मेरे भीतर चेतना है।

क्यों हमने गुलाब मुनि जी के लिए कह दिया कि वे हमारे नेश्राय से जा रहे हैं? क्यों कह दिया कि हमारी नेश्राय को छोड़ रहे हैं? क्यों कह दिया कि शरीर को छोड़ रहे हैं? ऐसा संवेदन हो गया कि अब उनमें चैतन्य आत्मा नहीं रही है। वह चैतन्य आत्मा नहीं रही। उससे हमारा प्रेम नहीं है। जो हमारे साथ जाने वाला नहीं है उससे दोस्ती क्यों? किंतु हम ज्यादा किसको पकड़ते हैं? किसको पकड़ते हैं? कल रात को भी किसी भाई ने पूछा था कि कुत्ते को रोटी डाली गई। गाय को चारा वगैरह डालने में पुण्य होता है या पाप होता है?

इसमें एकांत पाप भी नहीं है और एकांत पुण्य भी नहीं है किंतु धर्म नहीं है। धर्म आत्मानुभूति होगी, धर्म संवर की आराधना होगी, वह धर्म होगा। जिसमें आने वाले आस्रव कर्म रुक जाएं, वह धर्म होगा। धर्म ऐसी दीवार है, जिसके भीतर कर्म वर्गणा-दलिक प्रवेश नहीं कर सकते। जैसे रेन कोट

पहनने से पानी भीतर नहीं जाता, वैसे ही रेन कोट रूपी संवर को पहन लेने से कर्म दलिक भीतर नहीं आ सकते। वह धर्म होगा।

वह रेन कोट धर्म का कार्य करने वाला होगा। धर्म के रूप में वैसा जब प्रसंग बन जाए, वैसी ही एक दीवार, वैसी परत प्राप्त हो जाएगी फिर कर्मों का आस्रव, कर्मों का आगमन हमारी आत्मा के साथ नहीं हो पाएगा। इसकी पूर्णता चौदहवें गुणस्थान में हो पाती है। कौन से गुणस्थान में? (प्रतिध्वनि– चौदहवें गुणस्थान में) कितने दिन के बाद आप वापस बता दोगे? कितने दिन बाद में आपको याद रहेगी? कितने दिन बाद में रात को उठाकर पूछ लें कि पूर्ण रूप से संवर कौन-सा है? कब है? गुणस्थान कौन-से नंबर पर आता है? अभी आप बोल रहे हो कि 14वें नंबर पर आता है। अभी तो बता दिया, किंतु कभी रात में उठाकर पूछ लें तो क्या बता दोगे? फिर बोलोगे अरे! म.सा. ने व्याख्यान में फरमाया तो था! व्याख्यान में बोला तो था! फिर बोलोगे कि अभी याद नहीं आ रहा है। अभी याद नहीं आ रहा है तो फिर क्या काम आया? परीक्षा के समय यदि याद नहीं आया तो किस काम का!

एक व्यक्ति इंटरव्यू देने के लिए गया। सूट-बूट पहनकर, सज-धजकर और किताबें दिमाग में रटकर गया। जैसे लोक सेवा आयोग की परीक्षा होती है, वैसी ही परीक्षा हो रही थी। उसे सीढ़ियों से चढ़ते हुए ऊपर जाना पड़ा। वह गया एक कमरे में। वहां इंटरव्यू लेने वाला एक चेयर पर बैठा था। सामने की चेयर पर उसको बैठाया गया और उससे प्रश्न किया गया कि अभी आप सीढ़ियां चढ़कर आए हैं तो सीढ़ियां कितनी थीं? अब क्या जवाब दे? अभी आप यहां स्टेज पर चढ़कर आएं और आपसे पूछा जाए कि कितनी सीढ़ियां हैं तो क्या जवाब दोगे? (प्रतिध्वनि– 10 सीढ़ियां) अरे! वाह! आपने तो पहले ही गिन रखी हैं। आप लोग तो बाणियां हो। आपको पता था कि ऐसा ही कुछ प्रश्न आ सकता है हमारे सामने भी। बाणिये की बुद्धि काम आ गई। सोच लिया कि ऐसा प्रश्न आ सकता है। पहले ही बोल दो, हम तो जवाब देने के लिए तैयार रहते हैं।

आप लोग तो अभी बोल दोगे किंतु वह परीक्षा में नहीं बोल पाया। उसका वहां पर बोलना नहीं हो पाया। लोग कहते हैं कि वहां पर परीक्षा थोड़ी अलग ढंग से होती है। वहां पर आपको बोलेंगे कि अमुक कर्मचारी को बुलाकर लाना। कर्मचारी को बुलाना है तो क्या आप बाहर जाकर देखेंगे कि कर्मचारी कहां पर

है? दरवाजे के पास होगा तो उठकर जाकर देखेंगे कि कर्मचारी को बुलाकर ले आऊं। फिर वह व्यक्ति उठकर कर्मचारी को बुलाने के लिए जाएगा तो पास होगा या फेल होगा? वह फेल हो जाएगा क्योंकि अफसर अगर कर्मचारी को बुलाने के लिए इधर-उधर घूमेगा तो फिर हो गया काम! उसे क्या करना चाहिए? उसको, अफसर को कर्मचारी या चपरासी को बुलाने के लिए क्या करना चाहिए? उसे घंटी बजानी होती है। चपरासी को बुलाने के लिए उठकर जाएगा तो चपरासी आएगा या घंटी बजाओगे तो चपरासी आएगा? घंटी बजाएंगे तो चपरासी आएगा। हमें जाकर बुलाने की आवश्यकता नहीं है।

यह कब हो पाएगा? खाली किताब पढ़ने से ही काम नहीं होगा। पोथी के पंडित बनने से कुछ नहीं होगा। आत्मानुभूति वाला ज्ञान नहीं होगा, आत्मअनुभूत ज्ञान नहीं होगा तो वह परीक्षा में फेल हो जाएगा। आत्मा की परीक्षा में क्या करना? आत्मा की परीक्षा में क्या करेंगे? पुण्य और धर्म में दो ही बातें समझ लो। पुण्य साता पहुंचाने वाला होता है, धन देने वाला होता है, दौलत देने वाला होता है, परिवार देने वाला होता है, संस्कार देने वाला होता है। सब संस्कारी हैं, पत्नी आज्ञाकारी है, पुत्र आज्ञाकारी है और पुण्य से कोई रोग शरीर में रहेगा नहीं। ये सारी चीजें पुण्य के योग से मिलती हैं। रोज की झंझट, रोज की माथा-पच्ची, रोज का क्लेश किससे मिलते हैं? (प्रतिध्वनि– पाप से) और धर्म से क्या मिलता है?

एक बड़ी भक्तन बहन ने व्याख्यान में आना छोड़ दिया। संतों के वहां जाना छोड़ दिया। मदन मुनि म.सा. जैसे संत पहुंच गए। आपके यहां पर भी एक बहन आती हैं ना, जो पाठशाला चला रही हैं। क्या नाम है उनका? (प्रतिध्वनि– किरण बाई) हां! किरण बाई सा। मुझे नाम थोड़ा याद कम ही रहता है। तो उस बाईजी से जाकर म.सा. ने पूछा कि बाईजी आए नहीं आप? उसने कहा कि बापजी! आपको मालूम ही होगा कि मैं दिन में चार टाइम धर्म स्थानक में आती थी। सुबह प्रार्थना के समय, व्याख्यान के समय, दिन में वाचनी के समय, शाम को प्रतिक्रमण के समय किंतु क्या करूं? अब देख लिया कि धर्म में कोई सार नहीं है। मेरे बेटे के 10 साल हो गए शादी को और अभी तक पोता नहीं हुआ। धर्म पोता देवे या गोता देवे? क्या देता है धर्म? पोता देवे या गोता देवे? धर्म गोता देता है क्या? बताओ आप लोग, धर्म क्या देता है? पोता देता है क्या धर्म? हम धर्म से क्या चाहते हैं? ऐसा पोता दो जो गोता देवे।

एक व्यक्ति पत्थर से बनी हुई गाय के स्तनों से दूध निकालना चाह रहा है तो क्या दूध निकलेगा? एक हाथी बना हुआ है पत्थर का, सीमेंट का। उस पर बैठकर कोई बोलता है कि जल्दी चलो। मुझे जल्दी से जाना है, चलो। मुझे उस जगह पर पहुंचा दो। क्या यह कहने से वह हाथी खिसकेगा वहां से? जो चीज जिससे मिलने वाली नहीं है उस चीज को उससे मांगते हो तो वह कैसे मिलेगी? वह चीज वहां से कैसे मिलेगी?

डॉ. मनोहर लोहिया। ये मैं ऐसे ही कोई नाम बोल रहा हूं। एक जगह ऐसे नाम की नेम प्लेट लगी हुई थी। एक भाई घर में गया और बोला कि डॉ. साहब बहुत तेज पेट दुख रहा है। पेट बहुत दर्द कर रहा है। कोई उपचार कीजिए। कोई दवाई दीजिए। उसने कहा कि भाई मैं शरीर विज्ञान का डॉक्टर नहीं हूं। मैंने पीएच.डी. की है साहित्य में, इसलिए मेरे नाम के आगे डॉक्टर लगा हुआ है। मैं शरीर विज्ञान का डॉक्टर नहीं हूं। वह कहता है कि डॉ. साहब आप जो फीस लेना चाहते हो, मैं दे दूंगा। आप सोच रहे हो कि मैं गरीब हूं, फीस कहां से दूंगा? मैं आपकी फीस बराबर दूंगा, आप प्लीज मेरा इलाज कीजिए। अब क्या करेगा डॉक्टर? बताओ?

उस डॉक्टर से कहो कि मेरे रोग को दूर कर दो तो क्या वह कर पाएगा? जो चीज धर्म से मिलनी नहीं हम उससे मांग रहे हैं कि पोता हुआ नहीं इसलिए धर्म स्थान में आना छोड़ दिया। वह चीज प्राप्त नहीं हुई तो धर्म स्थान में आना छोड़ दिया, धर्म स्थान छोड़ दिया। न कोई संवर करना, न कोई सामायिक करना। ठीक किया क्या? हमने धर्म से क्या मांगा? धर्म से क्या चाहिए हमको? एक बबूल के पेड़ के नीचे खड़े होकर बोल रहे हैं कि भाई, मुझे आम दो। क्या बबूल का पेड़ आम दे देगा? (प्रतिध्वनि–नहीं देगा) वह नहीं देगा। आम के लिए कहां जाना पड़ेगा? बबूल के पेड़ के नीचे आम मिलेंगे क्या? बबूल के पेड़ के नीचे आम नहीं मिलेंगे। आम के लिए आम के पेड़ के नीचे जाना होगा।

वैसे धर्म से लौकिक फल मांगते हैं, चाहते हैं। जो लौकिक कामनाएं पूर्ण करे, वह धर्म नहीं है। धर्म से वे चीजें मिलने वाली नहीं हैं। वे चीजें मिलेंगी पुण्य योग से। पुण्य होगा तो मिलेंगी। पुण्य योग नहीं होगा तो नहीं मिलेंगी। बहुत स्पष्ट है कि बैंक में जमा है पैसा और बैंक में चेक लगाएंगे तो चेक स्वीकार हो जाएगा। क्या बोलते हैं? चेक स्वीकार होता है तो स्वीकार होना ही बोलते हैं ना? (प्रतिध्वनि–चेक क्लियर होना) बैंक में पैसा जमा

नहीं है तो और चेक कटकर जाएगा तो वह चेक स्वीकार होगा क्या? वह चेक स्वीकार नहीं होगा। यह बैंक हमारे पुण्य और पाप रूप है। धर्म बैंक नहीं है। धर्म स्टॉक नहीं है। धर्म स्टॉक नहीं करता है। स्टॉक पुण्य और पाप है। हमारे कर्मों का स्टोरेज, पुण्य और पाप रूप है। वह या तो पाप रूप में है या पुण्य रूप में। धर्म क्या करेगा? धर्म उस स्टॉक को साफ करके क्लीन करना चाहेगा। ये सारी चीजें हटा दो। धर्म कहता है कि ये सारी चीजें यहां से हटाओ। हटाओ। हटाओ।

अभी चातुर्मास चल रहा है। चातुर्मास के कितने दिन शेष रह गए अब? चातुर्मास पूर्ण होने में कितने दिन बच गए? कितने दिन बाकी रह गए? अभी आप लोग गिन रहे हो? (प्रतिध्वनि– 25 दिन) 25 दिन के बाद और 10 दिन निकल जाएं तो 35 दिन मान लो। 35 दिन के बाद यहां आकर देखेंगे तो ये टाइल्स और चरण वंदन के लिए बनाया हुआ स्टेज कहां पर रहेगा? ये टाइल्स हमें कहां पर मिलेंगी? ये पंडाल, जो अभी टेंट लगाकर बनाया हुआ है, वह कहां पर मिलेगा? खोलने में टाइम लग जाए तो बात अलग है, नहीं तो इस पंडाल का कोई खंभा इधर गिरा हुआ मिलेगा, कोई खंभा उधर गिरा हुआ मिलेगा। कोई पर्दा यहां पर मिलेगा तो कोई पर्दा कहीं और जगह पर। यहां-वहां मिलेगा। इस पंडाल का मालिक यहां से खोलकर ले जाएगा तो फिर यहां पर क्या मिलेगा? (प्रतिध्वनि– खाली मैदान मिलेगा) धर्म का क्या काम हुआ? धर्म तो कहता है कि सारी चीजें उठाकर साफ करो। धर्म का स्टोर करने का काम होगा क्या? धर्म का काम स्टोर करने का नहीं है। धर्म का काम साफ करने का है। स्टोर करने का काम पुण्य और पाप का है। कर्म का है। उसको साफ करना, एकदम क्लीन करना, सब हटा देना धर्म का काम है।

जिस बहन को पोता नहीं मिला उसने धर्म को छोड़ दिया। आप ही बताओ कि उसने कहा कि मुझे पोता नहीं मिला तो मैंने धर्म क्रियाएं करना और धर्म स्थान जाना छोड़ दिया। उसने सही मांगा या गलत मांगा? धर्म करेगा क्या? ऐसा कहीं हम भी तो नहीं कर रहे हैं? वह गलत कर गई तो कर गई। हम तो ऐसा गलत कार्य नहीं कर रहे हैं ना?

क्या देवकी महारानी कह रही है कि अब मैं भगवान के दर्शन नहीं करूंगी क्योंकि मेरा एक भी बेटा जिंदा नहीं रहा। अब क्या करूं भक्ति करके? क्या देवकी ने ऐसा किया था? क्या देवकी ने भक्ति करना छोड़

दिया था? (प्रतिध्वनि–नहीं छोड़ा उसने भक्ति करना) यही धर्म होता है। धर्म की यही समझ होनी जरूरी है। यह समझ होगी तो आप कभी भी धर्म को छोड़ नहीं पाओगे। ऐसा नहीं कि मैं धर्म स्थानक में नहीं आता। मैं धर्म नहीं करता। क्या मतलब है धर्म करने से? मेरा तो आमंत्रण पत्रिका में नाम ही नहीं था। उसका नाम था, उसका नाम था, मेरा नाम नहीं था। हमारा पत्रिका में फोटो नहीं था। हमारा अखबार में नाम नहीं था। क्या करना नाम से? संघ में नाम मिलने से क्या हो जाएगा? नाम मिल जाएगा तो तिर जाओगे क्या? नाम नहीं हुआ तो क्या हुआ?

नाम होना धर्म है या नाम नहीं होना धर्म है? बताओ नाम होना धर्म है या नाम नहीं होना धर्म है? न तो नाम होना धर्म है और न ही नाम नहीं होना धर्म है। नाम होने या नहीं होने से मन में पीड़ा नहीं होना ही धर्म है। नाम होना या नहीं होना धर्म नहीं है। मन में पीड़ा नहीं होना धर्म है। नाम है या नहीं है किंतु मेरे मन में किसी प्रकार की कोई पीड़ा नहीं है, वह अवस्था धर्म है। कौन-सी अवस्था धर्म है? धर्म में जीना है या अधर्म में जीना है? धर्म में जीयेंगे तो क्या करेंगे और अधर्म में जीयेंगे तो क्या करेंगे? धर्म में जीयेंगे तो क्या करना? थोड़ी ऊंची-नीची बात हुई नहीं कि मैं धर्म-स्थान में नहीं जाऊं। मुझे धर्म ध्यान नहीं करना, घर पर ही कर लूंगा। घर पर कर लेगा तो समाज का क्या बिगड़ेगा? समाज का क्या बिगड़ने वाला है? नहीं करेगा तो धर्म का क्या बिगड़ने वाला? कटा तो कौन कटा? (प्रतिध्वनि–जो घर पर रहने वाला है) क्या फायदा हुआ कटने से? आंखें मिलाने की हिम्मत किसकी नहीं होगी? जो आदमी ऐसा करके बैठ जाए वह पांच आदमियों में बैठा है तो उसकी आंखें नहीं मिलेंगी। इसका मतलब गलत कौन हुआ? भले ही आप गलत न हों, दुनिया में चाहे कितना भी अपने आपको सही साबित करने की कोशिश कर लें किंतु दुनिया की नजरों में गलत हैं। दुनिया जान रही है कि आप गलत हैं। आप यदि गलती नहीं मान रहे हो और अपने आपको सही साबित करना चाह रहे हो तो यह बात बता रही है कि आपने गलती की है। आपसे गलती हुई है।

गलती को मान लेना इनसान की बात है। जो गलती नहीं करे वह देव है। उसे भगवान माना गया है। गलती करना और मान लेना, इनसान की बात है। गलती करना और मानना नहीं किसका काम होता है? यह काम शैतान का है। हमारी गिनती किसमें आनी चाहिए? (प्रतिध्वनि–इनसानों

में) इनसान में आनी चाहिए। भगवान में नहीं? मतलब गलती तो करेंगे और गलती करके उसको मान लेंगे। भगवान कौन होता है? भगवान वह होता है जो गलती करता ही नहीं है। हम बनना क्या चाहते हैं? हम इनसान से भगवान बनना चाहते हैं या इनसान से शैतान? शैतान बनना चाहते हैं या भगवान? क्या बनना चाहते हैं, यह हमारे पर निर्भर है। हमको निर्णय करना पड़ेगा कि हम क्या बनना चाहते हैं। हम चाहते कुछ हैं और करते कुछ और हैं। 'जैसा चाहो, वैसा करो।'

यदि इनसान बनना चाहते हो, इनसान बने रहना चाहते हो और भगवान की दिशा में आगे बढ़ना चाहते हो तो गलती करने की दिशा में नहीं बढ़ना चाहिए। लक्ष्य यह रहे कि कोई भी गलती नहीं हो। हो गई तो सहज रूप में तत्काल स्वीकार कर लेना। दूसरे पर डालने की कोशिश नहीं करना। नहीं तो एक गलती की ही है उसे छिपाने के लिए दूसरी गलती और की। दूसरों पर गलती ठहराई और फिर उस गलती को छिपाने के लिए तीसरी गलती। ऐसे पता नहीं कितनी गलतियां हो जाती हैं। कितनी गलतियां हम करते जाएंगे? आदमी एक बात को छुपाने के लिए झूठ बोलता है फिर उसको छुपाने के लिए एक और झूठ बोलता है। ऐसे में पता नहीं कितनी चद्दरें लगेंगी। केवल एक चद्दर नहीं लगेगी। आदमी कहीं न कहीं यह धोखा खा जाता है कि मैं गलती को स्वीकार करूंगा तो लोग मेरी इन्सल्ट करेंगे, मेरा अपमान करेंगे, मेरी बेइज्जती होगी। मेरा अपमान हो रहा है। नहीं तो सम्मान हो जाएगा क्या तुम्हारा? तुम्हारी गलतियां दुनिया वाले जानते हैं। तुम मानो या न मानो, फिर भी लोगों की दृष्टि में सम्मान होगा? सम्मान बन जाएगा? यदि तुम गलती को स्वीकार कर लेते हो तो लोग स्वीकार करेंगे या नहीं करेंगे? लोग सम्मान करेंगे। बोलेंगे कि आदमी खरा है। गलती तो दुनिया से होती है। गलती को मान लेता है, तत्काल क्षमा याचना कर लेता है। तो किसको महत्त्व देना!

धर्म परम अरनाथ नो, किम जाणूं भगवंतों रे।
स्व-पर समय समझाविये, महिमावंत महंतो रे॥

धर्म परम है अरनाथ भगवान का। उसकी महिमा अपूर्व है। उस महिमा को पाना है तो हमें स्टॉक खाली करना पड़ेगा। स्टोर में रहे हुए स्टॉक को हटाना पड़ेगा, पूरा खाली करना पड़ेगा।

लोग घर बदलते हैं तो सामान उठाकर ले जाते हैं। घर को एकदम खाली कर देते हैं। घर को खाली करके बदल लेते हैं किंतु धर्म में बदला-

बदली नहीं होती है। हटा दो, पूरा हटा दो। जिस दिन पूरा हट जाएगा, उस दिन धर्म का काम पूरा हो जाएगा। उस दिन जो भी सारा स्टॉक में है, पुण्य-पाप, सब हट जाएगा। उस दिन धर्म कहेगा कि अब मेरा सारा काम हो गया। क्या हो गया? अब मेरा पूरा काम हो गया। अब धर्म को कह सकते हैं कि आप सुखी-सुखी पधारिये, विहार कीजिए और मैं अपनी तरफ जाता हूं।

बंधुओ, हम लोग ऐसे स्वसमय, ऐसे परम धर्म को प्राप्त करें। ऐसा हमारा लक्ष्य होना चाहिए। उस लक्ष्य के अनुरूप प्रवृत्ति करेंगे, उस लक्ष्य के अनुरूप हम गति करेंगे, हो सकता है कि इसके लिए अपने भीतर को तैयार करना पड़े। शरीर पर असर न आए किंतु भीतर भी कुछ आंदोलित नहीं हो। चाहे सुख हो या दुःख, चाहे मान हो या सम्मान। कुछ भी हो। कोई कितना भी तिरस्कार करे, अपमान करे। कोई कितना भी बिगाड़ करना चाहे तो मेरा क्या बिगाड़ होगा? मेरा बिगाड़ कोई नहीं कर सकता है। मेरा कोई बिगाड़ नहीं करने वाला है, यह पक्का विश्वास होना चाहिए। मेरी आत्मा का कोई बिगाड़ नहीं कर सकता। ऐसी दृढ़ता हम रखेंगे तो निश्चित ही हम परम धर्म का अनुभव करेंगे। हमें शुद्ध आत्मा की अनुभूति होगी। हमारा स्व-समय विलासित होगा। हम स्वयं आत्मा में रमण करेंगे और अपने-आप को धन्य बनाएंगे। इतना ही कहते हुए विराम।

• पुनश्चः–

2 मिनट 57 सेकण्ड। क्या समझे? 2 मिनट और 57 सेकण्ड आत्म अनुभूति की दृष्टि में प्रयास करेंगे। कितना समय? 2 मिनट 57 सेकण्ड तक आज आत्म अनुभूति में अपना प्रयत्न करेंगे। 2 मिनट 57 सेकण्ड।

18 अक्टूबर, 2019

12

निज रूप ही सच्ची शोभा

सेवक केम अवगणिये हो मल्लिजिन!
ए अब शोभा सारी,
अवर जेहने आदर अति दीये,
तेहने मूल निवारी हो मल्लि.॥1॥
ज्ञान स्वरूप अनादि तमारुं
ले लीधुं तमे ताणी,
जुओ अज्ञानदशा रीसावी
जातां काण न आणी हो मल्लि.॥2॥

स्तुति कई प्रकार की होती है। सद्गुणों का कथन करना उसका मुख्य उद्देश्य है। उन्हें स्तुति में कभी-कभी सहज-सरल रूप से दर्शाया जाता है तो कभी-कभी व्यंग्य के रूप में भी स्तुति की जाती है। मल्लिनाथ भगवान की स्तुति करते हुए कहा गया है–

सेवक केम अवगणिये हो, मल्लि जिन!
ए अब शोभा सारी।

हे मल्लिनाथ भगवान! सेवक केम अव अवगणिये। आपने सेवक की अवगणना कैसे कर दी? अवगणना का मतलब, उसकी वृत्ति को समाप्त कर देना। उसके महत्त्व को समाप्त कर देना। भगवन्! अनादिकाल से जो सेवक आपकी सेवा में लगे रहे हैं, आपने उनको किनारे कर दिया। उनकी अवगणना कर दी। अवगण का मतलब, अवमानना कर दी। ये क्या आपके लिए उचित है? क्या यह आपके लिए शोभास्पद है? ये सेवक और सेव्य कौन है? गंभीर मीमांसा का विषय है। अभी उसकी गंभीरता में नहीं जा रहा हूं। यहां स्तुति में यह बताया गया कि क्रोध, मान, माया, लोभ अनादिकाल

से आपके सेवक रूप में रहे हुए हैं। अब इनको आपने तिरस्कृत कर दिया, अपमानित कर दिया। एक झटके में अपने से उनको हटा दिया। ऐसा करना क्या आपके लिए उचित हो सकता है?

जो इतने लंबे अरसे से आपकी सेवा करते रहे हैं, आपका साथ निभाते रहे हैं, उनको एक झटके में छोड़ देना, अलग कर देना, इसको कैसा समझें, क्या समझें? एक तो यह अर्थ होता है। इसका दूसरा अर्थ बनता है कि आपने जो ऐसा कार्य किया है, वस्तुतः बड़ा महत्त्वपूर्ण है और उसी से आपकी सारी शोभा है। आत्मा की शोभा उसी में है कि वह कषायों को दूर कर दे। कषायों में बंधी नहीं रहे। आपने वही प्रयत्न किया। चाहे वे कितने ही लंबे समय से आपके साथ में बंधे रहे हों किंतु अब आपने यह जाना, यह अनुभव किया कि ये कषाय, ये दोष, मेरी आत्मा को दूषित करने वाले हैं, मेरे आत्म-गुणों का क्षरण करने वाले हैं तो फिर आपने ऐसा प्रयत्न किया कि उन सबको किनारे कर दिया और अपने-आप में सिद्ध हो गए हैं। वस्तुतः इसी से आपकी शोभा है। इसी से आपकी महत्ता है। आपका महत्त्व इसी में है कि आपने इन कषायों को दूर कर दिया। यह स्तुति का भाव है किंतु विचार करने की आवश्यकता है कि इसके आगे हम क्या सुनना चाहते हैं या इससे हम क्या प्रेरणा लेना चाहते हैं।

आत्मा में स्वाभाविक गुण भी है और वैभाविक गुण भी। स्वाभाविक गुणों का उत्कर्ष होता है तो आत्मा ऊंचाइयों की ओर आगे बढ़ती है और वैभाविक गुणों का उद्वेग होने पर, वैभाविक गुण विशेष रूप से उपस्थिति दर्ज कराने लगते हैं तो वे आत्मा की शक्तियों को मंद से मंदतर करने वाले बन जाते हैं। उन्हीं के प्रताप से ये आत्मा संसार में अब तक परिभ्रमण करती रही है। चाहे एकेंद्रिय दशा में गये, बेइंद्रिय, तेइंद्रिय या चतुरिंद्रिय में। किन्हीं भी दशाओं में जीव गया, आत्मा गई, उसका मूल कारण कषाय रहा है। मूल कारण पुद्गल वृत्ति रही है। उसका मूल कारण स्वाभाविक गुणों के प्रति अनदेखा भाव रहा है। मतलब स्वाभाविक गुणों के प्रति लक्ष्य नहीं बना। जब तक उनके प्रति लक्ष्य बनता नहीं है तब तक आत्मा सही दिशा में गतिशील नहीं बन सकती।

कविता में आगे कहा कि 'अवर जेहने आदर अति दीये' भगवंत, उनका कोई बिगाड़ होने वाला नहीं है। क्रोध, मान, माया, लोभ का कोई बिगाड़ होने वाला नहीं है। आप ने छोड़ दिया। भले ही आप इनको छोड़ दो किंतु दूसरे बहुत से लोग उनको आदर देने वाले हैं।

हम किसको आदर दे रहे हैं? क्रोध, मान, माया, लोभ को आदर दे रहे हैं। इनका सम्मान कर रहे हैं। इनको अपने भीतर प्रतिष्ठित कर रहे हैं या इनको अपने भीतर से धकेल रहे हैं?

अवर जेहने आदर अति दीये, तेहने मूल निवारी हो

जिनको दूसरे लोग बड़ा महत्त्व देते हैं, बहुत सम्मान देते हैं किंतु आपने उनका मूल से निवारण कर दिया, मूल से उसको नकार दिया। इसके भी दो प्रकार से अर्थ किए जा सकते हैं। एक तो यह कि आपने भले ही इनको छोड़ दिया किंतु दुनिया में बहुत से लोग इनको आदर देने वाले हैं। इनको कोई फर्क नहीं पड़ता है। दूसरा अर्थ यह बनता है कि आप ही एक ऐसे हैं दुनिया में कि इनको इतना प्रोत्साहन मिला हुआ है। दुनिया में क्रोध, मान, माया, लोभ को इतना अवसर मिला हुआ है। जगह-जगह इनको सम्मान मिला हुआ है। ऐसे सम्मान मिले हुए को भी आपने हिम्मत करके हटा दिया, मूल से उनका निवारण कर दिया। जड़-मूल से उनको आपने हटा दिया। यह वस्तुतः आपके शोभा की बात है।

दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि कषाय जब हटते हैं तो आत्मा का सौन्दर्य निखरता है। जब तक कषाय बने रहते हैं तब तक आत्मा का सौन्दर्य उस रूप में निखर नहीं पाता है। एक कषाय-युक्त आक्रांता व्यक्ति का चेहरा देखने पर वह तनावमय स्थिति में मिलेगा। दूसरी तरफ आत्मभावों में रमण करने वाले व्यक्ति का चेहरा देखने पर उसकी मुद्रा बड़ी सौम्य मिलेगी, शांत मिलेगी।

पांच अनुत्तर विमानवासी देव के विषय में बताया गया है कि वे उपसम भाव में रहते हैं। कषाय छूटा नहीं है, वीतराग नहीं बने हैं। इसके बावजूद उनमें कषायों का उद्वेग नहीं है। क्रोध, मान, माया, लोभ का उद्वेग नहीं है। बहुत सामान्य स्थिति में हैं, जिसका हम अनुभव भी नहीं कर सकते हैं। सामान्य तो हम सभी में रहता है क्योंकि जब तक वीतराग नहीं बनेंगे, क्रोध, माया, मान, लोभ में से कोई न कोई उपस्थित रहेगा ही। हम इनसे पूर्णतया स्वतंत्र नहीं हो सकते। इनसे आजाद नहीं हो सकते। वैसे ही अनुत्तर विमानवासी देव उत्कृष्ट 33 सागरोपम तक शांत-प्रशांत मुद्रा में रहते हैं, सौम्य भावों में रहते हैं। उनका आत्मिक सौन्दर्य बड़ा निखरा होता है। कोई झंझट नहीं, कोई झगड़ा नहीं, कुछ नहीं। शांत, शांत, शांत। समाधि में हैं। इसका कारण यही है कि उन्होंने कषायों को शांत कर दिया। उनकी लपटें उठने नहीं दीं। उनकी लहरों को उन्होंने पैदा नहीं होने दिया।

तालाब में उतनी लहरें, उतनी तरंगें नहीं उठती हैं, जितनी समुद्र में। समुद्र में बहुत लहरें उठती हैं, बहुत तरंगें उठती हैं। पानी समुद्र का भी है और पानी तालाब का भी है किंतु दोनों में बहुत बड़ा अंतर है, बहुत बड़ा भेद है। इसका क्या कारण है? समुद्र में हवा का प्रवाह बनता रहता है। उस हवा के प्रवाह से उसमें लहरें पैदा होती रहती हैं, जबकि तालाब में हवा का प्रवाह उतना प्रभावित नहीं कर पाता। वैसे ही मिथ्यात्व दशा रहती है तो कषायों का प्रवाह या मिथ्यात्व हवा से कषायों का उद्वेग होता रहता है, लहरें चलती रहती हैं। जब मिथ्यात्व शांत हो गया होता है, मिथ्यात्व सीमित हो जाता है, सम्यक्त्व का भाव आ जाता है तो वह जानने लग जाता है कि मेरा स्वरूप क्या है?

मिथ्यात्व और सम्यक्त्व का स्वरूप क्या है? अपनी पहचान नहीं होने को मिथ्यात्व कहा गया है। आत्मा को नहीं जानना मिथ्यात्व है। अपनी पहचान हो जाना, मैं कौन हूं, अपने अस्तित्व का ज्ञान हो जाना, मैं हूं की अनुभूति होना सम्यक्त्व है। हमको अपने होने की अनुभूति हो रही है या अपने नहीं होने की अनुभूति हो रही है? हम क्या अनुभव कर रहे हैं? क्या लगता है– मैं हूं या नहीं हूं? (प्रतिध्वनि– मैं हूं) मैं हूं। एकदम ठीक बात है। किंतु मैं हूं ये कौन? मैं हूं कौन?

देखो, हम कहते हैं कि आत्मा है। ये कहना ठीक है। हम कहते हैं कि आत्मा है किंतु ये जो हमारा कहना है, हम जो यह कह रहे हैं, यह हमारा कहना पुस्तकों में पढ़ा हुआ है, व्याख्यानों में सुना हुआ है या हमें वैसी अनुभूति हो रही है? यदि अनुभूति हमें वैसी नहीं हो रही है तो अभी तक हमें आत्मा का बोध नहीं हुआ है। आत्मा का ज्ञान हमें अभी तक नहीं हुआ है। आत्मा की अभी तक हमें पहचान नहीं हुई है। हमें वैसी अनुभूति हो रही है, हम अपने आप में वैसा अनुभव कर रहे हैं तो सच्चे मायने में हमें आत्मा की पहचान हो पाई है। आत्मा की पहचान जितनी गहरी होगी, उसका परिणाम भी हमको मिलेगा। उसका लाभ भी हमको मिलेगा। उसकी अनुभूति और भी प्रखर होगी।

आत्मा के अस्तित्व का जितना गहरा ज्ञान होगा, हमारे कषाय उतने ही शांत होते हुए चले जाएंगे। हमारे दिमाग में लड़ाई-झगड़े की भावना भी पैदा नहीं होगी। किसी की शिकायत या किसी से शिकायत भी हमारे भीतर पैदा नहीं होगी। हम किससे शिकायत करें? क्या है शिकायत? यदि हमारे भीतर

एक-दूसरे के प्रति ईर्ष्या के भाव, शिकायत के भाव बनते हैं, ऐसे विचार बनते हैं तो इसका मतलब है कि जितनी गहरी अनूभूति आत्मा के अस्तित्व की होनी चाहिए, वैसी नहीं बन पाई है।

एक सम्राट् चिंतित हो गया। वह सोचने लगा कि अब मेरा कार्यकाल पूरा होने वाला है। बुढ़ापा आ रहा है। मुझे राज्य छोड़ना पड़ेगा। उस राष्ट्र का यह संविधान था कि जैसे ही राजा का कार्यकाल पूरा हो जाए, राजा बूढ़ा हो जाए तो उसको जंगल में छोड़ दिया जाए। राजा सोचने लगा कि मुझे भी जंगल में छोड़ दिया जाएगा। मेरी क्या स्थिति बनेगी? जंगली जानवरों से कैसे बचाव होगा? क्योंकि बुढ़ापे में मेरा शरीर शिथिल हो गया होगा। राजा बड़े चिंतित थे। दीवान जी ने एक बार देखा और कहा कि राजन्! क्या विशेष कोई परिस्थिति है? आप किस कारण से इतने चिंतित हैं? किसी दूसरे राज्य का आप पर आक्रमण का कोई समाचार भी नहीं है। ऐसी कोई जानकारी भी नहीं है कि कोई दूसरा राजा आप पर आक्रमण करने वाला है, आपके राष्ट्र पर आक्रमण करने वाला है। यदि कोई आक्रमण करता भी है तो हमारे यहां योद्धाओं की कमी नहीं है, सेना की कमी नहीं है। एक से एक बढ़कर वीर हमारे यहां मौजूद हैं। इस विषय में कोई चिंता की बात नहीं है। संतान नहीं होना भी चिंता का एक कारण बन जाता है किंतु आप सौभाग्यशाली हैं। इस विषय में भी आपको चिंता की बात नहीं है। फिर चिंता का कारण क्या है?

राजा ने कहा कि दीवान जी, अब आप से क्या छिपाना है? आप हमारे राष्ट्र के संविधान को जान रहे हो। इस संविधान में यह नियम है कि जब कोई राजा बूढ़ा हो जाए तो उसको जंगल में छोड़ देंगे। बस, यही चिंता का कारण बना हुआ है। इस चिंता से निवृत्त कैसे होऊं? दीवान जी ने कहा, राजन् अभी हमारे पास समय है। सत्ता आपके हाथों में है। हम चाहें तो इस समय का अच्छा उपयोग हो सकता है। उसने एक प्लान राजा के सामने प्रस्तुत किया। राजा खुश हो गए और कहा कि जितना भी धन चाहिए खजाने से ले जाओ और इस प्लान को पूरा करो।

दीवान जी ने जंगल में ही एक नया भवन बनाया। भवन, राजा के महल जैसा ही बनवा दिया। इधर भवन बनकर तैयार हो गया तो उधर राजा के हटने में थोड़ा-सा समय ही बाकी था। दीवान जी ने आकर राजा से कहा कि राजन्, सारी व्यवस्था हो गई है। अब भी राजा को कोई चिंता है? अब राजा को कोई चिंता नहीं है। क्या अब राजा चिंतित होगा कि मेरे

आगे का जीवन कैसे बीतेगा? (प्रतिध्वनि– अब राजा चिंतित नहीं होगा।) अब राजा चिंतित नहीं होगा। उसने भी स्वयं एक बार जाकर उस महल को देख लिया। अब वह निश्चिंत हो गया। अब कोई चिंता नहीं है। मुझे साल भर बाद जंगल में ले जाकर छोड़ना हो या साल भर पहले भी ले जाकर छोड़ दें, मुझे कोई शिकायत नहीं है, कोई भय नहीं है। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि उसको आगे के अपने अस्तित्व का ज्ञान हो गया। उसमें असुरक्षा-भाव खत्म हो गया।

जैसे ही हमें ज्ञान हो जाता है कि आत्मा सदा अजर-अमर रहने वाली है, इसकी मृत्यु कभी नहीं होती है, इसका मरण नहीं होता है तो फिर हम पर कैसी भी कठिनाई आ जाए, कैसी भी विपत्ति आ जाए, कैसा भी संकट आ जाए, हमारा मन विचलित नहीं होगा। हमारा मन इस बात के लिए तैयार रहेगा कि कोई मेरे साथ कैसा भी बर्ताव करे, मेरी आत्मा का कुछ भी बिगाड़ होने वाला नहीं है।

फायर प्रूफ बोलते हो ना! फायर प्रूफ क्या होता है? (प्रतिध्वनि– जिसमें आग नहीं लगती है) जिसमें आग नहीं लगेगी। आपने एक बंगला बनाया। उसमें सारे फायर प्रूफ साधनों को लगाया और बंगले के बाहर की तरफ आग लग गई। आपको कोई चिंता होगी? आपको किसी प्रकार की कोई चिंता होगी? (प्रतिध्वनि– कोई चिंता नहीं होगी) क्यों नहीं होगी? क्योंकि आप निश्चिंत हैं कि मेरा बंगला ऐसा बना हुआ है जिसमें आग लगेगी ही नहीं। आपको इतना पक्का भरोसा होगा तो कितनी भी आग लगे, आपका मन चंचल होगा क्या? वैसे ही आपका मन पक्का है कि मैं मरने वाला नहीं हूं, मेरी आत्मा मरने वाली नहीं है तो कोई बंदा कैसा भी बर्ताव करे, क्या फर्क पड़ेगा? मैं फायर प्रूफ वाला हूं। मेरे को आग लगने वाली नहीं है। मेरे को किसी प्रकार का कोई कषाय लगने वाला नहीं है। तुम कितना भी प्रयत्न कर लो, मेरे भीतर कषाय पैदा नहीं होगा। यह तब होगा जब आत्म-भावों में गहरे अस्तित्व की जानकारी बन जाएगी, गहरी पैठ बन जाएगी। जिसको ऐसा हो जायेगा, उसको कहीं से कहीं तक दिक्कत नहीं आएगी, चिंता नहीं होगी।

हम कहते हैं कि भगवान महावीर के कानों में कीलें ठोकी गईं। उनको दर्द भी हुआ होगा किंतु उनको कष्ट नहीं हुआ। उनको दुःख नहीं हुआ। वे

दु:खी नहीं हुए। भगवान के मन में ऐसा नहीं आया कि मेरे साथ ऐसा बरताव क्यों किया जा रहा है? गजसुकुमाल मुनि के सिर पर अंगारे रखे गए। कोई हलचल हुई? कोई हलचल नहीं हुई। ये सब कैसे हो गया? हम सुनते हैं हर वर्ष। सेठ सुदर्शन, अर्जुन माली के उपसर्ग को देखकर सागरी संथारा करके बैठ गए। कोई हलचल नहीं। ऐसा कैसे हुआ? क्या उनका शरीर हाड़-मांस का नहीं था? शरीर तो उनका भी हाड़-मांस का ही था, पर मन सुदृढ़ था। था वह भी मनोवर्गणा से ही निर्मित, किंतु इच्छा, तृष्णा, स्थितियां नहीं थी, अतः निश्चल था। उसमें हलचल नहीं थी। कोई सोचे कि मैंने संथारा कर लिया, अब तो देवलोक में जाना फाइनल है, अब मन-वचन किधर भी जाए क्या फर्क पड़ता है। इसी प्रकार कोई सोचे कि मैं साधु बन गया तो अब जो मन में आए करो। जो मौज-मस्ती करनी है करो। साधु बन गया तो सर्टिफिकेट मिल जाएगा क्या? साधु बनने से रिजर्वेशन मिल जाएगा क्या? ऐसे कितने साधुओं को पहचानते हो, जिन्होंने साधु जीवन स्वीकार किया हो और अभी नरक-निगोद में भटक रहे हैं? ऐसे कितने साधुओं से परिचित हो? मालूम है क्या ऐसे साधुओं के बारे में? अनंत-अनंत जीव ऐसे साधु-जीवन को स्वीकार किए हुए कहां पड़े हुए हैं? ऐसे अनंत-अनंत जीव नरक-निगोद में पड़े हुए हैं। अनंत-अनंत जीव पृथ्वीकाय में या अन्य किसी संसार में भ्रमण कर रहे हैं।

सोचो! बहुत गहराई से विचार करो। सोचने के लिए ये बहुत बड़ा बिंदु है साधु-जीवन की पोशाक के बारे में। हम बहुत बार सुने हैं कि हमने पिछले जन्मों में जितनी पोशाकें, जितने पातरे इकट्ठे किए होंगे, उनका एक ढेर लगा लें तो कितने हो जाएंगे? (प्रतिध्वनि– लाखों ढेर लग जाएंगे) हां, यह तो हमने बहुत सुना है। पर हमने सोचा कितना है? मेरे खयाल से सामायिक में ओढ़ने वाली श्रावकों की एक चद्दर सामान्य रूप से 10-20 साल चल जाती होगी। गांधी जी, आपने जो चद्दर ओढ़ी हुई है, कितने साल से है? (प्रत्युत्तर– 4 साल से) 4 साल से है और कितने साल चल जाएगी? इसका पता नहीं है। साधु-जीवन की चद्दर 4 साल चलती नहीं है क्योंकि साधु को लगभग 24 घंटे के लिए पहननी होती है। बीच में थोड़े समय के लिए खोल दे, अलग बात है किंतु लगभग पूरे समय ओढ़नी होती है। उसकी चद्दर उतनी नहीं चलेगी। आपको एक घंटे के लिए पहननी होती है। ऐसी चद्दरें साधुओं की इकट्ठी कर लें तो मेरु पर्वत बन जाए। एक नहीं

कई मेरु पर्वत बन जाए और श्रावकों की चद्दरें कितनी इकट्ठी हो जाएंगी? कहां गिनती लगाओगे? कौन गिनती लगाएगा? कोई नहीं लगाएगा। क्या कारण है?

अवर जेहने आदर अति दीये

हमने अभी तक कितनों को आदर दिया है? मेरा स्वाभिमान रहना चाहिए। क्या है मेरा स्वाभिमान? है क्या? मेरी पैठ रहनी चाहिए। जिस समय हमें आत्मा के अस्तित्व का गहरा बोध हो जाएगा, ये सब चीजें हमारे दिमाग से हट जाएंगी। ये चीजें जब तक दिमाग में घर किये रहेंगी, तब तक आत्मा के अस्तित्व का बोध नहीं हो पाएगा। यदि हुआ भी और हम ऐसी मानसिकताओं में चलते रहेंगे तो बहुत संभव है कि हमारे उस अस्तित्व-बोध पर आवरण आ जाए और आने वाले जन्मों में हम आत्मा के अस्तित्व के बोध को प्राप्त ही न कर सकें। दुर्लभ बोधि बन जाएं अर्थात् बोध मिलना दुष्कर हो जाए। क्यों दुष्कर हो जाए?

ये समस्या हमारी है। अच्छा मौका मिला था यहां पर। हमने उसका जब लाभ उठाया नहीं तो आगे मौका मिलने से फायदा क्या? क्या फायदा आगे मौका मिलने से? एक बार प्रधानमंत्री बना दे फिर भी मौके का लाभ नहीं उठावे तो अगली बार कौन तैयार होगा बनाने को? एक बार साधु बन गए फिर भी हमने आत्मा को साधने का प्रयत्न नहीं किया और तेरे-मेरे की चर्चाओं में ही समय व्यतीत किया, पाप श्रमण के रूप में जीवन व्यतीत किया तो बताइए कि आने वाले जन्मों में क्या आशा करें कि हमें जल्दी से बोध मिल जाएगा? जैसे कि मैं बोल ही गया कि नरक और निगोद में बहुत सारे ऐसे जीव हैं जो कभी साधु बने हुए थे। क्यों चले गए नरक-निगोद में? क्यों चले गये वहां? इसलिए चले गये क्योंकि हमने हमारे अस्तित्व के बोध को ढक दिया। उस पर आवरण डाल दिया।

आग जलती है तो कुछ पकाया जा सकता है। आग जलेगी तो रसोई, खाना पकायेगी। उस पर यदि हमने आवरण कर दिया, कोई फायर प्रूफ साधन रख दिया फिर आग के ऊपर कितना ही खाना रख दो, वह खाना पकेगा क्या? (प्रतिध्वनि—नहीं) वह खाना नहीं पकेगा। जैसे वह आवरण हमने डाल दिया वैसे ही मिथ्यात्व का आवरण है। उस आवरण के कारण हमें आत्मा के अस्तित्व का बोध हो नहीं पाता है। इसलिए हम 'सूत्रकृतांग' सूत्र

की बात करें। उसमें बहुत स्पष्ट कहा है कि 'संबुज्झह' हे आत्मन्! बोध को प्राप्त करो। बोध को प्राप्त करना बहुत महत्त्वपूर्ण है। 'सद्धा परम दुल्लहा।' सुनना, मनुष्य जन्म को पाना तो कई बार हुआ होगा, किंतु सुने हुए पर विश्वास होना, श्रद्धा होना बड़ा मुश्किल है। पर जब वह हो जाता है तो सारा टेंशन दूर हो जाता है, सारे तनाव दूर हो जाते हैं।

उस राजा को विश्वास हो गया। राजा ने जाकर जंगल वाले महल को देख भी लिया। अब राजा निश्चिंत है। अब कोई तनाव नहीं, कोई भय नहीं, कोई आशंका नहीं। उसके सारे तनाव दूर हो गए। वैसे ही सम्यक्त्व भाव जब पैदा होता है, 'सद्धा परम दुल्लहा' श्रद्धा जब पैदा होती है कि 'मैं हूं, मेरा अस्तित्व है, तो मेरे अस्तित्व को कौन समाप्त कर सकता है?' एक बात आप पक्की ध्यान में ले लेना। एक बात बहुत अच्छी तरह से ध्यान में ले लेना कि जिन पदार्थों का अस्तित्व है, वे कभी नास्तित्व में परिणत नहीं हो सकते। जो अस्तित्व में हैं, वे कभी 'ना' में परिवर्तित नहीं होंगे, कभी नास्तित्व में परिवर्तित नहीं होंगे। उनका अभाव कभी नहीं होगा। वे कभी समाप्त नहीं होंगे। चाहे जड़ हो, चाहे चैतन्य। ये पाटा या कोई भी चीज टूट सकती है। ये टूट सकता है, नष्ट हो सकता है किंतु पुद्गल के रूप में रहेंगे या नहीं रहेंगे? (प्रतिध्वनि– रहेंगे) वे पुद्गल के रूप में रहेंगे। इनकी पर्याय बदल सकती है। यह आग में डालने पर जल सकता है, राख हो जाएगा किंतु पुद्गल रूप में इनका अस्तित्व सदा-सदा बना रहेगा।

वैसे ही हम चाहे नरक में चले जाएं, निगोद में चले जाएं, एकेंद्रिय में चले जाएं या बेइन्द्रिय में चले जाएं लेकिन हमारा अस्तित्व सदा रहेगा। चाहे हमें बोध हो या नहीं हो, हमारा अस्तित्व कभी भी नष्ट होने वाला नहीं है। आत्मा कभी भी अनात्मा नहीं बनेगी। अनात्म भावों में जरूर जा सकती है। जैसे ही हम कषायों में जाते हैं, कषायात्मा हो जाते हैं। आठ प्रकार की आत्माएं बताई गई हैं। द्रव्य आत्मा, योग आत्मा और बोलो? शालिभद्र जी? (सभा में बैठे कुछ लोग बोलने लग जाते हैं।) अरे! इनको बोलने दो। द्रव्य आत्मा, योग आत्मा और? क्या बोल रहे हो? मेरे कान में सुनाई नहीं पड़ रहा है। आप बोल रहे हो कषाय आत्मा। कषाय आत्मा और उसके बाद? (सभा में बैठे लोग सिर से ना का इशारा करते हैं। ना में सिर हिलाते हैं।) अरे!

ऐसा करने से कैसे चलेगा,
ऐसा करने से कैसे चलेगा...।

फिर चातुर्मास का क्या लाभ उठाया? क्लासें कितनी चलीं? क्लासें ये चलीं, वो चलीं किंतु हम क्या कर पाए? हम कुछ नहीं कर पाए। यही होता है। होता यही है कि हम चातुर्मास तो करा लेते हैं, साधुओं को बुला लेते हैं, साधुओं की संगति कर लेते हैं किंतु हम फायर प्रूफ की तरह हैं, रेन कोट पहने हुए हैं। हम अपने भीतर कुछ भी बदलाव लाने के लिए तैयार नहीं हैं। रेन कोट पहनकर यहां बैठेंगे ताकि आपके वचन हमारे भीतर वैराग पैदा करने वाले नहीं बनें। हमारे भीतर यह नहीं होगा कि 'खड़ा हो जाऊं और बोलूं कि मुझे दीक्षा लेनी है।' ये परिवर्तन नहीं आएगा। होगा क्या अनिल जी? आप कहोगे कि ज्यादा मत बोलो बावजी। जोधपुर वाले कहने लग जाएंगे कि एक श्रावक को तो ले लिया। गुलाब जी को तो ले लिया और अब अनिल जी को भी ले रहे हो क्या?

ध्यान में लें बात कि कषाय आत्मा, कषाय आत्मा क्यों हो गई? इसलिए हो गई क्योंकि कषायों में वह जी रही है। कषायों में संतप्त हो रही है तो द्रव्य आत्मा का जो स्वरूप है, वह ढक गया है। ये पाटे का रंग कौनसा है? इस पाटे का रंग कैसा है? (जिस पाटे पर आचार्य भगवंत विराजमान हैं, उसके बारे में पूछते हैं।) (प्रत्युत्तर– सफेद) सफेद है। क्या पहले से सफेद था? जिस समय बनाया गया, उस समय सफेद नहीं था। जब इस पर सफेद रंग नहीं किया गया था, सफेद रंग नहीं था तब इसका रंग क्या था? इसका रंग तब अलग था। किसी ने देखा होगा। किसी को पता होगा या नहीं होगा किंतु इतना जरूर है कि पहले यह सफेद रंग में नहीं था। इस पर यह सफेद रंग लगा दिया। सफेद रंग लगाने के बाद इसका मूल रंग लुप्त हो गया या नहीं हुआ? (प्रतिध्वनि– लुप्त हुआ)

वैसे ही जब हमारी आत्मा पर कषायों का प्रभाव आ जाता है तो हमारी आत्मा का मूल स्वरूप ढक जाता है। फिर वहां क्या दिखने लग जाता है? फिर वो कषाय वहां दिखेंगे। कषायों का उद्वेग होगा। कषायों की प्रधानता होगी तो उस आत्मा का रूप कषाय आत्मा हो जाएगा। वह द्रव्य आत्मा गौण हो जाएगी। वह द्रव्य नजर नहीं आएगा। क्या नजर आएगा? कषाय वहां नजर आएंगे। उस आत्मा के कषायमय बन जाने पर भी आत्मा जड़

नहीं बन गई। आत्मा पुद्गल नहीं बन गई। आत्मा, आत्मा ही रहेगी। चेतन, चेतन ही रहेगा, वह कभी जड़ रूप में बदल नहीं सकता है। यह फाइनल है और जड़, कभी चेतन नहीं बन सकता। जो जड़ है, वह कभी चेतन नहीं बन सकता। हम कह सकते हैं कि म.सा. ये शरीर भी तो जड़ ही है। इसमें चेतना है या नहीं है? यह चैतन्य आत्मा के संयोग से चेतन बना हुआ है। इस में रही चेतना को वहां से हटाओ फिर देखो चेतना रहती है या चेतना-रहित हो जाता है? यह स्वयं चेतना रूप नहीं है।

घर में बिजली की, लाइट की फिटिंग करा ली पर कनेक्शन नहीं लिया और स्विच ऑन करो, स्विच दबाओ तो लाइट आ जाएगी क्या? उनमें पावर नहीं है। उनमें प्रकाश नहीं है। उनमें विद्युत नहीं है। क्योंकि कनेक्शन नहीं है। कनेक्शन लिया होगा तो पावर आएगा और जिस समय बिजली आई हुई नहीं है उस समय भी कितना ही प्रयत्न कर लो, उनमें विद्युत का प्रवाह नहीं होगा क्योंकि विद्युत है ही नहीं। वैसे ही शरीर चेतना के संयोग से अभी चैतन्य लग रहा है किंतु जैसे ही चेतना का वियोग होगा ये क्या हो जाएगा? यह चैतन्य हट जाएगा। शरीर जड़ का जड़ है। यह अपने आप में कभी भी चैतन्य रूप में बदल नहीं सकेगा, चाहे कोई कितना भी प्रयत्न कर ले।

वैज्ञानिकों ने रोबोट बना दिए। वे उसका कई कार्यों में उपयोग कर रहे हैं। रोबोट हर कोई कार्य कर रहे हैं लेकिन क्या वे आदमी बन रहे हैं? क्या उनमें जीव आ गया? काम तो आपका कर लेंगे, आपसे ज्यादा भी काम कर लेंगे, किंतु कभी माथा डिस्टर्ब हो जाए तो? माथा डिस्टर्ब हो जाए तो? थोड़ा सा कोई तार आगे-पीछे हो जाए तो शॉर्ट सर्किट हो जाएगा। उस समय क्या होगा? धमाका होता है या नहीं होता है? वैज्ञानिकों ने चाहे कितने ही प्रयत्न कर लिए, चाहे कितने भी प्रयास कर लिए, किंतु वे जीव और चैतन्य रूप में नहीं हो सकते। वे काम कर रहे हैं किंतु उनको मालूम नहीं है कि ये काम है। उनको मालूम नहीं है। उनकी मेमोरी नहीं है कि ये जो हम कर रहे हैं, यह काम है और हम में यह मेमोरी है, यह संवेदन है। इसलिए आत्मा के अस्तित्व पर गहरी आस्था बनाएं। गहरा निरीक्षण करें। आत्मा की अनुभूति करें। अपने भीतर उठने वाले विचारों को देखें और अनुभव करें कि मैं आत्मा हूं। आत्मा का बोध जब हो जाएगा तो हम कषायों की तरफ से विमुख हो जाएंगे।

जब तक हमने सेवक माना, जब तक मेरा काम कर रहा है, तब तक हम उससे जुड़े रहे। जब यह मालूम हो गया कि ये सेवक नहीं हैं, ये तो हमारा ही और नुकसान कर रहे हैं तब उनको हम सेवक मानकर कैसे सम्मान करें? कैसे उनको अपने पास रखें?

एक व्यक्ति बड़ी कंपनी में डायरेक्टर है। उसकी अच्छी-खासी तनख्वाह है। कंपनी मालिक ने देखा कि डायरेक्टर कंपनी का बहुत सारा धन, बहुत सारा मुनाफा बाईपास कर रहा है। उसको ऐसा मालूम हो गया, पक्की तहकीकात हो गई। पक्की खोज-बीन हो गई। अब वह मालिक क्या करेगा? अब क्या करेगा? बोलो? (प्रतिध्वनि– निकाल देगा नौकरी से) कुछ लोग बोल रहे हैं कि मालिक को हटा देगा? मालिक को कैसे हटाएगा? मालिक डायरेक्टर को हटाएगा या डायरेक्टर मालिक को हटाएगा? (प्रतिध्वनि– मालिक डायरेक्टर को हटाएगा) कभी-कभी इतना आसान भी नहीं होता है डायरेक्टर को हटाना। क्योंकि सारी चीजें उसके हाथ में हैं। कार्य करने वाले कर्मचारी वगैरह सब उसके हाथ में है। ऐसी स्थिति में उसको हटा दो तो विद्रोह हो जाएगा। लोग आंदोलन करने लगेंगे। वे यह नहीं देखेंगे कि इसने क्या गलत किया? वे तो यह कहेंगे कि इस व्यक्ति को हटाकर गड़बड़ किया जा रहा है। समझदार मालिक होगा तो वह पहले दूसरे कर्मचारियों को अपनी तरफ बनाने की कोशिश करेगा और उसको जब पक्का विश्वास हो जाएगा कि डायरेक्टर की तरफ ज्यादा कर्मचारी नहीं हैं, ज्यादा कर्मचारी मेरे पर विश्वास रख रहे हैं तो फिर डायरेक्टर को हटाने में उसको देर नहीं लगेगी। जब तक सब डायरेक्टर के आधार पर चल रहे हैं उस समय मालिक यदि उसको हटा दे तो उसके सामने कुछ कठिनाइयां आ सकती हैं।

वैसे ही हम कषायों को हटाने की तैयारी में तो हैं किंतु हमें देखना पड़ेगा कि मेरी वृत्तियां कहां-कहां पर दबी हुई हैं? वे यदि दबी हुई हैं और इधर कषायों को हटाएंगे तो वे उधर से आक्रमण करेंगी। पाकिस्तान को भारत ने यदि करगिल की तरफ घेर लिया और वह कच्छ में आकर खड़ा हो गया तो वहां पर भी सावधानी रखनी पड़ेगी। वह यदि राजस्थान में आकर घेर लेता है, यहां बाड़मेर की तरफ के इलाके में मुनाबाव के पास आ जाता है फिर क्या होगा? यदि ऐसी कोई स्थिति बन जाती है तो

भारत क्या करेगा? सारी सीमा को वह पहले सील करेगा। यदि वह पहले सील नहीं करेगा तो कहीं से भी धक्का खा सकता है। खा सकता है या नहीं खा सकता है? (प्रतिध्वनि– खा सकता है) भारत ही नहीं कोई भी राष्ट्र होगा तो वह क्या करेगा? जहां उसकी अपनी सीमा है, वह पूरी सीमा को सील करने का प्रयत्न करेगा। सारी सीमा को वह सुरक्षित करने का प्रयत्न करेगा। वैसे ही हम यदि अपनी पूरी सीमा को सुरक्षित करने में समर्थ हो जाते हैं तो फिर उन कषायों को एक धक्का देने में कोई देर नहीं लगेगी। 'एक धक्का और दो और? और?' (प्रतिध्वनि– संसार को छोड़ दो।)

आवाज नहीं आ रही है। अभी तो हमने सब जगह अपनी सुरक्षा का जो कार्य होना चाहिए, वह किया नहीं है। इसलिए अभी कैसे बोल सकते हैं कि एक धक्का और दो। मल्लिनाथ भगवान ने वही प्रयत्न किया। उन्होंने जान लिया कि ये कषाय अनादिकाल से मेरे साथ रहे हैं। मैं इनसे इतना मिला-जुला रहा कि मेरी कोई भी चीज इनसे छिपी हुई नहीं थी। मैं एकदम खुली पुस्तक के हिसाब से इनके साथ में चला, किंतु मैं उनसे जितना खुला, उतना ही इन्होंने मेरा बिगाड़ किया। इन्होंने मेरा बिगाड़ किया और कई जन्मों में जानकारी होने के बाद भी मुझे भटकाया है। हमारी आत्मा के अस्तित्व का हमको ज्ञान है किंतु अन्य सारी स्थितियों का हमें ज्ञान नहीं हुआ तो हम फिर भटक जाएंगे।

इसलिए ज्ञानीजन कहते हैं कि ये मनुष्य-जन्म बड़ा महत्त्वपूर्ण जन्म है। ये बड़ा महत्त्वपूर्ण अवसर है। इस अवसर को यदि हमने अपने आत्महितों में संपादित कर लिया और कषायों के प्रभाव से आत्मा को मुक्त कराने का प्रयत्न कर लिया तो हमारी जीत निश्चित है। हम जीतेंगे। हम अवश्यमेव जीतेंगे। हम कषाय आत्मा को हटाकर अपने मूल स्वरूप को प्रकट करने की कोशिश करेंगे। वो यदि हमने प्राप्त कर लिया, वो हमने यदि प्रकट कर दिया तो वह शक्ति जैसे ही विकसित होगी, कषायों की शक्ति अपने-आप ही टूट जाएगी। मल्लिनाथ भगवान ने वैसा ही किया और वैसा करने पर ही, 'ए अब शोभा सारी' के रूप में कहे गये। भले ही दुनिया उनको कितना ही महत्त्व दे! दुनिया के लोग भले ही क्रोध, माया, मान, लोभ को कितना ही महत्त्व दे, किंतु जिसने जान लिया कि ये कषाय काम के नहीं हैं, वे कैसे महत्त्व दे सकते हैं? जो महत्त्व नहीं देंगे, वे ही

उनको हटाने में समर्थ होते हैं। वे अपने सौन्दर्य को विकसित करने में समर्थ होते हैं।

मल्लिनाथ भगवान ने जैसे अपने सौन्दर्य को विकसित किया, वैसे ही हम भी अपने आत्म-सौन्दर्य को विकसित करने की दिशा में गतिशील बनेंगे, उस ओर आगे बढ़ेंगे तो हम अपने-आप को धन्य बना पाएंगे। इतना ही कहते हुए विराम।

19 अक्टूबर, 2019

13

ज्ञान स्वरूप को करें उजागर

सेवक केम अवगणिये हो मल्लिजिन!
ए अब शोभा सारी,
अवर जेहने आदर अति दीये,
तेहने मूल निवारी हो मल्लि.॥1॥
ज्ञान स्वरूप अनादि तमारुं
ते लीधुं तमे ताणी,
जुओ अज्ञानदशा रीसावी
जातां काण न आणी हो मल्लि.॥2॥

ज्ञान स्वरूप अनादि तमारो। हमारी आत्मा का ज्ञानमय स्वभाव-स्वरूप अनादि का है। ऐसा एक भी क्षण व्यतीत नहीं हुआ, जिस क्षण आत्मा में ज्ञान की उपस्थिति नहीं हो। हर वक्त, हर क्षण, हर पल आत्मा के साथ ज्ञान की युति बनी हुई है। जहां आत्मा है, वहां ज्ञान है। ये बात अलग है कि उस ज्ञान को हम कितना जान पाए और कितना नहीं जान पाए। हमारे भीतर बहुत सारी शक्तियां रही हुई हैं। हमने उनको कितना जाना और कितना नहीं जाना, यह हमारे पर निर्भर है।

एक बच्चा जब कभी स्कूल भेजा जाता है, उस समय वह क्या सीखा हुआ होता है? और दस साल, पंद्रह साल के बाद जब स्कूल से निकलता है, वापस आता है तो उस समय वह क्या सीखा हुआ होता है? कहां से सीखा? हम कहेंगे कि ऊपर से सीखा। यदि ऊपर से सीखा हुआ होता तो सारे विद्यार्थी एक समान होते क्योंकि सबको एक समान अध्ययन करवाया जाता है। ऐसा नहीं कि एक विद्यार्थी को अध्ययन ज्यादा करवाया और एक विद्यार्थी को कम। सारे विद्यार्थियों को समान रूप से अध्ययन करवाया गया। किसी ने उसको कुछ कमतर लिया, किसी ने उसको विशेष लिया और किसी ने और

विशेष लिया। कौन कितना ले पाता है, वह उसकी क्षमता है, उसका सामर्थ्य है, उसकी शक्ति है। जिसमें जैसी शक्ति है, वह उसको उतना ही ग्रहण कर पाएगा।

पानी बरस रहा है। हमारे बरतन पड़े हैं। कोई बरतन चौड़े मुंह का है, बड़ा है। कोई छोटे मुंह का है। पानी किसमें ज्यादा आएगा? जो चौड़े मुंह का है, बड़ा है, उसमें पानी ज्यादा आएगा क्योंकि उसमें ग्रहण करने की क्षमता ज्यादा है। हमारे भीतर ग्रहण करने की क्षमता कम नहीं है। हमारी समझ में भी कमी नहीं है किंतु जब उस शक्ति का उपयोग करने का प्रसंग आता है, तब हम उसका उतना प्रयोग, उतना उपयोग नहीं कर पाते हैं, जिससे हमारी शक्तियां सुप्त रहती हैं, जाग्रत् हो नहीं पाती।

मल्लिनाथ भगवान की स्तुति करते हुए कहा गया है कि भगवंत! तुमने बड़ी सावधानी बरती कि जो तुम्हारा अनादिकालीन ज्ञान का स्वरूप रहा है, उसे खींच लिया। 'ज्ञान स्वरूप अनादि तमारो, ते लीधूं तमे ताणी', वह तुमने खींच लिया। तुमने उसे निकाल लिया। दूध है। अरे! कटारिया जी कहां चला गया दूध? दूध में से क्रीम निकाल ली, बादाम में से तेल निकाल लिया, फ्रूट में से ज्यूस निकाल लिया, उसका एसेन्स निकाल लिया, फिर क्या स्थिति रहती है? क्या दशा रहती है? उसमें पोषक तत्त्व कितना रह गया? अब पोषक तत्त्व उसमें नहीं है। यही बात कवि ने कही है कि भगवान आपने ज्ञान को खींच लिया तो अब उस अज्ञान दशा को देखते हैं तो बड़ी रूसानी है। वह रूसकर रह गई है कि मेरे से सारी शक्ति छीन ली, मेरे हाथ में कुछ नहीं रहा।

एक सम्राट् के दो रानियां हों। एक को मालामाल किया जाए और दूसरी की उपेक्षा की जाए तो दूसरी के मन में कितनी पीड़ा होगी? वैसे ही भगवान, वह अज्ञान दशा बड़ी पीड़ित हो रही है, बड़ी दुःखी हो रही है, किंतु उसका वश नहीं चल रहा है। कैसे निकाल लिया ज्ञान दशा को? जानने वाले आज भी प्रयोग कर ही लेते हैं कि बादाम में से उसका तेल कैसे खींचा जाता है? किसी व्यापारी के पास अटके पैसे निकालना जानते हैं या नहीं जानते हैं? अटके हुए पैसों को निकालने का तरीका आता है या नहीं आता है? (प्रतिध्वनि– आता है) आप कहोगे कि आता है। बहुत प्रयत्न करते हैं तब आता है, फिर भी थोड़े-बहुत फंसे हुए रह जाते हैं। जब आपका दिल भर जाता है ना, तब आप छोड़ देते हो। जब तक आपका मन नहीं भरता तब

तक आप खींचने की कोशिश में लगे रहते हो। जब लगता है कि हो गया अपना तो, इतना बहुत है, जितना लगाया हुआ था उतना हमें मिल गया, तब कहते हो कि जाने दो। नहीं कहते हो? (प्रतिध्वनि– कहते हैं)

हमारी जमीन दबी हुई हो, किसी ने हमारी जमीन पर कब्जा कर लिया हो, उसको कैसे छुड़वाना, कैसे निकलवाना उसके सारे दांव-पेच, गुर जान रहे हो, किंतु हमारी आत्मा की एक दशा है मिथ्यात्व दशा और एक है सम्यक् दशा। एक है ज्ञान दशा, एक है अज्ञान दशा। अज्ञान दशा ने अब तक हमारी सारी जागीरी घेर ली थी या घेर ली होगी तो भी पता नहीं। मल्लिनाथ भगवान ने प्रयत्न किया और अज्ञान दशा से सारी जागीरी को खींच लिया। केवलज्ञान, केवलदर्शन मल्लिनाथ भगवान में कब से थे? नहीं मालूम है क्या कब से थे? कौन-सा समय था कि उनमें केवलज्ञान नहीं था? यदि आपसे पूछ लें कि आपका केवलज्ञान कहां है? कहां है हमारा केवलज्ञान? आप कहोगे कि ठिकाने रखा हुआ है। सुरक्षित पड़ा है, हवा ही नहीं लगने देंगे।

अगर आपके पास में कोहनूर हीरा आ जाए तो मन की कली-कली खिल जायेगी। व्यक्ति में हर्ष की लहरें चलने लगेंगी, किंतु क्या हीरा निकालकर बताओगे कि ये देखो, मेरे पास हीरा है। (प्रतिध्वनि– नहीं) कोई नहीं बताएगा उस हीरे को, कोहनूर को निकालकर कि देखो ये मेरा हीरा है। वैसे ही केवलज्ञान हमारे भीतर है किंतु उसे हम प्रकट नहीं कर पा रहे हैं। हम व्यक्त नहीं करना चाहते हैं, ऐसी बात नहीं है किंतु हम उसे व्यक्त नहीं कर पा रहे हैं। है वो हमारे भीतर। जब भी हमारा केवलज्ञान प्रकट होगा, हमारे भीतर से ही प्रकट होगा। वह कहीं बाहर से नहीं आएगा। हमारे भीतर ही है, किंतु अभी आवरण में पड़ा हुआ है। अभी बीच में बाधाएं पड़ी हुई हैं। जब तक उन बाधाओं को नहीं हटाएंगे तब तक हमारा केवलज्ञान, हमारी ज्ञान दशा, जो हमारी आत्मा का स्वरूप दर्शा रही है उसको हम प्रकट करने में समर्थ नहीं बनेंगे। 'ज्ञान स्वरूप अनादि तमारो' जो ज्ञान स्वभाव अनादि से तुम्हारा है, अब तक तुम खींच नहीं पाए थे, किंतु जैसे ही पता चला, मालूम पड़ा तुमने उसको खींच लिया।

हमने किसी व्यापारी के साथ बहुत लंबे समय तक व्यापार किया होगा। करोड़ों, अरबों तक भी वह व्यापार चल गया होगा किंतु जब लगेगा कि वह पार्टी दब रही है तो हमारी तरफ से और कितना तौला जाएगा उसको? वैसे तो नहीं तौलेंगे, किंतु निकालने के लिए शायद तौलना पड़ जाए। पहले

मसाले घर में पीसा करते थे घट्टी में। मिर्ची पीसा करते थे, धनिया पीसा करते थे, हल्दी पीसा करते थे। आज पीसते होंगे कोई-कोई, मुझे नहीं मालूम, किंतु आज हर कोई इतनी मेहनत करना नहीं चाहता है। लोग सोचते हैं कि मिल रहा है रेडिमेड। धनिया खा तो रहे हैं लेकिन उसमें गधे की लीद तो साथ में मिली हुई नहीं है? क्या पता क्या है? क्या मिला हुआ है उसके अंदर? घर पर पीसा हुआ धनिया है और मोल का लाया हुआ है, दोनों को खाने पर फर्क लगता है या नहीं लगता है? आप कहोगे कि क्या पता? कभी हमने किया हो अंतर, कभी अगर खाकर दोनों में अंतर देखा हो तो मालूम पड़े। कभी घर पर पीसकर खाया नहीं तो क्या मालूम पड़े। रेडिमेड खाते-खाते वैसा ही स्वाद बन गया मुंह का।

पहले लाल मिर्च पीसकर उसके ऊपर धनिया पीस लेते थे और धनिया के ऊपर नमक पीस लेते थे। क्या कहते थे पहले? कहते थे कि घट्टी को लूखा करना है? क्या करना है? बोलो, क्या करना है? घट्टी को लूखा करना है। उसमें मिर्च नहीं रहने देंगे, उसमें धनिया नहीं रहने देंगे और उसके बाद जब वह नमक पीसा जाएगा तो वह ऐसे ही नहीं पीसा जाएगा। मिर्च और धनिया की कीमत ज्यादा है या नमक की कीमत ज्यादा है? नमक इसलिए पीसा जाता है कि कहीं घट्टी में मिर्ची लगी हुई नहीं रह जाए, घट्टी में धनिया लगा हुआ नहीं रह जाए। वह यदि नमक के साथ में आ जाए तो उसको भी निकाल लेंगे। उसको भी छोड़ेंगे नहीं। ये हमारी समझदारी है। ऐसा करने का रीजन है या नहीं है, मैं नहीं कह सकता हूं, किंतु पहले से परंपरा रही है। ऐसा किसी को करते देखा तो हमने भी कर लिया होगा, किंतु हकीकत में मिर्च, धनिया और मसालों की कीमत ज्यादा होती है, इसलिए घट्टी में छोड़ेंगे नहीं। उनको पीस लिया तो नमक को बाद में उस घट्टी में पीस लेंगे ताकि नमक के साथ वे आ जाएं और बाद में नमक को काम में लेंगे ही। ऐसे वे मसाले नमक में आ जाएंगे। ये समझदारी है।

पहले लोग ऐसा करते थे। आज लोग खाते कुछ भी हों मैं यह कहना चाहता हूं कि जब मिर्च और धनिया भी व्यर्थ में नहीं जाने देना चाहते हैं, उसको भी नमक के साथ पीस लेते हैं फिर हमारा ज्ञान, जो अनादिकाल का स्वभाव रहा हुआ है, वह कैसे पड़ा रह जाए? हमने उसको निकालने के लिए क्या प्रयत्न किया? हमने उसको बाहर निकालने के लिए क्या उपाय किया? मनुष्य-जन्म मिला है, इसमें भी यदि उपाय नहीं हो सका, यदि इसमें

यों ही रह गए तो फिर किस जिंदगी में कब सफल हो पाएंगे? मेरे खयाल में बाद में सफल होने का कोई रास्ता नहीं है। यदि हम अभी मनुष्य-जन्म से निकल गए, मनुष्य-जन्म से हट गए और आगे के दूसरे जन्मों में चले गए, फिर कोई गुंजाइश नहीं है, कोई संभावना नहीं है कि हम उस ज्ञान को बाहर निकाल सकें। अभी संभावना है। आज हमारे हाथ में है, आज संभावना है।

एक व्यक्ति सामर्थ्यवान था। वह करोड़ों का व्यापार कर सकता था। मैं एक पुस्तक पढ़ रहा था। उसमें एक कहानी थी कि एक चित्रकार था, आर्टिस्ट था। हां, वह एक सफल आर्टिस्ट था। बहुत बढ़िया कलाकारी करने वाला था। उसने बहुत सारी कलाएं कीं, बहुत सारी तसवीरें बनाईं और एक बीस डॉलर की तसवीर बनाई यानी नकली नोट बनाया। वह कहीं चल भी गया। वह उस नोट को लेकर एक दुकानदार के पास गया। दुकानदार के हाथ पर शलजम लग गई थी, हाथ गीले रह गए होंगे। गीले हाथों से दुकानदार ने नोट पकड़ा तो उसका रंग छूटने लगा। उसने सोचा कि यह क्या बात हो गई? फिर उसने सोचा कि आदमी इतना भला है। ये नोट नकली लेकर आया है, ऐसा नहीं कह सकते हैं। वह ऐसी कोई गड़बड़ नहीं करेगा। उसने उस नोट को ले लिया फिर भी देखा कि रंग छूट रहा है। उसने पुलिस में खबर दी और सारी बात बताई। पुलिस ने उसके वहां पर छापा मारा, जहां नकली डॉलर बनाने का बहुत सारा सामान पाया गया।

जो भी आगे होना था, वे सब क्रियाएं हुईं। उसकी चीजें भी नीलाम की गईं। तसवीरें भी नीलाम हुईं। एक-एक तसवीर पांच-पांच हजार में नीलाम हुई। लोगों ने विचार किया कि एक-एक तसवीर पांच-पांच हजार में नीलाम हो रही है। पर इसने ये बीस डॉलर का नोट बनाने में इतना समय लगा दिया है और जो नोट बनाया है, उसमें अपेक्षाकृत ज्यादा समय लगता था, उसमें ज्यादा मेहनत लगती थी, किंतु आदमी की सूझ, आदमी की बूझ, आदमी की समझ कैसी है? दिमाग में डॉलर बनाना है तो बना दिया। उसने बीस डॉलर की तसवीर तो बना दी, पर ज्यादा पैसा दूसरी तसवीर से मिला या डॉलर से ज्यादा पैसा मिला? पैसा किसमें ज्यादा मिला? (प्रतिध्वनि– दूसरी तसवीरें बनाने में) दूसरी तसवीरों को बेचने पर ज्यादा पैसा मिला। वह चाहता तो बहुत सारी तसवीरें बनाकर बहुत अमीर व्यक्ति भी हो सकता था। बहुत लोगों की तरह अच्छी जिंदगी जी सकता था। लोगों में सम्मानित हो सकता था, किंतु उसने डॉलर के माध्यम से कितने पैसे कमाये?

भारत में भी नकली पैसों की कमी नहीं है। आए दिन मालूम पड़ता है कि यहां पर नकली नोट पकड़े गए, वहां पर नकली नोट पकड़े गए। नकली और असली में मालूम क्या पड़ता है? यह बताइए कि नकली में और असली में मालूम क्या पड़ता है? नकली में और असली में मालूम पड़ सकता है। नहीं पड़ सकता जैसी कोई बात नहीं है। मालूम पड़ जाता होगा। मशीनों से पता चल जाता है किंतु एक सामान्य आदमी क्या जाने कि कौन सा नोट नकली है और कौन सा नोट असली है। उसके पास मशीन कहां से आएगी? वहां पर वह नोट लेकर गया किंतु उस दुकानदार के हाथ में शलजम लगा हुआ था, उसका हाथ गीला था। उसके कारण से उसका रंग छूट रहा था तो उसको मालूम पड़ गया क्योंकि असली डॉलर का रंग कभी छूटता नहीं है। रंग छूटता नहीं है तो रंग छूट कैसे रहा है? इसका रंग क्यों छूट रहा है?

कोई व्यक्ति कितना भी कलाकारी कर ले, कितनी भी चोरी कर ले, कितना भी कुछ कर ले, किंतु कहीं-न-कहीं चूक हो जाती है। यह तो निश्चित है कि चोरी करने वाला, बेईमानी करने वाला, कहीं-न-कहीं चूकेगा ही। नहीं चूके ऐसी कोई बात नहीं है। नहीं चूके ऐसा कोई चांस नहीं है, ऐसी कोई गुंजाइश नहीं है। बहुत कम चांस होंगे, बहुत कम गुंजाइश होगी कि वह चूके नहीं। जब लोगों को पता चला कि ऐसा सब हुआ है तो एक व्यक्ति ने उससे कहा कि मैं आपसे कुछ पूछना चाहूंगा। उसने पूछा कि आपने नकली डॉलर बनाए और उनको चलाया तो सबसे ज्यादा किसकी हानि की? उसने अपनी ओर इशारा करते हुए कहा कि सबसे ज्यादा मैंने अपनी हानि की। सबसे ज्यादा धोखा यदि मैंने किसी को दिया तो वह मैंने अपने आप को दिया। सबसे ज्यादा हानि मैंने अपने-आप की की। मैं चाहता तो अन्य चित्रकारी करके इससे कितना ही गुना अधिक लाभ उठा सकता था, किंतु मेरी नीयत खराब हुई और मैं उसी में लगा रह गया।

अब इशारा आपकी ओर है। आप विचार करो कि बीस रुपये/ डॉलर बना सकने जितनी ही क्षमता है हमारे भीतर या और कुछ भी? क्या हम हमारी उस क्षमता को, उस शक्ति को प्रकट कर पा रहे हैं? नकली बीस रुपये का नोट, नकली डॉलर बनाने जैसी स्थिति से बढ़कर क्या हमारा सामर्थ्य नहीं है? (प्रतिध्वनि– हां है) हमारी शक्ति है या नहीं है? (प्रतिध्वनि– हां है) ज्ञान, दर्शन, चारित्र को प्रकट करने की हमारे में क्षमता है या नहीं है? (प्रतिध्वनि– हां है) केवलज्ञान को व्यक्त करने की क्षमता है

या नहीं है? (प्रतिध्वनि– हां है) श्रुत ज्ञान को प्रकट करने की क्षमता हमारे में है या नहीं है? (प्रतिध्वनि– हां है) हम क्या कर रहे हैं? आप लोग 'है, है, है' तो बोल रहे हो, किंतु उसको बोलने से क्या होगा? हमने अपनी बुद्धि का सही उपयोग कितना किया? हम अपना केवल मिस यूज तो नहीं कर रहे हैं। एक बार शांत-भाव से सोचें कि हमने अपना मिस यूज कितना किया? हम अपना मिस यूज कितना कर रहे हैं? अथाह शक्ति, अमाप शक्ति हमारे भीतर है किंतु उस शक्ति की ओर अपना ध्यान नहीं लगा रहे हैं। इतना कुछ प्राप्तियों के पीछे जिंदगी को बर्बाद कर रहे हैं। इस जिंदगी को बर्बाद करने में लगे हुए हैं।

अरे! मेघराज जी[1], हाथ ही मलते रहोगे क्या? हाथ ही मसलते रहोगे और उनको ही निहारते रहोगे क्या? अनन्त मुनि जी ने हिम्मत कर ली तो वे निकल गए। आए थे नाना गुरु के दर्शन करने के लिए और मालूम पड़ा कि नाना गुरु की डोली उठानी है। उन्होंने सोचा ये मौका कब मिलेगा? वे दीक्षा लेने के लिए तैयार हो गए और दीक्षा ले ली। डोली उठाकर चलते। अन्य संत यदि हटने के लिए कहते कि मैं उठा लेता हूं तो कहते कि मैंने तो इसके लिए ही दीक्षा ली है। डोली उठाने के लिए तो मैंने दीक्षा ली है। मैं इस मौके को नहीं छोड़ूंगा। ये जिंदगी क्या खाली पैसा इकट्ठा करने के लिए है? पैसा इकट्ठा भी कर लोगे तो कितने दिन साथ में रहेंगे? पूछ लेना घर वालों से कि साथ में कितने पैसे भेज देंगे? (प्रतिध्वनि– कुछ भी नहीं भेजेंगे) कुछ भी नहीं भेजेंगे? ये चैन और ये अंगूठी जो पहन रखी है, वे कब तक साथ में रहेंगे? (प्रतिध्वनि– बावजी कुछ भी नहीं रहेगा। सब निकालकर रख लेंगे) कुछ भी नहीं रहेगा। अरे वाह! इतना मालूम है आपको? इतना मालूम है तो फिर नींद में क्यों सो रहे हो? मालूम पड़ जाए कि नीचे गड्ढा है और कब टाइल्स टूट जाए और कब गड्ढे में गिर जाएंगे, तो उस पर बैठोगे क्या? (प्रतिध्वनि– नहीं बैठेंगे)

सूंठियाँ (सूढ्यां) होती है ना? (जूट के भीतर का डंठल) वह किसी गड्ढे पर रख दें और आपको मालूम है कि उसके नीचे गड्ढा है, उस पर चलेंगे तो गड्ढे में गिर जाएंगे तो क्या आप चलोगे उन पर? पता है कि उन पर चलेंगे तो वे टूट जाएंगी और हम गिर जाएंगे तो चलोगे क्या उन पर? जिसको नहीं

1. श्री अनन्तमुनि जी म. सा. के सांसारिक सुपुत्र

मालूम है, वह भले ही उनके ऊपर से निकल जाए, किंतु जिसको मालूम है वह चलेगा क्या? किसी को मालूम हो जाए कि जहां बैठा हूं वहां नीचे गड्ढा है तो उस पर बैठकर ध्यान करेगा क्या? बैठकर ध्यान करेगा क्या कि 'ओऽम्, ओऽम्...' (ओऽम् की लंबी ध्वनि बोलते हैं) वह वहां पर बैठकर ध्यान नहीं करेगा। क्या हमें मालूम है कि हम कहां बैठे हुए हैं और नीचे देखा कि क्या है? आप कहोगे कि हमारे नीचे तो मजबूत टाइल्स हैं।

कटारिया जी[1] ने खूब लाभ उठाया मैसूर चातुर्मास के समय। मिथिला जल रही है। हम देख रहे हैं कि जल रही है। जलती हुई मिथिला को केवल देख-देख कर रह जाओगे? है कुछ क्षमता, जलती हुई मिथिला को बुझाने की? है कोई सामर्थ्य? क्या करोगे? बोलो तो सही? बोलो तो मैं भी समझूं। कोई जवाब नहीं है। कहीं से कोई जवाब आ ही नहीं सकता है क्योंकि हम जान रहे हैं सब चीजों को और जानकर भी अनजान बनकर जी रहे हैं।

कृष्ण वासुदेव के लिए तो लाचारी थी, उनकी विवशता थी, उनके मन में बड़ा दुःख हुआ, बड़ी पीड़ा हुई कि मेरे भीतर वैराग्य नहीं जगता है। ये जाली, मयाली, उवयाली आदि छोटे-छोटे राजकुमार के भीतर वैराग्य आ जाता है। ये दीक्षा ले रहे हैं। मैंने खुद इतनों को दीक्षा दे दी, दिलवा दी, किंतु मेरे भीतर वैराग्य का भाव क्यों नहीं जग रहा है। हमने कभी सोचा? कभी हमारे भीतर यह विकल्प पैदा हुआ? कभी ये विचार हमारे भीतर पैदा हुए क्या कि मैंने इतनी-इतनी दीक्षाएं देख लीं, फिर भी मेरे भीतर वैराग्य नहीं जग रहा है। यहां बैठने वालों में सबसे ज्यादा दीक्षा किसने देखी और कितनी देख ली? सुराणा जी, कितनी दीक्षाएं देख ली आपने? सुभाष जी का हाथ उठ रहा है। वे हाथ खड़ा कर रहे हैं। ज्यादा दीक्षा देख ली इन्होंने। देख ली? लगता नहीं है। लगता है क्या? ऐसा तो नहीं है कि जब बहुत ज्यादा दीक्षाएं देखने लग जाते हैं तो ठीक है। रोज-रोज दीक्षाएं हो रही हैं। क्या हैं?

मंजुला श्री जी म.सा. कह रही थीं कि कार्तिक महीने में एक और दीक्षा हो जाए तो अच्छा है। मैंने कहा कि जो अभी तक हुई है, वो तो सांभ लेवें। वो तो लोग सांभ नहीं पा रहे हैं। कुछ कानों पर खबरें आ जाती हैं। कानों में कुछ झूठ और सच बातें भी आती होंगी। दीक्षा किसलिए है? हमारे लिए है या किसलिए है? दीक्षा क्या हमारे बीच विवाद खड़ा करने के लिए है?

1. प्रवीण जी कटारिया, मैसूर– श्री विदेह मुनि जी म. सा. के सांसारिक पिता श्री

कभी-कभी विचार आता है कि अब शहरों में चातुर्मास करना बंद करना पड़ेगा। जैनों की बस्ती में भी नहीं हो तो और भी ठीक है, और भी बढ़िया है। चातुर्मास करा लेते हैं और बाद में गांठें और बंध जाती हैं। अब उन गांठों को सुलझाओ, लोगों को मनाओ। एक तो चातुर्मास करो फिर लोगों को मनाते रहो। एक चातुर्मास कराने में भीतर, हृदय में सरलता बढ़ जाती है। चातुर्मास से क्रूरता, कपट बढ़ने चाहिए या सरलता बढ़नी चाहिए? राजनीति बढ़नी चाहिए या सरलता आनी चाहिए? घर का पैसा लगाया, अपना समय लगाया फिर उससे लाभ क्या उठाया? सारे लोगों की बात नहीं कर रहा हूं। किसी की भी बात हो सकती है। एक्स, वाई, जेड किसी की भी। कोई भी हो सकता है? उसने लाभ क्या कमाया? उसने क्या फायदा उठाया?

हम विचार करें कि क्या इसलिए चातुर्मास करवाते हैं कि हमारा नाम ऊंचा रहे... मेरा झंडा ऊंचा रहे... मेरे हाथ का झंडा ऊंचा रहे... मेरे हाथ में जो झंडा है उसका डंडा ऊंचा रहना चाहिए... झंडा भले ही छोटा है किंतु झंडे का डंडा ऊंचा होना चाहिए क्योंकि डंडा ऊंचा होगा तो झंडा दिखाई देगा। झंडा ऊंचा हो या नहीं हो, झंडा दिखे या नहीं दिखे किंतु डंडा ऊंचा होना चाहिए। हमारा डंडा सबसे ऊंचा होना चाहिए। क्या मिल जाएगा उससे?

नहीं प्रभु से प्यार, फिर क्या पाएगा,
रोना है बेकार छूट सब जाएगा...नहीं प्रभु...
तेरी श्याम सलोनी काया, जिसको तुमने नहलाया,
मनगमता का भोज करवाया और सुंदर साज सजाया,
साथ क्या जाएगा, रोना है बेकार छूट सब जाएगा...नहीं प्रभु...

सोच लेना, अच्छी तरह से विचार कर लेना कि क्या जाएगा साथ में? क्या ले जाओगे? नाम साथ में जाएगा या काम साथ में जाएगा? क्या चीजें जाएंगी आपके साथ में? किसके लिए क्या कर रहे हैं? बहुत गहराई से विचार कर लेना। हम डॉलर छाप-छापकर, नकली नोट छाप-छापकर अपनी शक्ति को व्यर्थ तो नहीं कर रहे हैं? हमारी शक्ति कहां है? वह हमें कितनी ऊंचाइयों पर ले जाएगी? सही तरीके से हम यदि धर्म की आराधना करते हैं तो देखना कि हमारा मन कितनी ऊंचाइयों पर जाता है, कितनी बुलंदियों पर जाता है? हमारी आत्मा कितनी ऊंचाइयों पर पहुंचती है? उसमें कितनी सरलता आती है? उसमें कितनी क्षमता समाई होती है, उसमें

कितनी मधुरता पैदा होती है? किंतु हमारे भीतर क्या पैदा हुआ? हमने अपने भीतर क्या पैदा किया?

बाजार से गेहूं लाकर ऐसी जगह पर डाला जिसके नीचे कंकड़ थे। वे सारे उसमें मिल गए। गेहूं में क्या मिल गए? (प्रतिध्वनि– कंकड़ मिल गए) अब वापस दुगुना काम करो। गेहूं लाकर ऐसी जगह पर डाला जहां कंकड़ पड़े थे। वहां पर गेहूं डाला तो अब क्या करना पड़ेगा? वापस गेहूं को चुनो। उसमें समय लगाओ। ये काम किसका है बताओ? 'आंधा नेतो, दो जिमाओ' ये काम पहले क्यों किया? गेहूं वहां पर क्यों डाले? सोचें, विचार करें। बातें बहुत-सी हैं। हालांकि कोई सोचकर आया नहीं था कि ऐसा बोलूंगा। ये तो कहीं-कहीं बात होती है तो निकल जाती है, किंतु ऐसी कोई कहने की या निकालने की बात रहती नहीं है।

ये जो पीड़ा होती है, हम सोचेंगे कि ये क्या है? क्या हमने चातुर्मास का लाभ उठाने की कोशिश की? क्या हम लाभ उठाने की कोशिश करते हैं? यदि नाक की रगड़ ही चलती रहेगी तो जिंदगी में कितने ही चातुर्मास करवा लो, कितना ही धर्म-ध्यान कर लो, हाथ में कुछ भी आने वाला नहीं है। हमारे पल्ले कुछ भी पड़ने वाला नहीं है। हम पता नहीं कौनसे खड्डे में गिरेंगे? वो बता रहे हैं कि सन की लकड़ी ढकी हुई है और उसमें बैठे नहीं हैं, उस पर खड़े-खड़े नाच रहे हैं। जब तक लकड़ियां नहीं टूटती हैं तब तक पुण्यवाणी समझ लो। जिस दिन वे लकड़ियां टूट जाएंगी हम कहां चले जाएंगे?

मैंने कुछ दिन पहले बोला था कि आप सोच रहे हो कि हमारी पोशाक प्रमाण है। हमने सामायिक, संवर में पोशाक पहन ली तो हम देवलोक में जाएंगे, यह फाइनल है। जैसा कि अभी महासती जी बोल ही गए ना, कि अरणक श्रावक, कामदेव श्रावक तो जाएंगे ही। उनको कौन रोकने वाला है? 'तन जाए तो जाए किंतु मेरा धर्म नहीं जाए।' वे शांत जीव हैं। तन जाने के लिए भले ही देवता कुछ भी कर ले। सारी नौका को उठाकर पटके, भले ही सारा माल चला जाए, सारा धन चला जाए, मेरा जीवन चला जाए, मेरी जान चली जाए, किंतु मेरा धर्म नहीं जाना चाहिए। उसको मैं नहीं छोड़ सकता हूं। यदि हमारे सामने ऐसी स्थिति आ जाये तो हम क्या सोचेंगे! क्या कर पायेंगे! ऐसा कुछ होगा तो यह कहना कठिन है कि वस्तुतः, हम कुछ कर पाएंगे, हम कुछ कमाल कर पाएंगे। ये छोटे-छोटे बच्चे कमाल करने लगे हैं। जो बच्चे अभी पूरी तरह समझ भी नहीं पा रहे होंगे, वे कमाल करने लगें

और हमने मूछों पर ताव देकर क्या किया? क्या कर लिया? हमने क्या कमाल कर लिया? आप कहोगे कि महाराज हम तो धमाल करने वाले हैं, कमाल करने वाले नहीं हैं। वे यदि कमाल कर सकते हैं तो हम धमाल तो कर ही सकते हैं।

आज हमें बड़ी खुशी हो रही है कि हम कबड्डी खेल रहे हैं। हम तो कबड्डी खेल रहे हैं। कामदेव श्रावक को देवता ने कैसा-कैसा दृश्य दिखाया? अरणक श्रावक की जहाज को दो अंगुलियों पर उठा लिया कि धर्म को छोड़ नहीं तो पटक दूंगा जहाज को। लेकिन उनको विश्वास था कि अधर्म कभी नहीं तिरायेगा। तिरायेगा तो धर्म ही। ऐसा उनका पक्का विश्वास था। ऐसी दृढ़ता रखकर वे धर्म को छोड़ने वाले नहीं बने और न ही देव पर द्वेष किया कि मैं इसको श्राप दे दूं, इनका नुकसान कर दूं। जहां धर्म की भूमिका को, धर्म की भूमि को हल चलाकर जोता जाता है, धर्म से हृदय से भूमिका जुड़ जाती है, वहां ऐसी बातें पैदा नहीं हो सकती हैं। ऐसी बातें यदि पैदा हो रही हैं तो समझ लो कि अभी तक जमीन जोती नहीं गई है। फसल पता नहीं कब उगे? फसल उगाने के लिए क्या करते हैं? फसल उगाने के लिए हल चलाकर जमीन को नरम करना पड़ता है। जब तक जमीन नरम नहीं हो जाये तब तक उसमें से बीज अंकुरित नहीं होंगे। यदि बीज डाल भी दें तो वे सार्थक नहीं होने वाले हैं।

इसलिए विचार करें, चिंतन करें कि ये मनुष्य-जन्म की भूमिका हमें मिली है, मनुष्य-जन्म की भूमि मिली है, इस भूमि को यदि जोत लिया, सही बना लिया तो धन्य बन जाएंगे अन्यथा जैसे उस चित्रकार ने दूसरी चीजें नहीं बनाईं वैसे ही हम जिंदगी में अपने ज्ञान-चेतना को जगाने का प्रयत्न नहीं करेंगे, ज्ञान-चेतना को भीतर से निकालने की कोशिश नहीं करेंगे तो अज्ञान में फंसे रह जायेंगे। वह चित्रकार चाहता तो अच्छी चीजें बनाकर खूब कमाई कर सकता था, पर नीयत खराब हो जाने से वह वैसा नहीं कर विपथगामी बना।

अतः साथियो! उससे निकलने का प्रयत्न करें। कम से कम यह समझो तो सही, देखो तो सही कि मैं कौन हूं? मैं कहां से आया हूं? मेरा क्या स्वरूप है? मल्लिनाथ भगवान के लिए कविता की गई है, स्तुति की गई है–

ज्ञान स्वरूप अनादि तमारो ले लीधूं तमे ताणी।

हे भगवान्! ज्ञान स्वरूप जो तुम्हारा अनादि स्वभाव है, स्वरूप है, वह जब तक तुमने नहीं जाना तब तक वह अज्ञान से मिला हुआ चल रहा था। किंतु जैसे ही उसको जान लिया आपने उसको खींचकर निकाला है। परिणामस्वरूप वह अज्ञान दशा में बेचारी रूसानी हो रही है। वह बिलख रही है। पर, अब उसकी ओर क्यों देखें? वस्तुतः देखने की जरूरत ही क्या है? किस-किस को देखें?

किस-किस को याद कीजिए, किस-किस को रोइए,
आराम बड़ी चीज है, मुंह ढककर सोइए॥

इतना ही कहते हुए विराम लेते कहना चाहता हूँ कि हम इस मुगालते में न रहें कि हम जैन हैं। सामायिक आदि धार्मिक क्रियाएं कर रहे हैं। ये सारी क्रियाएं तब सार्थक हो पायेंगी, जब मन सरल बन जाये, पवित्र बन जाये, उसकी सारी गांठें खुल जायें।

20 अक्टूबर, 2019